

**THE BOOK WAS
DRENCHED**

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_178898

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H83.1/S255 Accession No. G.H. 2360

Author सत्याजी देवेंद्र ।

Title सऊक नहीं बन्दूक , 1950

This book should be returned on or before the date last marked below.

सड़क

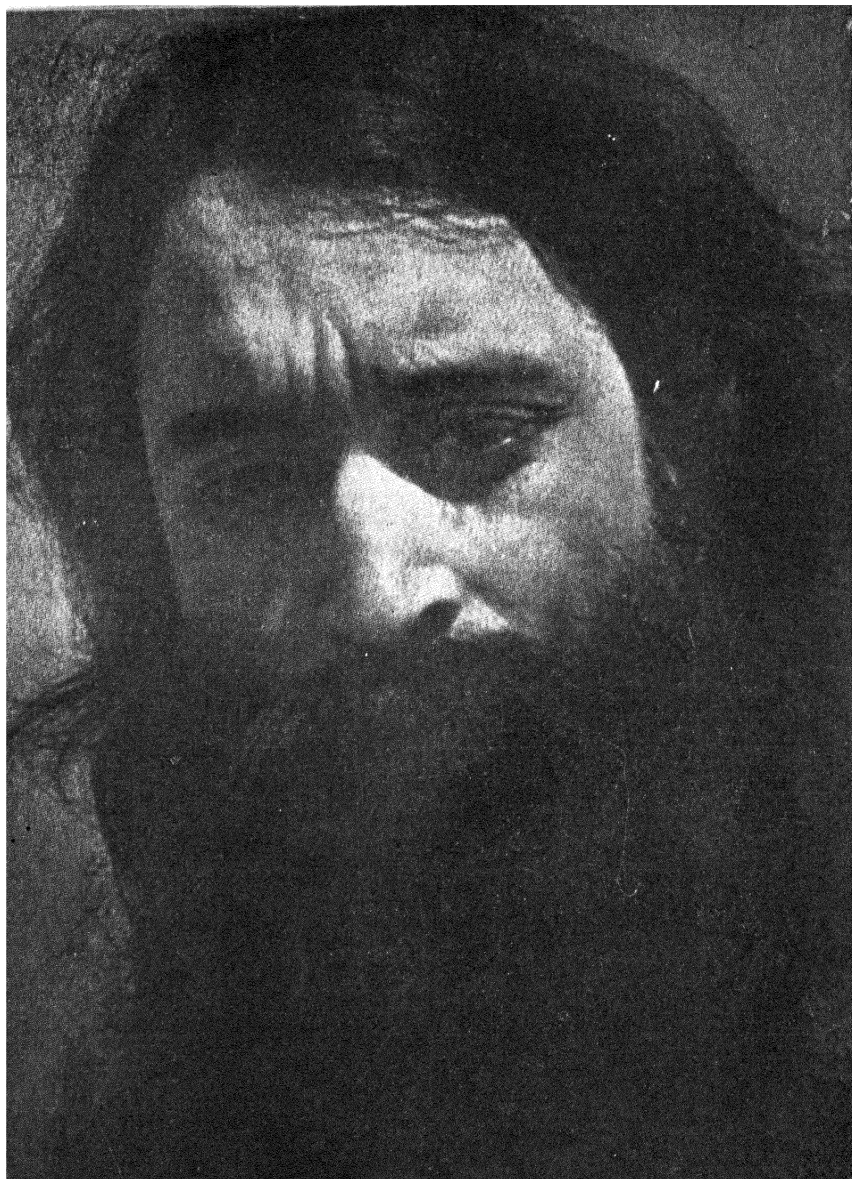
गहों

धक्का

दे वे न्द्र स त्या र्थी

जन्म २८ मई, १९०८ : प्रकाशित रचनाएँ—लोकगीत-सम्बन्धी : पंजाबी में—
'गिद्दा', १९३६, 'दीवा बले सारी रात', १९४१; उर्दू में—'मैं हूँ खानाबदोश',
१९४१, 'गाये जा, हिन्दुस्तान', १९४६; अंग्रेजी में—'मीट माई पीपल', १९४६;
हिन्दी में—'धरती गाती है', १९४८, 'धीरे बहो, गंगा !', १९४८, 'बेला फूले
आधी रात', १९४८, 'जय लोकगीत', १९५०; कविता : पंजाबी में—'धरती दीयां
वाजां', १९४१, 'मुड़का ते कणक', १९५०; हिन्दी में—'बन्दनवार', १९४६;
कहानियां : पंजाबी में—'कुग पोश', १९४१, 'सोना गाची', १९५०; उर्दू में—
'नये देवता', १९४३, 'और बाँसुरी बजती रही', १९४६; हिन्दी में—'चट्टान से
पूछ लो', १९४८, 'चाय का रंग', १९४९, 'नये धान से पहलें', १९५०; निबन्ध :
हिन्दी में—'एक युग : एक प्रतीक', १९४८, 'रेखाएँ बोल उठीं', १९४९, 'क्या
गोरी क्या साँवरी', १९५० ।

संयुक्त रूप से सम्पादित ग्रंथ : अंग्रेजी में—'डिवेल्लिंग विलेज इण्डिया', १९४६;
हिन्दी में—'मुन्शी अभिनन्दन ग्रन्थ', १९५० ।



दे वे न्द्र स त्या र्थी

देवेन्द्र सत्यार्थी

सड़क गह्वर बन्दक

चेतना प्रकाशन हैदराबाद

कापी राइट

१६५०

चार रुपये

प्रकाशक

चेतना प्रकाशन,

८३१, बेगम बाज़ार, हैदराबाद ।

मुद्रक

नवीन प्रेस, फैज़ बाज़ार, दिल्ली ।

काश ! आसाम में मैं भी होता !

फूल केवड़े का कैसा था

जिसे तुम्हारे स्वागत में ले आई
कामरूप की लाजलजी-सी दुहिता !

तुमने सोचा होगा—

ऐसे फूल आसाम में बहुत कीमती तो क्या होंगे !

जब देखो ये जगल में खिलते ही रहते होंगे !

यही सोच कर पत्थर की प्रतिमा से अकड़ गये होंगे तुम, मेरे यार,
कहाँ निभा पाये होंगे तुम

मामूली-सा शिष्टाचार !

तुम बोलो न बोलो हम तो बात करेंगे आज !

तुम चाहो न चाहो हम तो चाय पियेंगे आज !

अजी तुम्हारा जन्मदिवस है आज !

काश ! नज़र आ जाय चाय-प्याली में

बस क़ोटा-सा तूफ़ान !

जी हाँ, कितना खुशकिस्मत हूँ मैं भी !

धन्य तुम्हारी चाय-पाटी !

धन्य तुम्हारी दबी-दबी मुस्कान !

‘सड़क नहीं, बन्कूक’ पढ़ो अब, मेरे यार !

कला पर आई नई बहार !

‘अज्ञेय’ को

सूची

आ मु ख

पृष्ठ ६

स ड क न हीं, ब न्दू क

पृष्ठ १७

पि क नि क

पृष्ठ ४१

कु ल फी

पृष्ठ ६१

औ र बाँ सु री ब ज ती र ही

पृष्ठ ७१

फ त्त् भू खा है

पृष्ठ ८३

मि स बि लि मो रि या

पृष्ठ ८५

सूइयां चलती रहीं

पृष्ठ ११३

जशन

पृष्ठ १३५

एक फोटो की कहा नी

पृष्ठ १४६

देवता गिरता है

पृष्ठ १६३

पुराने हल

पृष्ठ १७५

जोड़ा सांको

पृष्ठ १८६

आमुख

भारतीय भाषाओं में आज कहानी की प्रगति देखते हुए यह बात ज़ोर देकर कही जा सकती है कि भारतीय कहानी बड़ी तेज़ी से आगे बढ़ रही है । भविष्य के लिए हम और भी आशा कर सकते हैं ।

मन् १९४३ में कृष्ण चन्द्र ने 'नये फ़िसाने' के नाम से उर्दू में नई भारतीय कहानियों का संकलन प्रस्तुत करते हुए लिखा था—“ 'नये फ़िसाने' में हिन्दुस्तान के आधुनिक कहानी साहित्य का चित्र है । उर्दू, हिन्दी, गुजराती, मराठी, तामिल, तेलुगु, बंगला और विहारी कहानी-लेखकों की सर्वोत्तम रचनाएँ इसमें सम्मिलित हैं । अभी यह चित्र सम्पूर्ण नहीं, पर इससे इतना पता अवश्य चलता है कि विभिन्नता, शैली, विषय और सौन्दर्यबोध की दृष्टि से हिन्दुस्तानी कहानी किसी दूसरी भाषा के बड़े से बड़े कहानी-साहित्य के मुकाबले पर रखी जा सकती है । जान लेमैन ने अपनी नई पुस्तक में कहा है—'अंग्रेज़ी कहानी पतन के अन्तिम स्तर की ओर जा रही है ।' इसके उलट हम यह कह सकते हैं कि हिन्दुस्तानी कहानी पर अब बहार आ रही है । इस युग में चीनी कहानी और हिन्दुस्तानी कहानी ने विशेष रूप से प्रगति की है और सम्भव है कि

यह प्रगति एशियाई साहित्य के नवोत्थान की प्रतीक सिद्ध हो । चीनी कहानी में सत्तेप बहुत है और कला की यही विशेषता उनकी कविता और चित्रकला से स्पष्ट है । इसके विरुद्ध हिन्दुस्तानी प्रतिभा सत्तेप को इस सीमा तक पसन्द नहीं कर सकती । यहाँ लोग ज्यादा बातें करते हैं, बात को बार-बार दोहराते हैं, रग आमेज़ी और सूक्ष्म अत्युक्ति में रस लेते हैं । इसलिए हिन्दुस्तानी कहानी में चीनी सत्तेपप्रियता को स्थान प्राप्त नहीं हो सका । इसी तरह चीनी कहानी में वर्तमान राजनीति को खासा दखल है, जिससे चीनी कहानी में एक विशेष सामयिक प्रभाव उत्पन्न हो गया है जो आज के युग में बहुत भला प्रतीत होता है..... हिन्दुस्तानी कहानी ने अपने लिए एक नई राह तलाश की है । वह भी गरीबी, गुलामी, वेश्यावृत्ति के विषयों को अपनी कल्पना के दायरे में समेटने का यत्न करती है । पर इसके साथ वह यह प्रयत्न भी करती है कि जहाँ तक हो सके इन समस्याओं के केवल उन्हीं पहलुओं को लिया जाय जिसमें सामयिक और क्षणिक प्रभाव कम हो । सम्भव है इसका कारण यह भी हो कि दोनों जातियों की प्रतिभा अलग-अलग है । लिन यूतांग ने लिखा है—‘जापानी केवल मिपाही है, चीनी क्रियाशील है और हिन्दुस्तानी कल्पनाशील ।’ मुझे इसमें बहुत बड़ी हद तक सत्य नज़र आता है । इसका यह भाव नहीं कि हिन्दुस्तानी कहानी-लेखक अपने देश की राजनीति से अपरिचित हैं । असल बात यह है कि चीनी राजनीति और हिन्दुस्तानी राजनीति में बहुत अन्तर है । चीन में राजनीतिक जीवन का रूप गतिमय है और हिन्दुस्तान में गतिहीन । चीन में मकानों पर बम गिरते हैं । दुश्मन शहरों को आग लगा देता है । मशीन गन की गोलियों की बौछार से हज़ारों बच्चे, स्त्रियाँ और बूढ़े मारे जाते हैं । ये हंगामे राजनीतिक कहानी के निर्माण में बहुत मदद देते हैं । हमारे यहाँ ले दे के एक चर्खा है और मेरा विश्वास है कि चर्खे पर कभी कोई अच्छी कहानी नहीं लिखी जा सकती ।”

कृष्ण चन्द्र के ये विचार सात वर्ष पुराने हैं । इधर इन सात वर्षों में जहाँ देश की राजनीति में महान् परिवर्तन हुए, वहाँ कहानी-साहित्य ने भी

भारतीय भाषाओं में आशातीत प्रगति की है । आज सर्वत्र आधुनिक कहानी-लेखक रोमानी विचारधारा छोड़ कर जनवादी प्रगतिशील दृष्टिकोण को अपना रहे हैं ।

पिछले दिनों जब बम्बई से ख्वाजा अहमद अब्बास ने अपने सम्पादकत्व में 'सरगम' का प्रकाशन आरम्भ किया तो मैंने उन्हें एक पत्र में लिखा था—
“सरगम के लिए मुबारकवाद.....मुझे विश्वास है कि इस से हिन्दी साहित्य की बड़ी सेवा होगी.....उर्दू कहानी बहुत तरकी कर चुकी है । हिन्दी में अच्छी उर्दू कहानियों को छापने से खुद हिन्दी लेखकों को नये रास्ते नज़र आने लगेंगे.....”

'सरगम' सम्पादक ने मेरा पत्र 'सरगम' में प्रकाशित कर दिया । इसे पढ़ कर दिल्ली के एक दो मित्रों ने मुझे खूब आड़े हाथो लिया, क्योंकि वे मेरे इस विचार से एकदम असहमत थे कि उर्दू कहानी हिन्दी से अधिक प्रगति कर चुकी है ।

एक सज्जन बोले—“आपने हिन्दी के घोंड़े को रोक कर ख्वाह-म-ख्वाह उर्दू का घोड़ा आगे निकाल दिया ।”

मैंने ज़ोर देकर कहा—“मुझे भी हिन्दी कुछ कम प्रिय नहीं । पर सच्ची बात कहने की तो मुझे आज़ादी होनी चाहिए ।”

एक साहब बोले—“उर्दू में कृष्ण चन्द्र का नाम ही अधिक लिया जा रहा है । मैं तो कृष्ण चन्द्र को कहानी-लेखक मानने के लिए भी तैयार नहीं हूँ ।”

मैंने कहा—“यों कोई बात सिद्ध नहीं होती । उर्दू में और भी कहानी-लेखक हैं । कृष्ण चन्द्र का अपना स्थान है । पहले वह काश्मीर को ही अपनी पृष्ठभूमि बनाने पर मजबूर था । इधर उसकी कहानियों की पृष्ठभूमि एकदम बदल गई है । हो सकता है कि उसकी कोई कहानी उतनी अच्छी न हो । पर मैं तो समझता हूँ कि कहानी की दुनिया में वह बहुत आगे निकल गया है । अब जरा 'पांच रुपये की आज़ादी', को ही लीजिए ।”

वह बोला—“मैंने भी पढ़ी है 'पांच रुपये की आज़ादी' । आखिर ऐसी क्या

बात है उसमें ?”

उस समय मुझे बात को बढ़ाना स्वीकार न था । मैंने हस कर यही कहा—“एक बार फिर से पढ़िएगा कृष्णचन्द्र की ‘पांच रुपये की आज़ादी’ ।”

वह बोला—“मैं इसे कहानी ही नहीं मानता ।”

कहानी की नपी-तुली सीधी सड़क पर चलते रहना आधुनिक कहानी-लेखक को कहीं भी प्रिय नहीं रहा । कलाकार के रूप में कहानी लेखक को भी अपनी कला में नये प्रयोग प्रस्तुत करने का दायित्व निभाना होता है । इसके बिना वह कहानी-कला की प्रगति के साथ न्याय नहीं कर पाता ।

हो

सकता है कि किसी कहानी में एक भी सुन्दर शब्द न हो और फिर भी इसका सामूहिक प्रभाव इतना ज़बरदस्त हो कि पाठक का मन मोह ले । आधुनिक कहानी-लेखक पाठक को मोहने की वजाय उसे झुझोड़ने की ओर ही अधिक जागरूक रहता है ।

आधुनिक कहानी में आज जो चीज़ सब से अधिक महत्वपूर्ण है वह है कहानी-लेखक का दृष्टिकोण । नया दृष्टिकोण आज कुछ इस तरह अप्रसर हो रहा है कि साहित्यकार जीवन का सफल माध्यम बनने का यत्न करे और वह इसी तरह संभव है जब कि साहित्यकार अपनी रचनाओं द्वारा न केवल पाठक के ज्ञान में वृद्धि करे बल्कि वह उसे शोषण की समस्याओं के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए तैयार करे ।

इसका भाव यह नहीं कि हम कहानी-लेखक को आज किसी एक ही खूंटो से बंधा हुआ देखना चाहते हैं । साहित्यकार के रूप में उसे अपनी व्यक्तिगत स्वतन्त्रता को तो सदैव बचा कर रखना होगा । पर यदि वह रोमान

का पर्दा चाक नहीं कर देता और जीवन को इसके यथार्थ रूप में दिखाने का यत्न नहीं करता तो उसके लिए यह सम्भव नहीं हो सकता कि वह जनहित के मंच पर आधुनिक कहानी के सफल प्रयोग कर सके ।

कुछ कहानी-लेखक आज भी सुन्दर शब्दों और रोमान के रेशमी तारों के बलबूते पर ही कहानी का ताना-बाना प्रस्तुत करते हैं । पर जब रोमान का पर्दा चाक करते हुए कहानी-लेखक जीवन के विस्तृत क्षेत्र में उतरता है तो उसे शब्दों की कमी बुरी तरह अखरती है । शब्दों की ताजगी, शक्ति और पुकार में परिचित होने के लिए उसे हमेशा अपने कान खुले रखने होंगे । शब्दों के भी रंग होते हैं । रंग ही क्यों, शब्दों का संगीत भी होता है । शब्दों की आवाजों के सतुलन द्वारा इनके रंगों से बहुत बड़ा काम लिया जा सकता है—यदि यह बात नहीं तो वातावरण का चित्रण भी अधूरा ही रहता है ।

वातावरण के चित्रण के साथ-साथ आधुनिक कहानी-लेखक अर्थचेतन मन को लेकर चलता है । यहाँ शब्दों की बागडोर ढीली छोड़नी पड़ती है ।

व्यंग्य और हास्य दो बड़े हथियार हैं । यदि कहानी-लेखक में इतनी समझ है कि उपयुक्त स्थान पर इनका प्रयोग कर सके तो न केवल वह कहानी के वातावरण में एक उमर पैदा कर सकता है, बल्कि वह नये चित्तिज्ञ को समीप लाने में भी सहायक होता है ।

अ व इन कहानियों के सम्बन्ध में भी

कुछ कहना अप्रासंगिक न होगा—

‘सड़क नहीं, बन्दूक’ के पात्र पठान हैं । एक सड़क बनाई जा रही है । आज़ाद इलाके के कवाइली इसकी प्रगति में बाधाएँ प्रस्तुत करते हैं । पर

सड़क का काम नहीं रुकता । फिर कुछ कवाइली मजदूरों के वेष में आते हैं और कहानी चरम-सीमा को पहुँचती है जब मजदूरों को लोकनृत्य की मस्ती में किसी तरह यह अनुभव हो जाता है कि इस सड़क द्वारा तो उन्हें गुलाम रखने और अगले प्रदेश को गुलाम बनाने का सामान किया जा रहा है ।

‘पिकनिक’ की पृष्ठभूमि में खडहर हैं, पर इसके पात्र नये जीवन की चर्चा में सलग्न हैं । वस्तुतः ‘पिकनिक’ की धुरी है लवलीन जिसके सौंदर्य के कारण एक अपरिचित व्यक्ति जो पिकनिक पार्टी में सम्मिलित हो जाता है, अपमानित होकर भी अलग नहीं होता । साथ ही धोड़ी की प्रसव-वेदना इस बात की परिचायक है कि नये जीवन काजन्म तो हो कर रहेगा ।

‘कुलफी’ में एक मध्यवर्ग की स्त्री का चरित्र उभरता है जो बीमारी की अवस्था में बचपन की विस्मृत सुधि के ताज़ा होने के कारण बदपरहेजी करने से बाज नहीं आती ।

‘और बाँसुरी बजती रही’ में जीवन की सृजनात्मक और ध्वंसक शक्तियों के बीच में संघर्ष दिखाया गया है । अन्त में सृजनात्मक शक्तियों का पल्ला ही भारी रहता है ।

‘फूटू भूखा है’ का मुख्य पात्र एक मुसलमान है । जिस घर में वह काम करता है उसमें उसने विशेष स्थान बना लिया है । वह इस मशीन का ऐसा पुर्जा है जिसके बिगड़ जाने पर मशीन चल ही नहीं सकती ।

‘मिस बिलिमोरिया’ में जीवन और कला की समस्या प्रस्तुत की गई है । कला में कुरूपता भी कलाकार के हाथों सौन्दर्य के स्तर तक उभरती है— जीवन में ऐसा क्यों नहीं हो सकता ?

‘सुइयाँ चलती रहीं’ का कथानक बम्बई के जीवन का एक पृष्ठ है । क्या कभी विज्ञान की शक्तियाँ मृत्यु पर भी विजय प्राप्त कर सकेंगी ? यह प्रश्न नायक के मस्तिष्क को झुझोड़ता है ।

‘जशन’ के पात्र हैं कुछ भील, जिन्हें नया युग कर्बाले की परम्पराओं से दूर युद्ध के मोरचे पर ले जाता है ।

‘एक फोटो की कहानी’ मेरे जीवन का एक पृष्ठ है । घटना की सत्यता ही इस कहानी की प्राणशक्ति है ।

‘देवता गिरता है’ में कृष्ण चन्द्र की इस चुनौती का उत्तर देने का यत्न किया गया है कि चरखे पर कोई अच्छी कहानी नहीं लिखी जा सकती ।

‘पुगने हल’ का नायक है युद्ध से लौटा हुआ एक सैनिक जो फिर अपनी धरती में हल चलायगा । वह नये स्वप्न लेकर लौटता है, पर परम्पराओं के गुलामों की मौजूदगी में वह भी उन्हीं में सम्मिलित होने के लिए मजबूर है ।

‘जोड़ा सॉको’ का आधार है एक सत्य घटना । रवीन्द्रनाथ ठाकुर के महाप्रयाण का अवसर है । भवन में कवि के निकटवर्ती श्रद्धालु शव के गिर्द बैठे उखड़ी-उखड़ी बातें करते हैं । बाहर अपार जन-समूह पुलिस के काबू से बाहर होता जा रहा है । आखिर अर्थी बाहर आती है और निकटवर्ती श्रद्धालुओं को पता भी नहीं चलता कि कब पुलिस की लाठियां खाने वाले लोगों ने आगे बढ़ कर जनकवि की अर्थी को उठा लिया । वातावरण का चित्रण करते समय यथार्थवादी दृष्टिकोण को प्रधानता दी गई है । समाज के दोनों पक्षों की विषमता दिखाना लक्ष्य रहा है । दोनों पक्ष कवि को अपनी वस्तु समर्पित हैं । अन्त में जनशक्ति का प्रतीक हजूम कवि की अर्थी को उन लोगों के कन्धों से छीनने में सफल हो जाता है जो अभी तक यही फंसला नहीं कर पाये कि कवि के व्यक्तित्व की चरम सीमा कहाँ पर है ।

१००, वेयर्ड रोड, नई दिल्ली

देवेन्द्र सत्यार्थी

१० जुलाई, १९४०

सड़क नहीं, बन्दूक

दूर से बन्दूक की आवाज़ वातावरण में गूँज उठी। सब मजदूरों की आँखें ऊँची-नीची पहाड़ियों की ओर उठ गईं। ठेकेदार घबराया कि कहीं कबाइली लोग फिर इधर न आ निकलें। पर जब किसी ने लोहे की लम्बी जंजीर को अपनी ओर खींचने के अंदाज़ में 'बुई-बुई' का राग छेड़ दिया तो उसे कुछ हौसला हुआ कि ये लोग पहले से कहीं ज्यादा डटकर कबाइलियों का सामना करेंगे।

“दागादा—बुई-बुई-बुई-बुई...” सवाती ने पंचम स्वर में आलाप शुरू कर रखा था।

“यह तुम्हारी 'बुई-बुई' तो एक सूई की तरह है,” ठेकेदार ने धड़कते हुये दिल को संभालते हुए कहा।

“सूई?” रानी ने चौंककर इधर-उधर देखा।

ठेकेदार ने बढ़ावा देते हुए कहा—“हाँ, हाँ, सूई। और वह इस तरह कि हम ज़िन्दगी को भारी-भरकम गुदड़ी समझते हैं जिसके बीचोंबीच यह तुम्हारी 'बुई-बुई' मोटे-मोटे टाँके लगाती हुई गुज़रती चली जाती है।”

सवाती ने उलटकर पूछ लिया—“हमारी ‘बुई-बुई’ हम से कौन छीन सकता है ?”

“कोई भी नहीं,” गनी ने उसकी पीठ ठोक कर कहा, “कोई किसी से गाने का हक कैसे छीन सकता है ? ऐसा तो अंग्रेज़ बहादुर भी नहीं कर सकता ।”

सवाती ने देखा कि गुल बादशाह अब तक खामोश है। बोला—“तुम कुछ क्यों नहीं कहते, गुल बादशाह ?”

गुल बादशाह खामोश खड़ा रहा। वह ठेकेदार से कहना चाहता था कि पठान जैसी पगड़ी बाँधकर तुम पठान नहीं कहला सकते और न थोड़ी-बहुत पशतो सीखकर तुम हमारी ‘बुई-बुई’ का राज समझ सकते हो।

“तुम भी कुछ जरूर कहो, गुल बादशाह ।” ठेकेदार ने उसें रोलर की तरफ बढ़ने से रोकते हुए कहा, “रोलर तो दिन भर चलाते रहना होता है। कंकड़ डालने वाले कंकड़ डालते रहेंगे। बेलचों से सड़क की सतह बराबर करने वाले बेलचे चलाते रहेंगे। पर हमें हर घड़ी यह डर रहता है कि कबाइली न आ निकलें। इस ‘बुई-बुई’ से तो तुम उनका मुकाबला करने से रहे। वैसे अंग्रेज़ बहादुर का कानून तो हमारे पीछे मौजूद है।”

“डर से क्या कायदा ?” गुल बादशाह ने ठेकेदार का हौसला बाँधते हुए कहा, “सच पूछो तो हम किसी से नहीं डरते। हम भी पठान हैं। ‘बुई-बुई’ से तो ज़रा दिल लगा रहता है। ख़ुदा महरबान है। पठानों का तो ख़ुदा को खास ख़याल रहता है।”

ठेकेदार बोला—“अगर तुम्हारा यह ख़याल है गुल बादशाह, तो यह सड़क जरूर मुकम्मल होकर रहेगी और अंग्रेज़ बहादुर भी खुश हो जायगा ।”

बेलचों वाले बेलचे चलाते रहे। कंकड़ डालने वाले कंकड़ डालते चले गये। गुल बादशाह भी अपनी जगह जा बैठा और इंजन चला कर रोलर को सड़क पर घुमाने लगा। वह कहना चाहता था कि पठान के बेटे तो सिवाय खुदा के किसी का रौब नहीं मानते और बिला वजह तो वे खुदा से भी नहीं डरते। अंग्रेज बहादुर में तो वे क्यों डरने लगे।

गनी सड़क पर पानी छिड़क रहा था। बोला—“अरे सवाती के बच्चे, जल्दी-जल्दी गैती चला और देख, चुप क्यों हो गया? तेरी ‘वुई-वुई’ तो मुझे प्यारी लगती है।”

सवाती बोला—“मेरी ‘वुई-वुई’ तो ऐसे ही हैं जैसे कोई सड़क बनाने के लिये जमीन हमवार कर दे। अब सड़क बनाना तुम्हारा काम है।”

“मैं तुम्हारा मतलब समझ गया,” गनी ने चमक कर कहा, “तुम चाहते हो कि मैं ‘तूतान पाखो’ वाला गीत शुरू कर दूँ। क्यों मैं झूठ कहता हूँ? लेकिन यह काम का वक्त है। आखिर ‘वुई-वुई’ से पेट भर जाता तो हम यह मजदूरी क्यों करते?”

सवाती को ‘तूतान पाखो’ वाला गीत बहुत प्यारा लगता था। शहनूत पक गये और समाने पक कर काले पड़ गये। सरकार की गेंटी की मुझे कुछ परवाह नहीं। गीत का यह भावना-चित्र उसे बेहद पसन्द था। उसने सोचा, क्यों न लगे हाथ गाकर मुत्ता दूँ, और वह गा उठा—

तूतान पाखों समाने तोरे,

ज दे सरकार द गेंटी ऐस परवाह न लरस।

रोलर समीप आ चुका था। गुल बादशाह ने सिर बाहर निकाल कर सवाती की ओर देखा। वह कहना चाहता था कि भले ही तुम गीत का भाव पूरी तरह अदा नहीं कर सकते, पर तुम्हारा गीत ग्व्व है।

यहां से रोलर फिर पीछे की तरफ घूम गया। गनीं ने बात का रुख पलटते हुए कहा—“अब कबाइलियों का डर नहीं रहा। आखिर कबाइली अब अँग्रेज बहादुर से डरने लगे हैं।”

सवाती ने शह दी—“तो समझो कि सड़क जल्द तैयार हो जायगी।”

गनीं फिर कह उठा—“कहने को तो यही कहा जाता है कि चार महीनों से सड़क बन रही है। पर सच पूछो तो यह एक महीने का काम है। तीन महीने की मेहनत तो बेकार चली गई।”

ठेकेदार कह रहा था—“आखिर अँग्रेज बहादुर का कानून भी कोई चीज है। अब इस सड़क को कौन रोक सकता है?”

ठेकेदार रोलर की तरफ घूम गया। सवाती बोला—“हम न अँग्रेज बहादुर के मजदूर हैं न सड़क के मजदूर, हम तो रोटी के मजदूर हैं।”

“हाँ, हाँ,” गनीं बोला—“ठीक यही बात तो मेरी बीबी कहा करती है।”

सवाती ने गनीं की बात को कुछ महत्व न देते हुए कहा—“अच्छा अच्छा, बीबी की बात घर के लिये रहने दो।”

इंजन की भप-भप और रोलर की ठक-ठक बराबर गुल बादशाह की कल्पना से टकरा रही थी। वह कहना चाहता था कि उसके कान इस भद्दी-सी आवाज से हिल-मिल गये, भले ही इसके मारे उसके दिमाग के पुर्जे ढीले हो गये हों।

रोलर फिर पीछे की तरफ घूम गया। गनीं बोला—“मालूम होता है गुल बादशाह कोई मनसूबा गांठ रहा है।”

“कभी-कभी तो वह जहर में बुझी हुई निगाहों से हमारी तरफ देखने लगता है। जैसे हमने उसका कर्ज लौटाने से इन्कार कर दिया हो”, सवाती ने शह दी, “वैसे गुल बादशाह की मेरे दिल में बहुत इज्जत है।”

“अभी गुल बादशाह की बात रहने दो”, गनीं कह उठा, “मैं पृच्छना चाहता हूँ कि अगर शहूत और ममाने खाकर ही कोई जिन्दगी गुजारना चाहे तो मेरी बीवी की निगाह में उस आदमी से बड़ा बेवकूफ और कौन होगा।”

सवाती को फिर मौका मिल गया। बोला—“सड़क पर बीवी जान का जिक्र करते तुम्हें शरम भी तो नहीं आती, गनीं के बच्चे।”

सवाती की फटकार का गनीं पर जरा असर न हुआ। वह कहता चला गया—“औरतें न हों तो कोई किसी की गुलामी न करें। औरतें हैं कि जरा-सी बात पर चिल्लाने लगती हैं, जरा-सी बात पर पेचोताख खाने लगती हैं।”

हवा में बहार की बू बसी हुई थी। गुल बादशाह को इंजन के ध्रुण की बू पर गुस्सा आने लगा। जब रोलर ठेकेदार के पास से गुजरा, ठेकेदार ने उसे पुकार कर कहा—“आज शाम तक इस हिस्से के पत्थर नीचे बैठ जाने चाहिएँ, गुल बादशाह।”

रोलर बराबर चलता रहा। तीन-चार बार ‘तूतान पाखो’ वाला गीत गुल बादशाह के ओठों पर थिरक उठा। उसे ख्याल आया कि शहूत पकन में अब कौनसी देर है और ममाने भी शहूतों के साथ पकते हैं। वह ठेकेदार से कहना चाहता था कि हमें तुम्हारी रोटी की भी जरूरत नहीं। हम शहूत और ममाने खा कर मजे से रह सकते हैं। पर चौंक कर उसने बाहर सिर निकाला। जैसे वह ठेकेदार को पुकार कर कहना चाहता हो कि क्षमा करना, घर पर मेरी बीवी मनीआर्डर की बाट जोह रही होगी। आज हीं मेरे हिसाब के रुपये मुँह दे दो। आज शाम तक इस हिस्से के पत्थर बैठ जाने चाहिएँ, ठेकेदार का यह बोल उसके मन की निचली तह तक चला गया। वह जल्द-जल्द रोलर चलाने लगा। जब वह इस बार घर से चलने लगा था तो उसकी बीवी ने कहा

था कि शरीफजादे कभी दिन चढ़े तक नहीं सोते। उस समय अभी पौ फटी थी और बड़ा सवेरा था, पर खुदा का नाम लेकर वह घर से निकल पड़ा था। नहीं तो बीबी जान न जाने क्या-क्या उल्टी-सीधी सुनाने लगती। एक बार बीबी जान ने कहा था कि बेकार पड़ रहने से तो खुदा किसी के घर में सोने की रकावियां फेंकने से रहा, क्योंकि रिजक हीला चाहता है और मौत बहाना मांगती है। वह चाहता था कि आज तो गनी और सवाती और दूसरे बीसियों मजदूरों से पृष्ठ देग्ये कि क्या वे भी किसी के कहूर और जत्र से काम पर चले आये हैं। उस समय वह इंजन की भप-भप पर भुंभलाया। पर जब रोलर घूमकर गनी और सवाती की ओर हो लिया तो उसे ठंकेदार की शराफत और सचाई का ध्यान आ गया। वह जानता था कि ऐसे ठंकेदारों की भी कमी नहीं कि जो अपने मजदूरों पर जुल्म तोड़ते हैं, पर यह आदमी तो वक्त पर हिसाब करता है और वह भी पाई-पाई का। उससे गनी को शिकायत है न सवाती को, न किसी और को।

रोलर समीप आते देखकर गनी बोला —“सवाती के बच्चे, जल्द-जल्द हाथ चलाओ, नहीं तो न प्याज मिलेगा न रोटी।”

“खुदा खुश चाहिये,” सवाती बोला, “फिर गोश्त भी मिल सकता है।”

“वह एक खान का किस्सा तो याद होगा जिसने किसी दूम को प्याज और रोटी के लिये दा का खुशुकराना बजाते देग्य कर उसके घूँसा दे मारा था” गनी ने शह दी और चिल्ला कर कहा, “अगर तुम अब इतनी बात पर खुदा का शुकराना बजा रहे हो तो वह कल को मुझे गोश्त कैसे देगा ?”

सवाती हँसने की बजाय ग्यामोश रहा। फिर वह पलट

कर बोला—“प्याज और गोश्त में तमीज करना जहालत की निशानी है।”

गनी हंस-हंस कर लोट-पोट हो गया, बोला—“तो सड़क और बेसड़क में तमीज करना भी जहालत की निशानी है।”

सवाती बोला—“अभी उस रोज़ ठेकेदार कह रहा था कि ये खुशक पहाड़ियां बहार में भी उदास नज़र आती हैं। सड़क की बढ़ौलत इनकी खूबसूरती बढ़ जायगी।”

“और ठेकेदार यह भी तो कह रहा था” गनी ने फिर शह दी—“कि खुदा की मन्शा के बग़ैर इन्सान का एक भी अमल मुमकिन नहीं है और यह सड़क भी खुदा के मनशा के मुताबिक बनाई जा रही है। पर मैं कहता हूँ हमें तो वही प्याज रोटी मिलेगी, गोश्त तो ठेकेदार ही खा सकता है।”

रोलर समीप आगया था और गुल बादशाह गनी की आवाज़ सुन कर भट उनकी बात-चीत में शामिल हो गया—“तुन्हें गोश्त चाहिये तो ज़रा हिम्मत से काम करो। सड़क ज़रा और आगे बढ़ जाय, फिर हम ठेकेदार से दावत लेंगे।”

कंकड़ डालने वाले कंकड़ डाल रहे थे और उनकी निगाहें कंकड़ फैलाने वालों की ओर थीं। कंकड़ फैलाने वाले आगे बेलचे चलाने वालों की ओर देखने लग जाते। हर कोई यह सोचता कि इसी तरह काम होता रहा तो बहुत जल्द सड़क अगले पड़ाव से जा मिलेगी।

गुल बादशाह ने रोलर रोक लिया था। गनी ने व्यंग कसा—“क्यों अभी से दिल ऊब गया, गुल बादशाह ?”

गनी बराबर पानी छिड़कता रहा। पर सवाती कंकड़ फैलाने की गेंती छोड़ कर गुल बादशाह से बातें करने चला आया। गुल बादशाह ने इञ्जन के सामने बैठे-बैठे कहा—“हमारे गांव

में वह बूढ़ा दड़ियल मलिक अभी तक ज़िन्दा है जो कहा करता है कि पठान के हाथ में हमेशा बन्दूक ज़ेब देती है। बन्दूक का घोड़ा दबाते वक्त वह आगापीछा नहीं देखता बल्कि अपनी कौमी रिवायतों का ध्यान रखता है। आज वह मलिक यहां आ निकले तो हममें से एक-एक से पूछे कि तुम अपने हाथों की बेहुरमती क्यों कर रहे हो। मेरे यार, वह तो अंग्रेज़ बहादुर का जानी दुश्मन है। क्योंकि वह कहता है कि पहले नई-नई सड़कें बनाकर अंग्रेज़ बहादुर ने इधर के पठानों को गुलाम बनाया और अब नई नई सड़कें बनाकर वह क्वाइलियों को गुलाम बनाने पर तुला हुआ है।”

परे से ठेकेदार भी चला आया। वह इन मजदूरों को अपने सिपाही समझता था, क्योंकि जब पिछली बार क्वाइलियों ने हमला किया और उन्होंने ठेकेदार की भी मुश्कें कस लीं तो इसी गुल बादशाह ने उसे रिहाई दिलाई थी, नहीं तो अगर वे उसे उठा कर ले जाते तो आसानी से छुटकारा थोड़े ही मिल जाता। क्वाइलियों के लिये घर से मुंह-माँगी रकम मंगवा कर देनी पड़ती और इस तरह इस सड़क का सारा नफ़ा तो क्वाइली चट कर जाते। ठेकेदार को सुनाने की गरज़ से गनी कह उठा—“जो सड़क हम अपने हाथों से बना रहे हैं उसकी हिफाज़त करना हमारा फर्ज है।”

पर गुल बादशाह, जो ठेकेदार को अपने एहसान तले दबा हुआ महसूस करता था, गनी की बात काट कर बोला—“यह बात ग़लत है, गनी। सड़क की हिफाज़त करना तो अंग्रेज़ बहादुर का फर्ज है।”

ठेकेदार ने गुल बादशाह की बात सुनी-अनसुनी करके कहा—“सड़क का मतलब बहुत बड़ा है।”

“हम भी सुनें,” गुल बादशाह ने भट पृष्ठ लिया।

“अभी उस रोज इंजिनियर साहब कह रहे थे” ठेकेदार ने चचा-चचा कर कहना शुरू किया, “जिस मुल्क में जितनी ज्यादा सड़कें हों वह मुल्क उतना ही महज्जब गिना जायगा।”

“गनी ने शरारत से देखते हुए कहा—“हम तो कहते हैं सड़क का मतलब है मजदूरी यानी रोटी।”

“हमें तो इतनी अकल नहीं है,” सवाती भी अब चुप न रह सका।

गुल बादशाह ने अपनी ही बात छेड़ दी—“जितनी बड़ी सड़क पर कोई मजदूरी करेगा उतनी बड़ी रोटी उसे खाने को मिलेगी।”

ठेकेदार झेंप कर परे हट गया और गुल बादशाह ने रोलर चला दिया। गनी जल्दी-जल्दी पानी फेंकने लगा। और सवाती भी गेंती चलाकर अपनी रोज़ी खरी कर रहा था।

नीचे गहरी खाई चली गई थी। उसका भयानक चित्र ठेकेदार के मन पर बराबर गहरा हो रहा था। उसकी ओर ध्यान जमाते हुए ठेकेदार समीप ही रुक गया। उसे सुनाने की गरज से गनी कह उठा—“अब के कबाइली फिर इधर आ निकले तो समझो कि उनके लिये बनी बनाई कब्र तैयार हैं।”

“लेकिन उन्हें इस कब्र में फेंकने के लिये तो बहुत हिम्मत चाहिये,” सवाती ने शह दी, “हां, ठेकेदार चाहे तो अंग्रेज बहादुर की मदद से बहुत कुछ कर सकता है।”

ठेकेदार तक गनी और सवाती की आवाज़ पहुँच रही थी। समीप आकर वह उन पर फिर से सड़क का रौब गांठने लगा—“तुमने शेरशाह सूरी का नाम तो जरूर सुना होगा। उसने बड़ी-बड़ी सड़कें बनवाई थीं। पेशावर से रासकुमारी तक शेरशाह सूरी का नाम मशहूर है। शेरशाह सूरी की बनवाई हुई सड़कें

तो आज तक कायम हैं, भले ही उनकी मरम्मत कराने की सैकड़ों वार ज़रूरत पड़ी होगी।”

“अच्छा होता कि शेरशाह ने इधर भी एक सड़क बनवा दी होती,” गनी ने अपनी आँखों में सारी शरारत को जमा करते हुए कहा।

“तुम्हारा मतलब है आज हमें रोटी मिलने का वसीला नज़र न आता ?” सवाती ने भट पूछ लिया।

“अगर शेरशाह ने यह सड़क भी बनवा दी होती तो इस पर मरम्मत का काम तो निकलता ही रहता,” ठेकेदार ने उन्हें भरोसा दिलाते हुये कहा, “रोटी के तो सौ वसीले निकल आते हैं।”

बहार की धूप बहुत भली मालूम होती थी। ठेकेदार ने आकाश की ओर देखा और यह सोच कर कि आधे से कहीं ज्यादा दिन तो बीत गया, वह काम का हिसाब लगाने लगा। पहाड़ियां उदास थीं। रोलर ठक-ठक करता हुआ फिर उधर को चला आ रहा था। मालूम होता था कि यह ठक-ठक उदास पहाड़ियों का मुँह चिढ़ा रही है।

गनी बोला—“मैं एक-एक सड़क का नाम गिना सकता हूँ, जहाँ हम काम कर चुके हैं।”

सवाती ने उसे छेड़ा—“उन सड़कों के नाम गिनाने से क्या फायदा ?”

ठेकेदार उनके दिल और दिमाग में बैठ कर यह देख लेना चाहता था कि असल में वे क्या सोच रहे हैं। वह एक तरफ को हट कर खामोश खड़ा रहा। वह उनसे कहना चाहता था कि सड़कें बनाने वालों के प्रति मानवता चिर अछूनी है, क्योंकि उनकी बदौलत आने-जाने की आसानियां हो जाती हैं। और ये कवाइली, जो इस सड़क का काम रोकना चाहते हैं, बड़ा

असभ्य बरताव करते हैं, वे मानवता के शत्रु हैं। कवाइलियों का ध्यान आते ही उसके अन्दर भय और आतंक के भावना पैदा होने लगी। गनी की तरफ बढ़ कर वह फिर कह उठा—“ये कवाइलियों की जबरदस्ती है कि वे सड़क को बरबाद कर देना चाहते हैं। इस पर तो खुदा भी उन्हें माफ नहीं कर सकता।”

गनी ने पानी छिड़कने का काम जारी रखते हुये कहा—“कवाइली सिर्फ मार-धाड़ करना जानते हैं। हमारी तरह मंहनन मजदूरी तो वे कर ही नहीं सकते।”

ठेकेदार ने दाद देते हुये सिर हिलाया और बढ़ावा दिया—“मंहनन मजदूरी की रोटी ही सब से अच्छी रोटी है।”

सवाती बोला—“कवाइलियों का जनून तो मुझे भी पसन्द नहीं।”

ठेकेदार ने शेखी बघारी—“अबके कवाइली आये तो उनके खैर नहीं। उनका सब जनून यहीं खत्म हो जायगा। उनके दिल पत्थर के हैं। वे हमारी जान के दुश्मन बने फिरते हैं। पर हम भी कमजोर नहीं। आखिर हमारे पीछे अंग्रेज बहादुर की पूर्ण ताकत है।”

गनी बोला—“कवाइली हमें ललकारेंगे तो हम पूरा-पूरा जवाब देंगे।”

सवाती ने शह दी—“मेरी तो सारी जिन्दगी मुसीबतों से टक्कर लेते गुजरी है। मैं किसी से नहीं डरता।”

रोलर फिर समीप आ रहा था। ठेकेदार ने चाहा कि गुल बादशाह भी इस बातचीत में शामिल हो जाय। बोला—“इसमे गुल बादशाह की सलाह और भी जरूरी है।”

गनी बोला—हम सब गुल बादशाह के पीछे हैं।”

सवाती चिल्लाया—“गुल बादशाह हुक्म दे तो मैं खाई में कूद पड़ूँ ।”

“या खुदा !” ठेकेदार घबराया, “इस खाई में कूद कर भला कोई कैसे जिन्दा रह सकता है ?”

रोलर रुक गया । गुल बादशाह ने नीचे उतर कर कहा—
“ताकत तो फुर्ती का दूसरा नाम है ।”

ठेकेदार बोला—“मैं तो खुश हूँ । वस इस रफ्तार से सड़क का काम चलता रहे ।”

गनी कह उठा—“यहां तो कोई भी काम से जी नहीं चुगाता ।”

सवाती ने ठेकेदार के समीप झुक कर कहा—“हम सब एक कवीले की तरह मिल कर काम कर रहे हैं ।”

गुल बादशाह ने हामी भरी—“एक कवीले की तरह, बल्कि एक खानदान की तरह !” लेकिन मुझे यह बात बहुत अजीब नज़र आती है कि कबाइली लोग तुम से खार क्यों खाते हैं, हालांकि वे भी पठान हैं और तुम भी पठान हो,” ठेकेदार ने चचा-चचा कर कहा ।

गनी बोला—“वैसे तो एक बाप के बेटे भी एक-जैसे नहीं होते ।”

सवाती कह उठा—“एक टढ़ना के दो फूल भी एक-जैसे नहीं होते ।”

गुल बादशाह ने दोनों हाथों से सवाती और गनी को झंझोड़ कर कहा—“लेकिन तुम दोनों जरूर एक-जैसे हो ।”

“इन पर क्यों नाराज़ होते हो, गुल बादशाह ?” ठेकेदार ने सिफारिश के अंदाज़ में कहा, “मुझे इनकी बातें बहुत पसन्द हैं ।”

गनी और सवाती चुपचाप खाई की तरफ ताकने लगे । जैसे वे कबाइलियों को एक रोज़ इस कब्र में मुला कर ही दम

लेंगे। जैसे गुल बादशाह की ओर उनका ज़रा ध्यान न हो और वे उसकी सहायता के बिना अकेले बीस कबाइलियों का सामना करने का साहस रखते हों। फिर दोनों ने व्यंग्य से एक दूसरे को घूरते हुए यह पूछना चाहा कि आखिर इसका भी हमारे पास क्या जवाब है कि हम खुद तो अंग्रेज़ बहादुर के ग़लाम हुए ही, अब हम अपने कबाइली भाइयों को भी अंग्रेज़ बहादुर का ग़लाम बनाने का गुनाह अपने ऊपर ले रहे हैं।

फिर गुल बादशाह ने उंगली से ग़नी की ठोड़ी को टहोका देते हुये कहा—“खुश रहो, पट्टे। तेरी बातें तो ठंकेदार को भी पसन्द हैं।”

गुल बादशाह की भौंहों पर दाएं हाथ की उंगलियां घुमाते हुये सवाती कह उठा—“इसीलिए तो मैं ‘तूतान पाखो’ वाला गीत गाया करता हूँ।”

ठंकेदार ने बढावा दिया—“इसकी ‘बुई बुई’ की तो मैं कई बार दाद दे चुका हूँ। लेकिन वह ‘तूतान पाखो’ वाला गीत मुझे पसन्द नहीं। वह तो कबाइलियों का गीत मालूम होता है।”

गुल बादशाह ने शरारत से कहा—“सुन लिया, सवाती के बच्चे ! अब कभी वह गीत न गाना।”

ग़नी बोला—“पहले कहा होता। और थोड़े गीत हैं। देख, सवाती के बच्चे, आज से तेरा वह गीत बन्द किया जाता है।”

ठंकेदार की आँखें चमक उठीं। उसने खुश होकर हुक्म दिया—“काम बन्द कर दिया जाय, क्योंकि फुरती से काम करने वालों को एक घंटा पहले छुट्टी मनाने का हक मिलना चाहिये।”

“हां, हां, अब छुट्टी है,” गुल बादशाह ने बाज़ू घुमाते हुये कहा, “सबसे कह दो कि छुट्टी से पहले दो-दो हाथ और दिखा दिये जाँय।”

सवाती ने जोर से कहकहा लगाते हुए कहा—“अब यह शेखी रहने दो। अब तुमने रोलर को यहां से आगे बढ़ाया तो मैं समझूंगा कि तुम मेरे सीने पर रोलर चला रहे हो।”

फिर एक शोर उठा जिसमें किसी शिकायत को मिर उठाने की गुंजाइश नहीं थी। ठेकेदार अपने खेमे की तरफ चल दिया। रोलर उसी जगह पड़ा रहा। गानो, सवाती और गुल बादशाह के कहकहे भी शोर के नीचे दबे जा रहे थे। टोकरियां, गैतियां और बेलचे उठाये बहुत से मजदूर सड़क के किनारे एक खेमे की तरफ बढ़ गये जहां काम करने के बाद सामान रखने की ठेकेदार ने सख्त ताकीद कर रखी थी। मजदूरों की मिली-जुली आवाजें आज किसी नये जीवन की परिचायक मालूम हो रही थीं। यह निरर्थक शोर न था। इस शोर की पृष्ठभूमि में सवाती ने ‘वूई वूई’ का राग छेड़ दिया तो गुल बादशाह ने झुंझला कर कहा—“चुप रह, सवाती के बच्चें, नहीं तो अभी तेरा मिर तोड़ कर रख दूंगा, और फिर ठेकेदार भी तेरी मदद नहीं कर सकेगा।”

सवाती का चेहरा गुस्से से तन गया।

गानी बोला—“जाने दो, गुल बादशाह, हटो छोड़ो। सवानी अभी अनजान है।”

“अनजान नहीं बेशरम”, गुल बादशाह को और भी गुस्मा आ गया, “बेवक्त का राग मुझे कभी अच्छा नहीं लगता।”

गानी ने सवाती का बाजू पकड़ कर उसके कान में कुछ कहा। इस पर गुल बादशाह की भौंहें तन गईं। बोला—“ऐसी कुन्दी करूंगा कि याद रखे।”

सवाती के चेहरे पर उदासी की तह चढ़ गई। गानी उसका साथ देना नज़र आता तो वह अभी गुल बादशाह को मज्जा चखा देता। पर गुल बादशाह यह समझता था कि गानी और

सवाती तो एक तरफ, वह लगे हाथ पांच आदमियों को गिरा सकता है।

सवाती का चेहरा रंग बदलता जाता था। गनी ने उसकी गर्दन फिंभोड़ कर कहा—“जाने भी दे, मेरे यार ! गुल बादशाह तो सचमुच हमारा बादशाह है। अपना गुस्सा थूक दे।”

गुल बादशाह इतने में ही खुश हो गया। बोला—“अगर वह मुझे अपना बादशाह समझे तो मैं उसकी हिकाजत अपने जिम्मे ले लूँ।”

“सवाती भाग कर कहाँ जायगा ?” गनी ने रग रगवाव के अन्दाज में कहा, “सवाती न हो तो यहाँ कब्र की भी खामोशी फैल जाय। सब गैरत तो उसी की बदौलत है। क्यों मैं झूठ कहता हूँ, गुल बादशाह ?”

“मैं वायदा करता हूँ कि आज से सवाती की शान के खिलाफ एक लफ्ज भी मुंह से न निकालूँगा,” गुल बादशाह ने कहा, “लेकिन पहले अपनी जवान से सवाती मुझे अपना बादशाह मान ले।”

“मैंने कब कहा था कि तुम हमारे बादशाह नहीं हो,” सवाती ने जान हड़ाने के अन्दाज में कहा, “लेकिन बादशाह का यह काम तो नहीं कि बिना कसूर हमारी बोटी-बोटी नोचना चाहे।”

गुल बादशाह आगे बढ़ कर सवाती के गले से लिपट गया।

शोर दब चुका था। गनी बोला—“अब कुछ गाने-पकाने की फिक्र की जाय।”

“भूख के सारे पेट में चूहे दौड़ रहे हैं,” गुल बादशाह ने हंस कर कहा, “आज तो मैं सवाती के हाथ की पकी हुई गोटी खाऊँगा।”

गनी कहना चाहता था—गुल बादशाह, तुम भी पूरे रीछ हो रीछ। दाएं हाथ से सवाती की ठोड़ी पर टहोका देकर बोला—“चल आज गुल बादशाह को खुश कर दे। आज तो मैं भी तेरे हाथ की पकी हुई रोटी खाऊंगा, मेरे यार !”

तीनों साथी डेरे की ओर चल दिये। गुल बादशाह बीच में था और गनी और सवाती दाएं बाएं, जो उसके मुकाबले में ठिगने नज़र आते थे, क्योंकि उसका कद छः फीट से दो तीन इंच ऊपर ही होगा। उसकी आँखें साफ़ और रोशन थीं, जो गोल-मटोल चेहरे पर खूब सजती थीं। सड़क के किनारे चुल्हों में आग जल रही थी और हर कोई खाना पकाने में मशगूल था। किसी-किसी चूल्हे में धूँए का बादल उठ रहा था। पश्चिम की ओर सांभ की लाली पर निगाह जमाते हुए गुल बादशाह ने कहा—“कितना खून उबल पड़ा है।”

वे डेरे पर पहुँचे तो गनी ने भट-भट आलू काट डाले और सवाती आग जला कर आटा गूँथने लगा। पर ठेकेदार ने अपने नौकर के हाथ सालन की बड़ी सी रकाबी भेज कर मुश्किल आसान कर दी। आलू ज्यों के त्यों पर रख दिये गये। सवाती ने भट-भट रोटियाँ पका डालीं और सालन की रकाबी बीच में रख कर तीनों साथी रोटियों पर टूट पड़े।

गुल बादशाह कह रहा था—“ठेकेदार ने पहले से सालन पकाने का हुक्म दे रखा होगा। बड़ा भला आदमी है। हमारा कितना खयाल रखता है। यह सालन नहीं, ठेकेदार की बख्शीश है।”

“बख्शीश नहीं रिश्तत”, सवाती ने संजीदा होकर कहा, “आखिर उसे हमारी मदद की जरूरत है।”

खाने से निबटते ही जैसे हर किमी की रूह का झरोखा खुल गया। गनी बोला—“आज तो रंग जमेगा।”

सवाती कह उठा—“गुल बादशाह की मंजूरी जरूरी है।”

“जरूर जरूर”, गुल बादशाह ने हामी भरी।

तारों की छाया में मदमाती हवा एक खुशगवार कैफियत पैदा कर रही थी। मालूम होता था जाड़े का कुछ-कुछ असर अभी बाकी है। गुल बादशाह ने टहोका दिया—“आज तो अलाव जलना चाहिये।”

गानी ने झट सड़क के किनारे लकड़ियों के ढेर पर आग डाल दी।

बहुत जल्द अलाव की आग रोशन हो उठी। सवाती ने पंचम स्वर में ‘वुई वुई’ का अलाप शुरू कर दिया। इसने आम दावत का काम किया। देखते ही देखते बहुत से लोग अलाव के गिर्द जमा होने लगे। आग के गिर्द बहुत-सी जगह खुली छोड़ दी गई थी।

गुल बादशाह बोला—“मैं रबाब बजाऊंगा।”

गानी ने ढोलक सम्भाल ली और बोला—“जल्दी करो, सवाती, बच नगमा के भेस में आज वह नाच नाचो कि सब अश अश कर उठें।”

सवाती की आखें चमक उठीं। उसे वे दिन याद आ गये जब वह बच नगमा नाचने वाले छोकरो के साथ रहता था। गानी और गुल बादशाह खूब जानते थे कि नाच का यह रच-रचाव उसकी रूढ़ का अन्दाज़ बन चुका है। फिर एक झटका देकर उसने एक चिर अभ्यस्त बच नगमा की तरह लम्बे बाल हवा में उछाले, जिसका यह मतलब था कि उसने नाच की फरमाइश मंजूर कर ली।

गानी ढोलक उठा लाया और गुल बादशाह रबाब के साथ सवाती के लिये वह जनाना लिबास निकाल लाया, जिसके बिना बच नगमा का रंग जमना असम्भव था, और जिस पर

ठेकेदार की राय से मजदूरों के सारे गैंग से चन्दा जमा करके अच्छी खासी रकम खर्च की गई थी। आज अपने हाथों से सवाती को यह लिबास पहनाते हुए उसे खास लुत्फ आया। ग़नी ने ढोलक पर थाप दी। सवाती ने 'बुई बुई' का अलाप हमेशा की तरह पंचम स्वर में उठाया।

आग के शोले लपक रहे थे। चिनगारियां चमक रही थीं। सवाती बच नगमा का नाच शुरू करने वाला था। उसका सिर नीले रेशमी रुमाल से ढका हुआ था। लाल और सफेद धारियों वाली फतूही, जिस पर सुनहली गोठ लगी हुई थी, असली ज़री सितारों की गोठ वाला लहंगा, जिसका घेरा खास तौर पर बड़ा रखा गया था। पैरों में घुंघरू थे, जिसकी छन-छन पर अभी से आग के गिर्द बैठे हुए मजदूरों के इस बेपनाह गैंग के दिल उछल रहे थे। गुल बादशाह ने रबाब पर नगमा छेड़ा, जिस पर यकायक छनन-छनन की आवाज़ गूँज उठी। अलाव के गिर्द बैठे हुए लोग खुद खुद पीछे हटते गये, क्योंकि आहिस्ता-आहिस्ता बच नगमा का लहंगा उड़ने के लिये उत्सुक पक्षी के समान पंख फैला रहा था।

ठेकेदार को नाच की इस महफिल में खास तौर पर दावत दी गई थी। पर वह बाक़ी लोगों से बिल्कुल अलग नज़र आ रहा था। जैसे वह इन पठानों का मलिक हो। वही मलिक की सी पगड़ी, वही सुनेहरी कुल्ला जो अलाव के प्रकाश में चमक रहा था। आते ही वह एक तरफ पड़ी कुर्सी पर आ बैठा जो खास तौर पर उसने अपने डेरे से भेजी थी।

दूर से एक बुड्ढा मशाल लिये हुये आया और गुल बादशाह के पीछे जम कर बैठ गया। जब ज़रा वाह वाह का शोर उठता, वह अपनी मशाल को ऊपर उठा कर बच नगमा के चेहरे पर रोशनी डालने लगता। बुड्ढे के चेहरे की झुर्रियाँ कभीले की

बीती हुई शताब्दियों की परिचायक थीं। यह बहार का नाच था, जिसके नशे ने मज्जदूरों के गैंग पर जादू-सा कर दिया था। बच नगमा का लहंगा अपने घेरे में सारी सृष्टि को समेटने का यत्न कर रहा था। रानी ने गुल बादशाह को घुटने से टहोका देकर कहा—“हम बेकार मज्जदूरी करते हैं। क्यों न हम तीनों एक बच नगमा पार्टी बना लें?”

“चुप चुप,” गुल बादशाह ने उसे घूरा। जैसे आज परम्परा की गर्दन कट कर बच नगमा के पैरों तले गिर गई हो और मौलिकता अपने जन्मदिवस पर इतरा रही हो।

पर रानी चुप न रह सका। बोला—“मैं तो कल ही सवाती को लेकर भाग जाऊंगा। तुम बैठे रोलर घुमाया करना। तुम्हें सड़क प्यारी है।”

“चुप चुप,” गुल बादशाह ने फिर टोका। जैसे यह भूत और वर्तमान का, बलिक भूत, वर्तमान और भविष्य का नाच मामूली-सा खलल भी बर्दाश्त न कर सकता हो।

नाच को अपनी ऊंचाई तक पहुँचने में बहुत देर लगी। रानी ने ढोलक की थाप तेज कर दी। गुल बादशाह ने रबाब का जोर दिखाया। बच नगमा के फरमाइशी अन्दाज़ में सवाती उछल-उछल कर नाच रहा था। उछल-उछल कर और फिरकी की तरह घूम-घूमकर। जैसे वह अपने घुंघरूओं की आवाज़ में डूब जाना चाहता हो। घुंघरूओं की छनन-छनन मस्त मलंग कारवान की तरह नगमा की सड़क पर आगे ही आगे बढ़ने लगी। आगे ही आगे और ऊंची से ऊंची।

नाच ने बार-बार रंग बदला। कई ऊंचाइयां, कई उतार आपस में गले मिलते चले गये। गुल बादशाह कई बार उछल-उछल कर भूमने लगता। मशाल वाला भी भूम-भूम कर मशाल ऊंची कर देता। अलाव के गिर्द बैठे हुए लोग मानो एक ऐसे

व्यक्ति का रूप धारण कर चुके थे जिसके सैकड़ों हाथ थे और पचासों चेहरे ।

आकाश पर सितारों की महफिल लगी थी । सितारों की ओर देखते हुए गुल बादशाह रबाब छोड़ कर नाच के घेरे में चला गया । मशाल वाले ने पास बैठे नौजवान के हाथ में मशाल थमा दी और रबाब उठा कर बजाने लगा । गैंग के सब मजदूर कहकहे लगा रहे थे । क्योंकि किसी को भी यह आशा न थी कि छः फुट से भी ऊंचा गुल बादशाह बच नगमा के साथ मिल कर नाचने लगेगा ।

गुल बादशाह का दिमाग चकरा रहा था । नाच के हर घुमाव पर वह सड़क के घुमाव देख रहा था । सड़क का नक्शा उसके मन में सीधी रेखा की बजाय गोल चक्कर में बदलने लगा । यह वहशत का नाच था । बच नगमा ज़रा न घबराया । गैंग के कहकहे बराबर बुलन्द होते रहे ।

ठेकेदार बोला—“अब यह नाच बन्द करो, गुल बादशाह । सोना भी ज़रूरी है, नहीं तो कल को काम कैसे करोगे ?”

ठेकेदार की बात सुनी-अनसुनी कर दी गई । गुल बादशाह की अजब हालत थी । जैसे सड़क उसे कह रही हो—तेरा रोलर ही तो मुझे तैयार कर रहा है । तेरा रोलर न चले तो मैं एक क्रदम आगे न बढ़ूँ । उस समय बीवी की आवाज़ भी उसके मन में गूँज उठी । रोटी.....मुझे तो रोटी चाहिये.....उसने घबरा कर ठेकेदार की ओर देखा । वह उससे कहना चाहता था कि मुझे ऐसी रोटी नहीं चाहिये जो कवाइलियों की आजादी छीन कर हासिल की जाती है । कवाइली भी इन्सान हैं । वे भी ज़िन्दा रहना चाहते हैं । वह रानी और सवाती से कहना चाहता था—हम बच नगमा पार्टी बना कर कवाइलियों के यहां चले जायेंगे । उस समय वे लोग हमारा स्वागत करेंगे । ठेकेदार

बकता है कि क्वाइली इन्सानियत के दुश्मन हैं और तहजीब पर डाका डाल रहे हैं।

नाच जारी था। मालूम होता था कि यह नाच कभी बन्द नहीं होगा। यह नाच एक नये आदम को जन्म दे रहा था। एक युग खत्म हो रहा था, दूसरा शुरू हो रहा था। शहतूत पक गये थे, मनाने भी पक गये थे। अब नये आदम को सरकार की रोटी की कुछ परवाह न थी।

घुंघरूयों की छनन-छनन शायद एक बगावत की परिचायक थी, एक तूफान की परिचायक जो ज़िन्दगी के नये धारे की ओर संकेत कर रहा था। मजदूरों का गैंग बड़े इतमीनान से नाच का रस ले रहा था। जैसे गैंग की सामूहिक शक्ति गुल बादशाह का आखिरी इशारा चाहती हो। ज़िन्दगी का इशारा, मौत का इशारा, सड़क बनाने का इशारा या रात की रात में इसे तबाह या बरबाद कर डालने का इशारा। सचमुच उसके एक इशारे पर वे खाई में छलांग लगा सकते थे।

अलाव में फिर से लकड़ी डाली जा रही थी। किसी ने मशाल में तेल डाल दिया। अलाव के नये शोले हवा से बातें करने लगे और मशाल वाले ने मशाल ऊंची करते हुए सवाती और गुल बादशाह के चेहरों पर रोशनी डाली।

नाच खत्म होता नज़र न आता था। ठेकेदार ने एक-दो बार नाच बन्द करने की फरमाइश की। पर सबने उसे सुना अनसुना कर दिया। ठेकेदार की आंखों में नींद का खुमार छा रहा था। कई बार उमने गुल बादशाह की आंखों में आंखें डाल कर यह कहने की कोशिश की कि भले आदमी अब तो इस नाच को बन्द करो।

मशाल वाले ने मशाल ऊंची करते हुए ठेकेदार की तरफ रघू कर देखा और ढोलक बजाने वाले के कान के समीप मुंह

ले जाकर कहा—“आज मैं तुम्हें बताता हूँ कि मैं एक कबाइली हूँ।”

ढोलक बजाने वाला उसकी बात सुन कर दंग रह गया। बोला—“खामोश। ठेकेदार ने सुन लिया तो ग़ज़ब हो जायगा।”

मशाल वाले ने ऊँची आवाज़ से कहा—“लाख सुन ले अंग्रेज़ बहादुर का ठेकेदार। अकेला मैं ही कबाइली नहीं, रबाब बजाले वाला भी तो कबाइली है।”

ढोलक बजाने वाले ने रबाब बजाने वाले के कान के समीप मुंह ले जाकर कहा—“आखिर हम पठान सब भाई-भाई हैं।”

रबाब बजाने वाले ने मुस्करा कर जवाब दिया—“इसमें तो अंग्रेज़ बहादुर को भी शुबा नहीं। जो खून हमारी रंगों में दौड़ रहा है वही तो इन पठानों की रंगों में भी दौड़ रहा है। सिर्फ़ फर्क़ यही है तुम लोग अंग्रेज़ बहादुर के गुलाम हो और हम आज़ाद इलाक़े के रहने वाले हैं।”

ठेकेदार ने मौक़े की नज़ाकत समझते हुए खामोश रहना मुनासिब न समझा। उसका दिल जोर से धक़-धक़ करने लगा। उसने उठ कर गुल बादशाह का कन्धा थाम लिया और उसे नाच के घेरे से बाहर ले जाकर कहा—“ग़ज़ब हो गया, गुल बादशाह! मुझे मालूम नहीं था कि मजदूरों में कुछ कबाइली भी शामिल हो गये हैं। मुझे कबाइलियों से यह उम्मीद न थी। अब तक तो ये लोग सड़क को तबाह करने पर तुले हुए थे। अब ये लोग मजदूरों के भेस में तुम्हारे साथ मिलकर काम पर आ गये। अब सिर्फ़ तुम ही कोई ऐसी तरकीब निकाल सकते हो जिससे हम भी बच जाँय और सड़क भी बच जाय।”

गुल बादशाह ने ठेकेदार का कन्धा थपथपाते हुए कहा—“मुझे इसका इल्म नहीं था, ठेकेदार साहब! अब भी कुछ नहीं

बिगड़ा। मैं नाच को बन्द नहीं होने दूंगा और कबाइलियों की मजाल नहीं कि वे कोई ऐसी-वैसी हरकत कर सकें।”

एक बार फिर बच नगमा के घुंघरू की भंकार वातावरण में लहराई। गुल बादशाह ने बच नगमा के साथ मिलकर नाच में वह रंग भरा कि देखने वालों को रहती दुनिया तक याद रहे।

मशाल वाले ने रबाब वाले के कान में कुछ कहा। और रबाब वाला उठ कर गुल बादशाह के समीप चला गया। न जाने उसके कान में रबाब वाले ने क्या कहा। गुल बादशाह ने मुस्करा कर उसकी तरफ देखा। बोला—“तुम्हारा काम इस वक्त महज रबाब बजाना है।”

नाच में फिर से इश्क और हुस्न का रच-रचाव पैदा हो गया। मालूम होता था कि अब यह नाच सवेरा होने तक जारी रहेगा। अचानक ‘तूतान पाखो’ वाला गीत वातावरण में गूँज उठा—

तूतान पाखो ममाने तोरे

ज दे सरकार द रोंटेई एस परवाह लरम।

ठेकेदार घबराया। सचमुच इस गीत से उसे चिढ़ थी क्योंकि इसमें उसे पठानों की अंग्रेज-दुश्मनी की बू आती थी।

बच नगमा के भेस में आज सवाती इश्क और हुस्न का पुतला नज़र आ रहा था। पर तूतान पाखो वाले गीत ने उसकी आंखों में एक आग-मी पैदा कर दी। नाच की गत तेज़ हो गई थी और गुल बादशाह के पैर भी मानो आग की लपटों पर थिरक रहे थे।

रबाब बजाने वाले की आंखें भी थिरक उठीं। मशाल वाला नाच के घेरे में ‘तूतान पाखो’ की गत पर गुल बादशाह और सवाती के साथ नाचने लगा.....सहसा ढोलक थम गई।

रबाब रुक गया। बच नगामा के घुंघरूओं की छनन-छनन भी खामोशी की गहराइयों में डूब गई। उस समय गुल बादशाह ने भूखे भेड़िये के समान ठेकेदार पर आखें जमाते हुए कड़क कर कहा—“अब अंग्रेज बहादुर के हुक्म से भी सड़क नहीं बन सकती। यह सड़क नहीं बन्दूक है जिसे अंग्रेज बहादुर पठान के सीने पर तान रहा है।”

पिकनिक

जी हाँ, यह उसी पिकनिक का किस्सा है जिस के विरुद्ध मिसेज कोहली जो भी मुंह में आया कहती रही थी। बस साहब, वह यही दलील पेश करती थी कि घर में जो आराम मिल सकता है वह बाहर नहीं मिल सकता। उसके विरोध की वजह तो यह थी कि वह इधर बहुत मोटी हो गई थी। कुलदीप के घर के सामने वह मटरगश्त के लिए निकलती तो वह यही सोच कर रह जाता कि एक भारी-भरकम मुगदर को पैर लग गये हैं, बल्कि यह कहिये कि सड़क पर एक रोलर चला जा रहा है। अगर उसे अपने मित्र कोहली का लिहाज मनजूर न होता तो वह इस पिकनिक में सम्मिलित होने से साफ इन्कार कर देता। लगे हाथ कोहली ने यह खबर भी सुना दी कि लवलीन भी चल रही है। फिर क्या था, कुलदीप खुशी से उछल पड़ा। कोहली ने उसकी कल्पना को गुदगुदाते हुए यहाँ तक कह दिया कि पहले लवलीन चलने के लिए हाँ नहीं कर रही थी, पर जब उसने सुना कि कुलदीप भी इस पिकनिक में शामिल हो रहा है तो उसने झट हाँ कर दी।

खैर साहब, कोहली ने यह जिम्मेदारी अपने सिर पर ले ली कि वह खाने-पीने का सारा सामान ले चलेगा और मिसेज कोहली ने स्वयं यह स्वीकार कर लिया कि वह खाना पकाने की जिम्मेदारी अपने ऊपर ले रही है। लवलीन ने खुशी से सफाई रखने का काम ले लिया।

चलते समय सरदारीलाल भी शामिल हो गया। मिसेज कोहली इस पर खुश न थी। पर उसने अपने पति का विरोध करना उचित न समझा।

शुरू से कोहली कार चला रहा था। शहर से निकलते ही कुलदीप कह उठा—“अब कार मैं चलाऊंगा।”

लवलीन बोली—“अगर मैं कार चलाऊं तो कैसा रहे?”

सरदारीलाल कह उठा—“साहब, मैं भी कार चला सकता हूँ?”

मिसेज कोहली खामोश रही। सामने की सीट पर बैठे-बैठे उसने अपने पति की तरफ घूम कर देखा। जैसे कह रही हो—इन्हें कहने दीजिए जो इनके मुँह में आता है, पर कार तुम्हें ही चलानी चाहिए। हाँ, तो कोहली कार चलता रहा।

मंजिल पर पहुँचते ही कोहली कह उठा—“ये खंडहर पुराने जमाने के हैं और वह सामने का मण्डप तो उससे भी पुराना होगा।”

बस साहब, कुलदीप और लवलीन कोहली के साथ-साथ चल पड़े। मण्डप में पहुँच कर उन्होंने आंखों ही आंखों में एक दूसरे को बता दिया कि कोहली ख्वाह-म-ख्वाह ज्ञान घोल रहा है, क्योंकि अगर यह मण्डप सचमुच किसी जमाने में एक यज्ञशाला था तो इससे क्या फ़रक पड़ सकता है। आखिर इन खंडहरों में क्या धरा है?

कुलदीप धीरे-धीरे सीढ़ियों की तरफ बढ़ गया। नीचे उतरते

हुए उसे वह परी-कथा याद आ गई जिसमें एक राजकुमारी अपने प्रियतम के पीछे-पीछे सीढ़ियों से होती हुई बावली के भीतर पानी के समीप जा पहुँचती है। पीछे मुड़ कर उसने आवाज़ दी—“चलो लवलीन, खंडहरों का एक चक्कर लगा आयें।”

कुलदीप और लवलीन खंडहरों की तरफ चल दिये। कोहली मण्डप में ही खड़ा रहा। इतने में सरदारीलाल ने बहुत-सा सामान कार से उतरवा दिया था। दरवान की मदद से कोहली सारा सामान मण्डप में भेजता रहा।

फिर सरदारीलाल ने पत्थरों का चूल्हा बनाना शुरू कर दिया। दरवान ने लकड़ी लाकर आग जला दी। मिसेज़ कोहली ने सोचा कि जहाँ चार आदमियों के लिए खाना बनेगा वहाँ पाँचवें आदमी के लिए भी बीच में से ही निकल आयगा।

कोहली को खयाल आया कि वह भी कुलदीप और लवलीन के पीछे-पीछे चल पड़े। पर जब सरदारीलाल भी चूल्हे के सामने से उठ कर मण्डप में चला आया तो उसने सोचा यह ज्यादा अच्छा होगा कि पहले वह चूल्हे के पास जाकर थोड़ी देर अपनी पत्नी की मिज़ाज-पुरसी करे। फिर उसने सरदारीलाल के कन्धे पर हाथ रखते हुए कहा—“चलो भई, ज़रा हम भी खंडहरों का चक्कर लगा आयें।”

सरदारीलाल हंस कर बोला—“मुझे तो खंडहरों से कहीं ज्यादा सोंधी-सोंधी खुशबू में बसे हुए खेत ही अच्छे लगते हैं।”

कोहली ने सम्भल कर कहा—“खेत अपनी जगह हैं, खंडहर अपनी जगह।”

पहले कोहली के पैर उधर को ही उठे जिधर कुलदीप और लवलीन गये थे। पर न जाने क्या सोच कर वह सरदारीलाल का हाथ थामे दूसरी तरफ को घूम गया। बोला—“भई

सरदारीलाल, तुम शायद मेरे विचार से सहमत नहीं होगे। मेरा तो विश्वास है कि अतीत से कट कर हम भविष्य की कल्पना ही नहीं कर सकते।”

सरदारीलाल ने इस पर जोर का क्रहक्रहा लगाया। बोला—“तुम्हें तो किसी अजायब घर का क्यूरेटर होना चाहिये। अरे भई, मुझे तो खंडहरों से दिन के समय भी डर लगता है। सोचता हूँ रात के समय यहां मेरे दिमाग पर न जाने क्या बीते।”

इससे पहले एक बार कुलदीप भी कोहली से कह चुका था कि हम परम्परा के बन्धन से मुक्त होना चाहते हैं। उसे ध्यान आया कि कुलदीप ने यह भी तो कहा था—हमारे देश की सबसे बड़ी लानत यही है कि हमारी हर सड़क अतीत की ओर घूम जाती है। हालांकि जिस युग से हम गुजर रहे हैं उसका सब से बड़ा तकाजा यही है कि हर चीज को नये दृष्टिकोण से देखा जाय। कोहली ने जैसे सरदारीलाल को एक क्षण के लिए कुलदीप समझ लिया हो। बोला—“अतीत के ये खंडहर आज के उभरते हुए जीवन को स्नेह-भरी नज़र से देख रहे हैं और सच तो यह है किसी देश की जन-शक्ति पुराने खंडहरों के ऐतिहासिक महत्त्व को कम नहीं कर सकती।”

खैर माहब, चलते-चलते वे उस जगह जा पहुँचे जहां से वह ढलान वाली धरती नज़र आ रही थी। दूर तक खेत ही खेत चले गये थे। कोहली ने उछल कर कहा—“लीजिए माहब, यही वह स्थान है जहां किमी ज़माने में बहुत बड़ा तालाब था।”

सरदारीलाल ने हंसकर कहा—“अब उस तालाब को याद करना ऐसे ही है जैसे ठंडी राख की ढेरी में फूँकें मार-मार कर आग जलाने का यत्न किया जाय।”

कोहली इसका कुछ उत्तर न दे सका। वह तेज़-तेज़ कदम

उठाने लगा। उधों ही वे खंडहरों की लम्बी पंक्ति में से होते हुए बाहर निकले, दूसरी तरफ से कुलदीप और लवलीन आते दिखाई दिये। सरदारीलाल की आँखें चमक उठीं। बोला—“लवलीन बहुत अच्छी लड़की है। उसकी आवाज़ में जवानी की खनक है।”

कोहली ने मुस्करा कर पूछ लिया—“और कुलदीप क्या अच्छा लड़का नहीं है।”

कुलदीप ने पास आकर छूटते ही कहा—“कोहलीजी, आप तो यही सोच रहे होंगे कि आज मण्डप में हवन-यज्ञ किया जाय ताकि आज इसे फिर से यज्ञशाला का नाम दिया जा सके।”

सबसे पहले लवलीन ने ही क्रहक्रहा लगाया। बोली—“आज इन्सान को तो घी मिलता नहीं और कोहलीजी हैं कि आग की लपटों को घी खिलाने पर तुले हुए हैं।”

सरदारीलाल कह उठा—“शुद्ध घी कहां से लाएँगे, क्योंकि हवन के लिए तो वनस्पति घी बेकार है।”

कुलदीप ने यह तजवीज़ पेश की कि सामने के चबूतरे पर बैठकर गणेश की जाय। अभी तक इस चबूतरे की ईंटें चूने की पकड़ में बंधी हुई थीं। कोहली बोला—“कितना कमाल का चूना तैयार करते थे वे लोग !”

लवलीन ने क्रहक्रहा लगाया। बोली—“आज के लोग सीमेंट तैयार करते हैं।”

कुलदीप ने शह दी—“कोहलीजी कहेंगे कि उन लोगों के चूने के सामने आज का सीमेंट भी हेच है।”

“हाँ हाँ,” कोहली कह उठा, “यह तो मैं जरूर कहूंगा।”

सरदारीलाल और लवलीन हंस-हंस कर लोट-पोट हो रहे थे। कुलदीप और कोहली बहुत देर तक खंडहरों की पृष्ठभूमि में

नये जीवन के तकाजों पर वाद-विवाद करते रहे। आखिर लवलीन कह उठी—“हम यहां मजे से बैठे हैं और वहां मिसेज कोहली हमें कोस रही होंगी कि अच्छे पिकनिक पर आये।”

सरदारीलाल ने शह दी—“हाँ हाँ, सब का बोझ एक पर तो नहीं पड़ना चाहिए।”

खैर साहब, जब वे इस चवतरे से उठ कर मण्डप के पास आये तो उन्हें यह समझते देर न लगी कि मिसेज कोहली सचमुच जली-भुनी बैठी है। कोहली ने आगे बढ़ कर पूछा लिया—“कहिए देवीजी, क्या-क्या बना डाला ? हाँ, फिर आज मजे की पिकनिक रहेगी।”

मण्डप से कुलदीप, लवलीन और सरदारीलाल के कहकहे सुनाई दे रहे थे। मिसेज कोहली ने चिढ़कर कहा—“तुम्हें मेरी बिलकुल परवाह नहीं। फिर पूछते हो क्या-क्या बना डाला ? भाड़ में जाय ऐसी पिकनिक।”

“अरे भई, यों नाराज होने से तो पिकनिक का मजा ही जाता रहेगा,” कोहली ने क्षमा-याचना करते हुए कहा, “अरे तुम ने तो रोटियाँ भी पका डालीं। पर ये तो ठंडी हो गई होंगी। खैर, कोई बात नहीं। भई, क्षमा कर दो न। पिकनिक पर गुस्से को तो बिलकुल थूक देना चाहिए।”

“जाओ तुम लवलीन के साथ गप-शप करो”, मिसेज कोहली ने अपने गालों पर भिंची हुई मुट्टियों की टेक लगाते हुए कहा, “जब तुम्हें भूख लगे तो खाना ले जाना। मैं तुम्हारी पिकनिक में शामिल नहीं हूँगी। हाँ, मैंने खाना बना ही दिया है।”

अपना-सा मुंह लेकर कोहली मण्डप में चला आया। लवलीन सिर हिलाकर बोली—“खाने से पहले चाय कैसी रहेगी ?”

सरदारीलाल कह उठा—“तुम भी गजब कर रही हो, लवलीन । अरे भई, मिसेज कोहली से पूछिए कि खाना कब तक मिल सकता है । हाँ, खाने के बाद शौक से चाय का दौर चलाते रहिए ।”

कुलदीप ने बढ़ावा दिया—“खाने के बाद गप-शप होगी । फिर फलों का दौर चलेगा । एक बार फिर गप-शप । और इसके बाद कहीं चाय की बारी आयगी ।”

कोहली केवल मुसकराता रहा । पर उसकी मुसकान उसके दिल पर छाये हुए गम पर परदा न डाल सकी । सरदारीलाल भट्ट कोहली के मानसिक संघर्ष को भांपते हुए बोला—“अब यह काम लवलीन के जिम्मे लगाना चाहिए कि वह नीचे से खाना लाकर परोसे । मिसेज कोहली को तो अब यह कष्ट देना ठीक नहीं होगा ।”

“हाँ हाँ,” कुलदीप ने शह दी, “लवलीन यह काम कर सकती है ।”

कोहली मूर्ति की तरह खड़ा रहा । जैसे वह इस मामले में अब कोई राय न दे सकता हो ।

तो साहब, जब लवलीन नीचे से खाना लाने के लिए उठी तो उसका काली जाली का दोपट्टा, जिस पर लाल धागे से कशीदे का मोटा काम किया हुआ था, सिर से ढलक कर नीचे को आ रहा था । उसने भट्ट दोपट्टा सम्भाला और कन्धे भटके, जैसे कबूतरी उड़ने से पहले पंख तोलती है । उसे नीचे जाते देख कर कोहली ने सुख का साँस लिया । सरदारीलाल ने पूछ लिया—“चुप क्यों हो गये, कोहलीजी ? ऐसी भी क्या बात है ?”

कुलदीप ने व्यंग्य कस डाला—“देवीजी से डरते भी हैं कोहली जी । अरे भई, यह तो बड़ा अजीब लगता है । अखिर पति को पत्नी से डरने की क्या जरूरत है ? यह और बात है

कि पत्नी के आराम का ध्यान रखना पति का फर्ज होना चाहिए।”

सरदारीलाल बोला—“और बहुत-सी पत्नियां भी तो पतियों से सहमी-सहमी रहती हैं। हाँ, पुराने जोड़ों में ही यह बात ज्यादा देखने को मिलती है।”

कोहली भी अब खामोश न रह सका। बोला—“आप तो पुराने जोड़ों को भी खंडहरों के समान समझते होंगे। पर मेरा तो यही अनुभव है कि पुराने जोड़े नये जोड़ों से पक्के होते हैं।”

सरदारीलाल ने बढ़ावा दिया—“जी हां, जैसे पुराने ज़माने के मकान में अच्छा चूना लगाया जाता था वैसे ही पुराने जोड़ों में स्नेह—”

कुलदीप ने हंस कर कहा—“वाह वाह, नये जोड़ों के स्नेह की उपमा सीमेंट से तो नहीं दी जा सकती।”

लवलीन ने नीचे से आकर बताया कि मिसेज़ कोहली को तो बुरी तरह गुस्सा आ रहा है। सरदारीलाल ने धीरे से पूछ लिया—“किस पर?”

“कोहलीजी पर,” कुलदीप ने उत्तर दिया, “और क्या हम पर? आखिर हम लोगों ने मिसेज़ कोहली का क्या बिगाड़ा है?”

पर लवलीन का यह मत था कि सारा दोष कोहलीजी का ही नहीं है। उसे खुश करने लिये सरदारीलाल कह उठा—“तुम कहो तो सारा दोष मैं अपने ऊपर ले लेता हूँ।”

“तो दौड़ कर नीचे जाओ और मिसेज़ कोहली से कह दो यह सब,” कुलदीप ने उछल कर कहा, “अरे भई यह अच्छी पिकनिक है कि यहां भूख से जान निकल रही है और वहां खाना ठंडा हो रहा है।”

खैर साहब, सरदारीलाल नीचे चला गया और यह उसका जादू समझिए कि वह मिसेज़ कोहली को मनाकर मण्डप में लेता आया। फिर उसने लवलीन से कहा—“अब खाना लाने और परोसने का काम तुम्हारे जिम्मे रहा, लवलीन !”

कोहली यह सब न समझ सका कि सरदारीलाल कैसे इतनी जल्द उसकी पत्नी को मना लाया। सरदारीलाल कहे जा रहा था—“मैं मिसेज़ कोहली की दाद दूँगा कि उन्होंने इतनी जल्द भोजन तैयार कर लिया। रही, यह बात कि खाना ठंडा हो गया होगा, उसका इलाज लवलीन कर लेगी। हमारे पास स्टोव मौजूद है।”

कुलदीप ने उठ कर स्टोव जला दिया। लवलीन ने पहले बड़े इतमीनान से सब्जियाँ गरम कीं और फिर तवे पर घी डाल-डाल कर पहले की पकी हुई रोटियों को तल दिया।

जब खाना परोसा गया तो सब लोग एक स्वर से कह उठे—“जय पिकनिक !”

मिसेज़ कोहली खामोश रही, पर कोहली ने देखा कि उसका हाथ भी जल्दी-जल्दी चल रहा है। वे सचमुच बहुत भूखे थे। पर मिसेज़ कोहली के मुख पर अभी तक क्रोध का रंग कुछ-कुछ कायम था।

लवलीन सोच रही थी कि पिकनिक का मतलब है हँसना, खेलना, मचलना। यदि क्रोध करना था तो मिसेज़ कोहली पिकनिक पर न आई होती। दूसरों का मज़ा तो किरकिरा न करना चाहिये।

कुलदीप कह रहा था—“भई यह गोभी बड़ी मजेदार बनी है।”

सरदारीलाल ने शह दी—“और टमाटो सूप भी तो कुछ कम मजेदार नहीं।”

कोहली ने हमेशा की तरह सिर हिलाते हुए कहा—“गोभी में आलू कहीं-कहीं ज़रा-सा कच्चा रह गया है।”

सरदारीलाल ने धूर-धूरकर कोहली की तरफ देखा, जैसे कह रहा हो—बस यही आदत मिसेज़ कोहली को एकदम नापसन्द है।

कुलदीप ने न जाने क्या सोच कर खंडूह्रों की बात छेड़ दी—“हम यहां पिकनिक करने आये हैं न कि खंडूह्रों से आँखें रगड़ने।

तो साहब ये आँखें रगड़ने का मुहावरा भी खूब रहा। इस पर सबसे पहले लवलीन ने कहकहा लगाया। सच पूछो तो इस पर मिसेज़ कोहली भी संभल गईं। उन्हें यह अनुभव करते देर न लगी कि ऐसे अवसरों पर तो हँसने में बड़े धैर्य से काम लेना चाहिए।

लवलीन थोड़ी-थोड़ी देर बाद फुलभड़ी की तरह कोई न कोई बात छेड़ देती और हँसते-हँसते पिकनिक के साथियों के पेट में बल पड़ जाते।

सरदारीलाल कह उठा—“पिकनिक के लिए यह ज़रूरी नहीं कि अच्छे से अच्छा खाना प्राप्त हो। हां, ये दिलचस्प बातें तो होनी ही चाहिएँ।”

खाने से फ़ारिग होकर महफिल का रंग और भी उभरा। कोहली बोला—“वे खंडूहर पुकार-पुकार कर कह रहे हैं कि वे पुराने ज़माने का इतिहास हैं और मैं सोचता हूँ कि खंडूह्रों का यह दावा ग़लत नहीं।”

कुलदीप कह उठा—“पर किसका इतिहास ? अगर कहो कि जीवन का इतिहास तो मैं भट यह पूछ सकता हूँ कि क्या कभी राजाओं के जीवन तक ही इस धरती का विशाल जीवन सीमित हो सकता है। जीवन तो असीम है, महान् है। ही...ही...ही,

यह खंडहर भला जीवन के प्रवाह को कैसे बाँध कर रख सकते हैं ?”

लवलीन यों ही हँसती रही। कुलदीप का ख्याल था कि उसके समर्थन में वह भी कुछ कहेगी, यह व्यर्थ—भी हँसी ही तो काफ़ी नहीं। पर सरदारीलाल को लवलीन की हँसी ही सबसे ज्यादा पसन्द थी।

मिसेज़ कोहली ने लवलीन की तरफ घूर कर देखा जैसे कहना चाहती हो—अरि चुड़ैल तू कब तक एक घोड़ी की तरह दिनहिनाती चली जायगी ?

कोहली ने मिसेज़ कोहली की तरफ हल्की-सी मुस्कान छोड़ते हुए कहा—“देवीजी, आपने मुझे क्षमा कर दिया होगा। हर इतवार को यहां आया करें तो थोड़ा घूमने से तुम्हारा मोटापा भी कम हो जाय।”

मिसेज़ कोहली चाहती तो फिर से आग बबूला हो सकती थी, पर उसने यही उचित समझा कि धैर्य से काम लिया जाय।

कोहली ने सोचा कि अब मिसेज़ कोहली पिकनिक के रंग में भंग नहीं डालेगी। उसने न जाने क्या सोचकर कहा—“कुछ इन्सान ऐसे होते हैं जैसा गरम पानी और कुछ इन्सान ऐसे जैसे ठंडा पानी।”

सरदारीलाल ने बढ़ावा दिया—“और जब गरम पानी को ठंडे पानी में मिला दिया जाता है—मेरा मतलब है जब पहली किस्म का मर्द दूसरी किस्म की औरत से ब्याहा जाता है तो साहब सज़ा आ जाता है—मेरा मतलब है गर्म पानी और ठंडा पानी मिलकर निवाया हो जाता है।”

कुलदीप कह उठा—“ऐसे निवाये पानी पर हजार लानत।”

कोहली समझ गया कि उसी को निशाना बनाया जा रहा है। एक क्षण के लिये उसे अनुभव हुआ कि ये लोग सच कह

रहे हैं। काश ! गर्म पानी और ठंडा पानी मिलकर निवाया ही हो गया होता। पर यहां तो यह हाल है कि गर्म पानी और ठंडे पानी की विषमता ही खाये जा रही है। फिर यह खयाल उसे बुरी तरह नशतर-सा चुभोने लगा। जैसे अब ये एकदम असंभव हो कि गर्म पानी और ठंडे पानी में समझौता हो सके। वह कहना चाहता था कि मिसेज़ कोहली तो सचमुच बर्फ़ की सिल है, उसकी भावनाओं को तो गरमाया ही नहीं जा सकता। उसके जी में आया कि सब मित्रों से क्षमा मांग ले और कहे कि वह ऐसी पिकनिक से बाज़ आया। उसका बस चलता तो नीचे से एक बड़ा-सा पत्थर उठा लाता और इस बर्फ़ की सिल के ऊपर दे मारता। पर वह इस विचार से खामोश बैठ रहा कि बर्फ़ की सिल टूट सकती है, फैल नहीं सकती। वह कहना चाहता था कि आदर्श नारी कभी बर्फ़ की सिल नहीं हो सकती।

सरदारीलाल ने कुलदीप के कंधे पर हाथ रखकर कहा—
“जानते हो आज इन्सान की सब से बड़ी मुसीबत क्या है ?”

कुलदीप ने हँस कर कहा—“पहले तुम बताओ ना।”

सरदारीलाल एक दार्शनिक की तरह दूर खंडूह्रों की तरफ़ देखने लगा। बोला—“आज तक इन्सान इन्सान को नहीं पहचान सका, यही इन्सान की सबसे बड़ी मुसीबत है।”

कुलदीप ने व्यंग्य कसा—“अजी साहब, इस भूल-भुलैयाँ से बाहर आ जाइये। ये विचारधारा तो ऐसी है जैसे ये खंडूहर। कल को तुम कहोगे कि रहती दुनियाँ तक इन्सान इन्सान को न पहचान सकेगा। पर आज हमें यह यत्न करना होगा कि इन्सान इन्सान को समझे। भूख—भयानक भूख ! बस इस भूख ने चारों तरफ़ मुँह फैला रखा है। यही तो इन्सान की सबसे बड़ी मुसीबत है।”

कोहली ने समीप आकर कहा—“और वह जो किसी ने

कहा है कि इन्सान केवल रोटी पर नहीं जीता।”

लवलीन ने जोर से कहकहा लगाया और कोहली की बात मचमुच हसी के नीचे दब गई।

मिसेज कोहली की भवें तन गईं। जैसे वह इन लोगों से पूछना चाहती हो कि क्या इसी को पिकनिक कहते हैं। व्याख्यान तो किसी भी मंच पर खड़े होकर दिया जा सकता है।

सरदारीलाल कह रहा था—“सुनो कुलदीप, बचपन में मैंने अपनी पड़ोसनेली की गुड़िया जला दी थी। आज मोचता हूँ कि वह मेरी कमीनगी थी।”

लवलीन खिलखिलाकर हंस पड़ी। जैसे कह रही हो कि बचपन की छोटी कमीनगियां ही बड़ी उमर में बड़ी कमीनगियां बन जाती हैं।

कुलदीप कह रहा था—“गुड़िया की बात छोड़ो। कहो तुमने पाल रॉबसन का नाम तो सुना होगा।”

सरदारीलाल पहले थोड़ा घबराया। फिर उसने अपने माथे पर दायें हाथ की उँगलियां जोर-जोर से घुमाते हुए कहा—“हां याद आ गया अमेरिका का नीग्रो गायक पाल रॉबसन। वही न?”

कोहली ने न जाने क्या मोच कर पृष्ठ लिया—“क्यों पाल रॉबसन की तबीयत तो अच्छी है ना आजकल? ही...ही...ही! तुम लोगों को भी दूर के ढोल ही सुहावने लगते हैं।”

कुलदीप ने तुनक कर कहा—“पाल रॉबसन का नाम मजाक नहीं। वह नीग्रो गीत ही नहीं गाता उसे तो अंग्रेजी, स्कॉच, फ्रांसीसी, स्पेनी और जर्मन गीतों की भी पूरी महारत है।”

कुलदीप ने फिर कहा—“ये भी खेरियत हुई कि पाल रॉबसन अभी तक ज़िंदा है। अमेरिका की एक खबर में बताया

गया है—”

“क्या बताया गया है ?” कोहली ने भट पूछ लिया ।

कुलदीप बोला—“हां तो सुनो—न्यूयार्क से ४० मील के फासले पर एक कनसर्ट में भगड़ा हो गया, जहां पाल रॉबसन अपने गीत सुनाने जा रहा था ।”

सरदारीलाल ने कहा—“भगड़ा करनेवाले वही लोग होंगे जो आज भी नीग्रो लोगों को अपने बराबर नहीं समझते ।”

कुलदीप कह रहा था—“फिसादियों ने कनसर्ट में आने वाले लोगों की बसें रोक दीं । बहुत बुरी तरह भगड़ा हुआ । अगर कुछ वीर पुरुष, जिनमें नीग्रो और गोरे रंग के लोग भी शामिल थे, तीन पंक्तियों में खड़े होकर फसादियों से लोहा न लेते तो सचमुच खून की नदी बह गई होती और दुनिया आज एक बहुत बड़े गायक से हाथ धो बैठती ।”

सरदारीलाल कह उठा—“साहब, ये अकेले एक नीग्रो गायक की बात नहीं । आज तो सारी इन्सानियत खतरे में है और यदि पूरी जन-शक्ति से इन्मानियत को न बचाया गया तो एक रोज़ इन्सानियत के भी खंडहर देखे जा सकेंगे ।”

कोहली ने फिर से अपना विचित्र अनुभव बघारते हुए कहा—“तुम लोग खंडहरों के दिल की बात कभी नहीं समझ सकोगे । हर बात में खंडहरों का नाम ले लेना और बात है ।”

मिसेज़ कोहली ने घूर कर अपने पति की तरफ देखा, जैसे कह रही हो—अगर तुम्हें इन लोगों की बातें पसन्द नहीं तो उन्हें पिकनिक पर क्यों लाये ?

सरदारीलाल न जाने क्या सोचकर बोल उठा—“दो आठ-आठ वर्ष की लड़कियां मिलकर यत्न करें तो भी वे सोलह वर्ष की लड़की तो नहीं बन सकती ।”

लवलीन ने कहकहा लगाया । बोली—“क्षमा कीजिये, अब

जग केलों और सन्तरो की खबर पूछी जाय । ही....ही....ही....दो छोटे सन्तरे मिलकर एक बड़े सन्तरे का मुकाबला जरूर कर सकते हैं ।”

पिकनिक के साथी अब केलों और सन्तरो पर पिल पड़े । कोहली कह रहा था—“काश अँगूर भी मिल गये होते ।”

कुलदीप कह उठा—“बेमौसम के अँगूर भी तो अच्छे नहीं लगते ।”

सरदारीलाल बोला—“जो चीज सामने है मैं तो उसी के गुण गाऊँगा । कोहली जी ने कमाल कर दिया जो चित्तीदार केले लाये ।”

लवलीन हँस कर कह उठी—“कभी पाल रॉबसन हमारे देश में आ जाय तो मैं उससे कहूँगी कि वह केलों, सन्तरो और अँगूरों के गीत एक साथ सुनाए ।”

मिसेज कोहली ने धूरकर लवलीन की तरफ देखा । जैसे कह रही हो—और तुम चाहो तो पाल रॉबसन से व्याह भी कर सकती हो ।

कुलदीप कह रहा था—“मैंने कहीं एक फिल्म की प्रशंसा पढ़ी है—”

“किस फिल्म की ।” कोहली ने झट पूछ लिया, “वह देशी फिल्म थी या विदेशी ?”

“ही....ही....ही....”, कुलदीप कह उठा, “यह एक विदेशी फिल्म की बात है । शायद उस फिल्म का नाम है सर्कस । ज़िममें कोई सर्कस दिखाने वाला रोते हुए नीग्रो बच्चे को बुरी तरह घसीटता हुआ लाता है और लोगों से कहता है—इस काली चमड़ी वाले जलीले बच्चे ने एक गोरे रंग की सुन्दरी के गर्भ से जन्म लिया है । एक मल्लाह ने गरम होकर कहा—फिर या हुआ ? और उस मल्लाह ने इस बच्चे को प्यार करना

शुरू कर दिया। दूसरी तरफ से एक और आवाज़ आई फिर क्या हुआ ? वम यह बच्चा एक गोद से दूसरी गोद में पहुँचने लगा। हर कोई उसकी तरफ हाथ फैला रहा था।”

कोहली कह उठा—“और यहां लवलीन संतरो की तरफ हाथ फैला रही है। अरे भई कुलदीप, अच्छा हो कि इस गपशप के बजाय एक सन्तरा छील कर लवलीन की तरफ बढ़ा दो।”

सरदारीलाल बोला—“यह काम मैं करूँगा।”

सरदारीलाल को एक बड़ा-सा सन्तरा छीलते देख कर मिसेज़ कोहली ने उसे घूरा, जैसे कह रही हो—“हां मैं जानती हूँ इस काम में तो तुम कुलदीप से भी ज्यादा होशियार हो।

कोहली ने दात का रुख बदलते हुए कहा—“लीजिये फल तो खत्म हो गये, अब ज़रा चाय का दौर चलना चाहिए। मेरा खयाल है सरदारीलाल चाय बना सकता है।”

सरदारीलाल ने भड़क कर कहा—“यह एक मेहमान की तौहीन है।”

लवलीन कह उठी—“कोहलीजी का यह मतलब बिल्कुल नहीं था।”

“अब पर्दा डालने की ज़रूरत नहीं,” सरदारीलाल ने और भी तेज़ होते हुये कहा, “आप लोगों ने मुझे ख़ामख़वाह अपनी पिकनिक में शामिल होने की दावत दी।”

लवलीन भी गरम हो गई। बोली—“हम नहीं जानते थे कि आप इस सम्मान के पात्र नहीं हैं।”

सरदारीलाल भी आग बबूला हो गया। बोला—“यह मेरी शराफ़त थी कि मैं यहां आ गया। मैं भूट यहां से जा सकता हूँ।”

कुलदीप कह उठा—“तो आप चले क्यों नहीं जाते ?”

मिसेज़ कोहली भी तेज़ हो गई—“आप ज़रूर जा सकते हैं।”

कोहली ने मिसेज कोहली का हाथ थाम लिया। बोला—
“तुम कुछ न कहो।”

खैर साहब, किसी तरह क्रोध की यह लहर दबती नज़र आई। कुलदीप ने कहा—“लवलीन चाय बनायगी।”

“मैं इतनी मूर्ख नहीं हूँ कि आप लोगों की बेगार करती फिस्कूँ,” लवलीन ने तुनक कर कहा।

सरदारीलाल उठ कर जूता पहनने लगा। कम से कम वह तो यह फैसला कर चुका था कि वह अब एक क्षण के लिए भी नहीं रुकेगा।

मिसेज कोहली भी उठकर सामान संभालने लगी। बोली—
“मैं भी जाऊंगी।”

लवलीन कह उठी—“मैं भी यहां से एकदम चल देना चाहती हूँ।”

“पर कैसे?”

“कार पर।”

“पर क्या यह कार तुम्हारी है?”

लवलीन खामोश हो गई।

मिसेज कोहली बोली—“चलो जल्दी चलें।”

कोहली ने पूछ लिया—“तुम्हारा मतलब है कि तुम रानी बन कर बैठो और मैं शोफर बनूँ?”

सरदारीलाल कह उठा—“मैं जा रहा हूँ।”

कोहली बोला—“रास्ता खुला पड़ा है।”

सरदारीलाल ने बूट पहन लिये। कोहली बोला—“मैं जाता हूँ। तुम जानो तुम्हारी पिकनिक।”

और कोहली मंडप से बाहर निकल कर कार में जा बैठा। ग्वंडहरों का दरबान दौड़ता हुआ आया और बोला—“महाराज मेरी घोड़ी तड़प रही है।”

मिसेज कोहली ने मंडप से भाँकते हुये पूछ लिया—“घोड़ी को क्या तकलीफ है ?”

दरवान ने रोनी सूरत बना कर कहा—“घोड़ी मर रही है ।”

लवलीन बोली—“तुम देख आओ, कुलदीप !”

सरदारीलाल कह रहा था—“हम वापस जा रहे हैं, लेकिन पैदल ।”

मिसेज कोहली, कुलदीप और लवलीन ने दरवान के साथ जाकर देखा कि घोड़ी ज़मीन पर बेहोश पड़ी है और थोड़ी-थोड़ी देर के बाद चौंक कर टांगें उछालने लगती है। दूसरी तरफ़ अलाव जल रहा था क्योंकि घरवालों का खयाल था कि गरमी पहुँचने से शायद घोड़ी की तबीयत संभल जाय। पता चला कि पिछले वर्ष तक यह घोड़ी बिल्कुल बांभ थी। अचानक यह गर्भवती हो गई, पर पूरा वर्ष बीतने पर उसने बच्चा न जना। महीने भर तक बच्चे का इन्तज़ार रहा। अब तो तेरहवां महीना भी ख़त्म हो गया था।

मिसेज कोहली ने एक अनुभवी लेडी डाक्टर के अन्दाज़ में कहा—“अभी कौड़तुम्मे में डाली हुई अजवायन मिल जाय तो घोड़ी का सारा कष्ट दूर हो जाय ।”

कुलदीप कहना चाहता था कि अजवायन तो बदहज़मी में दी जाती है और यहां तो दूसरा ही मामला है।

दरवान पास-पड़ोस में घूम आया पर कहीं ऐसी अजवायन न मिली।

फिर मिसेज कोहली ने एक कटोरी में अलसी का तेल गरम किया और दरवान से कहा कि इससे घोड़ी के पेट पर मालिश कर दे।

बस साहब, मिसेज कोहली की आज्ञा पाकर दरवान घोड़ी

के पेट पर मालिश करने लगा। एक-दो बार तो घोड़ी ने बुरी तरह टांगें उछालीं। ग़ैर थोड़ी देर के बाद घोड़ी शान्त हो गई।

कुलदीप बोला—“मेरा खयाल है कि घोड़ी अच्छी हो जायगी और उसके पेट से एक सुन्दर-सा बछेरा जन्म लेगा।”

फिर लवलीन बोली—“अब चलना चाहिये। यह बड़ी खानदानी घोड़ी मालूम होती है। अब समझो बच गई।”

खामोशी से कदम उठाते हुये वे मंडप की तरफ़ चल पड़े। चलते-चलते कुलदीप ने कहा—“अब हम कैसे जायेंगे? कार तो कोहलीजी ले गये।”

मिसेज़ कोहली ने सिर हिलाते हुये कहा—“वे अभी नहीं गये होंगे।”

“कैसे?”

“आग़िर मैं उनकी पत्नी हूँ।”

पिकनिक के साथी रात के सन्नाटे को चीरते हुये मंडप के समीप पहुँचे। उन्होंने देखा कि कार वहीं खड़ी है।

वे खामोशी से कार में जा बैठे। कुलदीप बोला—“सरदारी-लाल जा चुका है।”

मिसेज़ कोहली बोली—“वह नहीं गया होगा।”

“कैसे?”

“आग़िर लवलीन जो हमारे साथ है।”

“अच्छा तो मैं मंडप के अन्दर से सामान तो उठा लाऊँ,” यह कहते हुये कुलदीप कार से निकला और मंडप की तरफ़ लपका। उसने देखा कि सरदारीलाल ने सारा सामान बाँध रखा है।

कुलफी

जाड़ा शुरू होने में अभी काफी दिन रहते थे। पर रात भर आकाश पर मंघ छाये रहे, थोड़ा पानी भी बरस गया और जोर की हवा चलती रही। सूर्य का कहीं पता न था, हालांकि दिन शुरू हो चुका था। देखने में यों लगता था कि कल ही जाड़ा शुरू हो जायगा। पलंग पर पड़े-पड़े घर की स्वामिनी ने खिड़की से बाहर भाँक कर देखा। वह कहना चाहती थी कि जाड़े को यों आँख-मिचौनी खेलने की तो दरकार नहीं, क्योंकि प्रत्येक ऋतु को प्रकृति की ओर से ठीक समय पर ही आने की आज्ञा मिली हुई है,

हवा का जोर पहले ही से बढ़ गया था। जैसे आज ही सब जोर दिखाना आवश्यक हो। घर की स्वामिनी बीमार न होती तो वह ठंडी हवा का जी खोलकर स्वागत करती। पर नखरीली, चंचल हवा थी कि बिना सोचे-विचारे इस छोर से उस छोर तक हर चीज़ को झकझोर कर रख देना चाहती थी।

घर की स्वामिनी अपनी बीमारी पर झुंझला उठी। ज़रा-सा जुकाम ही तो हो गया था। बस यह जुकाम बिगड़ गया। फिर

खाँसी ने घेर लिया। खाँसी भी ऐसी कि फेफड़ों के आर-पार बम इसी का नाम गूँज उठा। अब तो मालूम होता था कि खाँसी ने कुछ दिन और इन्हीं फेफड़ों में टिकने की ठान ली है। यह तो ठीक नहीं, घर की स्वामिनी कहना चाहती थी, यों बिन बुलाये चले आना और आकर जाने का नाम न लेना यह तो वही ढीठ अतिथि वाली बात हुई।

नामने सड़क से बहुत से फौजी ट्रक गुज़र रहे थे। घर की स्वामिनी को सुदूर युद्धभूमि का ध्यान आया। वह कहना चाहती थी कि अब वह समय आ गया है जब चारों ओर शान्ति हो जानी चाहिये। खिड़का से नज़र हटाकर उसने दीवार पर बुद्ध के चित्र की ओर नज़रें गड़ा दीं। जैसे वह उस महापुरुष से कहना चाहती हो कि पहले से कहीं अधिक आज उन्हें उसके पथ-प्रदर्शन की सबसे अधिक ज़रूरत है।

खाँसते-खाँसते उसका दम ही तो अटक गया। उसने मिरहाने से उचक कर बुद्ध के चित्र की ओर देखा। वह कहना चाहती थी कि हे महापुरुष ! शान्ति से पहले तो निरोग होने की ज़रूरत है। सारे कमरे में नज़रें धुमाकर उसने हर चीज़ को बड़े ध्यान से देखना शुरू कर दिया। हवा के झोंके बराबर आ रहे थे। उसके जी में तो आया कि हाथ बढ़ाकर खिड़की बन्द कर दे। पर बाहर का दृश्य भी तो उसे नज़र आते रहना चाहिये। खिड़की खुली रही। हवा बराबर प्रहार करती रही। अब तो हवा ने बुद्ध के चित्र को भी झकझोर कर रख दिया था। जैसे हवा कहना चाहती हो कि वह सबकुछ बलवान है और यह बात आज सभी को स्वीकार कर लेनी होगी।

वह अपना बीमारी पर शुरू से आलोचना करने लगी। अब यह कहना तो कठिन था कि ज़ुकाम कैसे हो गया। जुकाम भी कोई बीमारी में बीमारी है ? यह तो ऐसा ही है जैसे कहीं किसी

देश के छोटे-से प्रान्त में थोड़ी-बहुत गड़बड़ हो जाय। इस पर काबू पालेना कौन कठिन काम है? पर जूकाम ने खाँसी का रूप धारण कर लिया, और अब तो डाक्टर किसी और बीमारी का नाम ले रहा है। भगवान् जाने वह कौन सी बीमारी है? जब डाक्टर भी इसका नाम नहीं जानता तो मैं किससे पूछूं इसका नाम? डाक्टर कहता है कि मैं पलंग से उठूं नहीं, दिन-रात आराम करूं। यह भी तो कठिन है। इस तरह तो पलंग काटने को दौड़ता है। वह उठकर बाहर जाना चाहती थी। फिर यों ही उसने युद्ध के चित्र की ओर देखा, उसे यों लगा कि यह महा-पुरुष भी उसे बाहर जानें से मना कर रहा है—शान्ति से पहले निरोग होना की जरूरत है। वह फिर से लेट गई और पलंग पर पड़े-पड़े सड़क का दृश्य देखने लगी।

सड़क पर हवा की सांय-सांय बगल गूज रही थी। फौजी ट्रक के भारी भरकम पहियों की दनदनाहट की गूँज भी जैसे अर्धा तक बाकी हो। बीमारी, युद्ध और हवा की सांय-सांय। वह कहना चाहती थी कि कोई-न-कोई बीमारी तो इन्सान को सदैव घेरे रहती है, और युद्ध भी तो किसी-न-किसी रूप में चलता ही रहता है। बीमारी और युद्ध के सम्मुख उसे हवा की अठखेलियों पर अधिक क्रोध नहीं आ सकता था।

यह खाओ वह न खाओ—ऐसी ऐसी हिदायतें डाक्टर की निगाह में आवश्यक हैं। पर वह कहना चाहती थी कि बीमार का मन भी तो कोई चीज है। यह तो ऐसे ही है जैसे किसी कवि से कहा जाय—इस पर लिखो, उस पर मत लिखो। इससे तो कवि की अनुभूति का कोई मूल्य ही नहीं रह जाता। यह खाओ, वह न खाओ। शुरू दुनिया से ये हिदायतें चली आती हैं। यह तो ऐसे ही है जैसे टोली के कुछ साथी पीछे रह जायें और पीछे रह जाने के बावजूद वे साथ चले चलते हैं।

जाने क्या सोचकर उसने हाथ बढ़ाया और खिड़की बन्द कर दी, चलो हवा के थपेड़ों से तो मुक्ति मिली। सब दोष तो हवा का है। एकाएक जोर से चल पड़ती हैं और सब उलट-पुलट कर रख देती हैं। फिर जैसे एकाएक वह अपनी बात को स्वयं ही असत्य कहने के लिये उत्सुक हो उठी—हवा को तो चलना ही चाहिए; हवा चलती रहे तार्कि जीवन में जो पुराना है वह नया बनता रहे। वह चाहती थी कि हाथ बढ़ाकर फिर से बाहर का दृश्य अपने सम्मुख प्रस्तुत कर ले, पर खिड़की बन्द रही। क्योंकि उसे भय था कि यदि नौकर ने अन्दर आकर खिड़की खुली देख ली तो वह भट इसे बन्द कर देगा और जाने पहाड़ी भाषा में क्या कुछ नहीं कह जायगा। शायद कह उठेगा कि यह तो बरफानी हवा है, वाबीजी ! इस हवा से तो हम पहाड़ के रहने वाले भी डरते हैं।

चारों ओर घूम-फिर कर उसकी निगाहें बुद्ध के चित्र पर जम जातीं। वह कहना चाहती थी कि हे महापुरुष ! मेरी मजबूरी तो देखो। अपनी खुशी से मैं उठ नहीं सकती, अपनी खुशी से बैठ नहीं सकता, खैर चलना फिरना तो दूर रहा। उस यों लगा जैसे बुद्ध के चेहरे पर एक मुस्कान फैल रही हो। वाह-वाह, यह तो इस महापुरुष का आशीर्वाद है। मैं अब अच्छी हो जाऊँगी। जैसे युगों की पदचाप को पीछे छोड़ते हुए और इतिहास के बोझल पृष्ठों को पलटते हुए जैसे बुद्ध कह रहे हों—एक दिन तो सबको मेरी बात माननी ही होगी।

उसने फिर खिड़की खोल दी। फौजी ट्रकों के पहियों की दनदनाहट ने उसके चिन्तन को भकभोर कर रख दिया। न जाने युद्धभूमि पर आज क्या बीत रही है ! हवा की तेज सांय-सांय भी जैसे यही बात दोहराने लगी—हम बुद्ध की बात क्यों नहीं मान लेते ? बुद्ध की ध्यानमग्न मुद्रा की ओर वह एकटक देखने

लगी। वह कहना चाहती थी कि बुद्ध का स्वप्न आज तक अधूरा ही रहा।

बुद्ध के चित्र की ओर देखते-देखते उसे भिक्षु शीलभद्र का ध्यान आ गया जो कुछ दिनों से उनके यहां ठहरा हुआ था। आज वह बुद्ध के भिक्षु से पूछेगी कि कहो तुम अपने गुरु के अधूरे स्वप्न को पूरा करने के लिये क्या कर रहे हो? हवा का तेज झोंका जैसे उसके गले में जा धंसा। उसने भट खिड़की बन्द करने का निश्चय कर लिया। पर इससे पहले कि वह उठकर खिड़की बन्द कर लेती, उसके पहाड़ी नौकर ने कमरे में आते ही कहा—“वीवीजी, हवा लग जायगी।”

“लगती है तो लग जाय,” घर की स्वामिनी ने खीज कर कहा, “हवा के बिना भी तो अच्छा नहीं लगता।”

नौकर ने भट खिड़की बन्द करते हुए कहा—“बाबूजी देख लेते तो मुझ पर ही नाराज होते।”

“बाबूजी को हमारी क्या फिक्र है?” घर की स्वामिनी ने फिर खीज कर कहा, “उनका दौरा खत्म ही नहीं होता। अब तीन दिन बाद आयेंगे। इन तीन दिनों में कोई मरे चाहे जीये। उन्हें इसकी क्या परवाह।”

नौकर ने सहमी-सहमी निगाहों से घर की स्वामिनी की ओर देखा। वह कहना चाहता था कि बाबूजी तो बहुत अच्छे हैं। उसने पचास घरों में नौकरी की होगी। ले-देकर यही घर उसे पसन्द आया था। इसका एक ही कारण था। बाबूजी का अच्छा स्वभाव। बल्कि वह तो यहाँ तक कह सकता था कि यदि वीवीजी अच्छी हैं तो वह भी इसीलिए कि बाबूजी अच्छे हैं।

“किसी दिन बाबूजी दौरे पर होंगे और मेरा जीवन इसी पलंग पर खत्म हो जायगा,” घर की स्वामिनी ने ठंडी सांस भर

कर कहा।

“यह न कहो, बीबीजी,” नौकर ने जैसे बाबूजी का सारा दोष अपने ऊपर लेते हुए कहा, “मैं जो हूँ, मुझे हुक्म दो। मुझसे सब काम लो, बीबीजी।”

“बाबूजी को गये हुए तीन दिन हो गये,” घर की स्वामिनी कह उठी, “देखना भिन्न को कोई कष्ट न होने पाय।”

“भिन्न को सब आराम है, बीबीजी,” नौकर ने हँसते-हँसते कहा, “मैं तो उनकी कहानियाँ सुनते-सुनते दंग रह जाता हूँ।”

“मैं भी सुनूंगी भिन्न की कहानियाँ,” घर की स्वामिनी कह उठी, “बड़े भाग्य से कोई भिन्न किमी के घर पर ठहरता है। यह कोई मामूली बात नहीं।”

नौकर कह रहा था—“भिन्न की कहानियाँ तो ऐसी हैं, बीबीजी, कि गर्मी में ठंडक और ठंडक में गर्मी का काम देती हैं।”

घर की स्वामिनी ने चौंककर नौकर की ओर देखा। आँखों ही आँखों में वह पूछना चाहती थी कि यह तुम भिन्न की बात कह रहे हो या चाय की। ऊपर से उसने इतना ही कहा—“कहाँ चला गया भिन्न?”

“पास के गाँव में,” नौकर बोला, “भिन्न कहता था कि वह जल्दी ही लौट आयगा।”

“रात को क्या खाया था भिन्न ने?” घर की स्वामिनी ने पूछ लिया।

“मैंने अच्छे से अच्छा भोजन बनाया था, बीबीजी।” नौकर ने हंस कर कहा, “पर भिन्न ने कहा—कुलफी मिल जायगी कहीं से?”

“कुलफी?” घर की स्वामिनी ने चौंक कर कहा, “भिन्न ने कुलफी मांगी थी इतनी ठंड में?”

“हाँ, बीबीजी,” नौकर ने हंसकर कहा, “अब यह तो अपना-

अपना मन है, बीबीजी ।”

“फिर तुमने क्या कहा ?” घर की स्वामिनी ने पूछ लिया ।

“पास की दुकान से मैंने एक कुलफी ला दी थी, बीबीजी !”

घर की स्वामिनी ने बुद्ध के चित्र की ओर देखा । उसे ऐसा लगा जैसे बुद्ध के चेहरे की मुद्रा बदल रही हो । जैसे वे हैरान हो रहे हों कि इतनी ठंड में कौन भिनु कुलफी खाना चाहेगा ।

जैसे हवा बुद्ध को पुकार कर कह रही हो—तुम आये और चले गये, पर बुद्ध का पूरा-पूरा अन्त नहीं हो पाया, क्योंकि कौजी टूक आज बड़ी भारी गिनती में इस सड़क से गुजरे हैं । घर की स्वामिनी सोचने लगी कि बुद्धभूमि पर मरते समय मनुष्य न जाने क्या-क्या इच्छा मन में लिये यहाँ से चल देता है । लाश बनकर भूमि पर गिरने से पहले शायद भुने हुए चने के दो दानों की इच्छा मन में लिये हुए ही योद्धा इस संसार से चल बसता है । बादाम, मूंगफली, काजू, किशमिश—न जाने क्या-क्या वस्तुएँ योद्धा को आँखों में घूम जाती होंगी । फिर वह सोचने लगी कि शायद किसी योद्धा को कुलफी खाने का भी ख्याल आ जाता होगा ।

कमरा साफ़ करके नौकर जाने लगा तो घर की स्वामिनी कह उठी—“भिनु को आज मेरे सामने भोजन कराना । हाँ, तो उसके लिए गाय के दूध की खीर बना लो ।”

नौकर ने कहा—“पर बीबीजी, भिनु तो अपनी मर्जी का मालिक है ।”

घर की स्वामिनी कह उठी—“जब तक भिनु नहीं आ जाता, मैं कुछ नहीं खाऊँगी ।”

नौकर चला गया और घर की स्वामिनी भिनु की प्रतीक्षा करती रही । एक-दो बार दोषी निगाहों से उसने बुद्ध के चित्र की ओर देखा । जैसे वह कहना चाहती हो—हे महापुरुष,

आज तो पहले भिन्न को भोजन कराने के बाद ही मेरी बारी आयगी। आज मैं भिन्न को कुलफी बिलकुल नहीं खाने दूंगी।

भिन्न के आने का समाचार सुनते ही घर की स्वामिनी का मन नाच उठा। नौकर से कह कर उसने भिन्न को उसी कमरे में बुला लिया।

“आओ महाराज !” घर की स्वामिनी खुश होकर कह उठी।

भिन्न के चेहरे पर मुस्कान खिल उठी। उसके मुँह से एक भी शब्द न निकला। जैसे मुस्कान ही उसका आशीर्वाद हो। घर की स्वामिनी ने नौकर से कहा—“दौड़ कर महाराज के लिए खीर लेते आओ।”

“खीर खाओगे, महाराज ?” नौकर ने पूछ लिया।

“खीर नहीं कुलफी,” भिन्न ने हंस कर कहा।

नौकर झट चला गया। घर की स्वामिनी कुछ भी तो न कह सकी। उसने बुद्ध के चित्र की ओर देखा। और मन ही मन में कहा—हे भगवान, जैसे सुजाता ने आपको खीर खिलाई थी, आज मैं भी आपके भिन्न को खीर खिलाना चाहती थी। पर भिन्न तो कुलफी का शौकीन ठहरा। वह खीर कैसे खा सकता है ?

हवा का जोर कुछ कम हो गया था। घर की स्वामिनी ने खिड़की खोल दी और बाहर का दृश्य देखने लगी। उसी समय कुछ और फौजी ट्रक पहियों की दनदनाहट को हवा में उछालते हुए गुजरे। घर की स्वामिनी ने सोचा कि कौन जाने इन सिपाहियों में कोई ऐसा व्यक्ति भी हो जिसे खीर खाने की इच्छा हो। उसने ठंडी सांस ली। कितना बड़ा व्यंग्य है ! एक को खीर दो, वह खाता नहीं। एक खीर खाना चाहता है, उसे खीर मिलती नहीं।

नौकर एक साथ सात कुलफियां लेता आया। घर की

मालकिन खामोश रही। भिन्न ने स्वयं ही कह दिया—“एक कुलफी निकाल कर रख लो।”

घर की स्वामिनी ने घूर कर भिन्न की ओर देखा, फिर बुद्ध के चित्र की ओर। वह कहना चाहती थी कि हे भगवान, अपने भिन्न से कहो कि यह सातवीं कुलफी भी वह जरूर खा ले। उसमें इतना सहस्र तो था नहीं कि भिन्न को मना कर सके। ठंड तो अभी और बढ़ेगी, वह कहना चाहती थी, जुकाम हो गया तो कुलफी का मज्जा आ जायगा।

एक प्लेट में चार कुलफियां खोल कर नौकर ने प्लेट भिन्न के सामने रख दी। घर की स्वामिनी चाहती थी कि हाथ बढ़ा कर कुलफियां उठा ले। सहसा उसे ध्यान आ गया कि एक बार जब वह वचपन में कुलफी खा रही थी तो उसकी कुलफी उसकी बड़ी बहन ने छीन ली थी।

कुलफी खाते हुए भिन्न ने हंस कर कहा—“इस ठंड में और कौन कुलफी खायेगा? पर कुलफी बनाने वाला तो इसीलिए बनाता है न कि कोई ग्राहक जरूर आये! सो, इस ठंड में कुलफी खाना तो एक तरह का परोपकार है।”

घर की स्वामिनी कुछ न बोली। यद्यपि वह कहना चाहती थी कि यह परोपकार नहीं, पागलपन है।

कुलफियां खा कर भिन्न ने जाने की आज्ञा मांगते हुए कहा—“आपकी तबीयत अब अच्छी हो जायगी। मैं अभी एक गोली भिजवाता हूँ। गरम जल के साथ अभी खा लेना।”

घर की स्वामिनी कहना चाहती थी कि इस गोली को अपने लिये ही रख लो। क्योंकि यदि कुलफियों ने मज्जा दिखा दिया, तो उसे इस गोली की आवश्यकता पड़ेगी।

भिन्न चला गया। नौकर भी उसके पीछे-पीछे हो लिया। एक कुलफी अभी तक दूसरी प्लेट में पड़ी थी। घर की स्वामिनी

को यों लगा जैसे यह वही कुलफी हो जो बचपन में उसकी बहन ने उसके हाथ से छीन ली थी। वह देर तक उस कुलफी की ओर देखती रही। उसने खिड़की बन्द कर दी। फिर धीरे-धीरे उठ कर बाहर का द्वार भी अन्दर से बन्द कर लिया। और फिर उसने वह प्लेट उठा ली जिसमें कुलफी पड़ी थी।

और बाँसुरी बजती रही

व ट वृत्त से कितनी ही जटाएं लटक रही थीं—बल खाते भयानक साँपों के समान !

घनी छाया वाले इस वृत्त ने इस निर्जन स्थान को सड़क से छिया रखा था। कहीं-कहीं घास उग रही थी, जैसे यौवन से जा पहले किसी युवक की मसैं भीग रही हों। एक ओर समतल ढलान चली गई थी, और दूसरी ओर एक टीकरा था जो ऐसे मास्म हो रहा था जैसे कुँवारी धरती का उभरा हुआ उरोज हो।

दूर खेतों में धूप थी, हँसी थी, और थीं आनन्द की लहरें। फस के दाने-दाने में धरती का दिल धड़कता था, और खेतों की मेट्टी से अन्न की सोंधी-सोंधी सुगन्धि आती थी। जैसे गाय के श्वास में से दूध की भीनी-भीनी खुशबू आती है। और लाज-लजीब कुलवधू के समान जीवन-सरिता धीरे-धीरे अग्रसर हो रही थी।

दूर जहाँ तक दृष्टि की पहुँच थी, हरियाली बिछी हुई थी और आकाश पर सैलानी पक्षियों की पंक्तियाँ दिखाई दे रही थीं। उनकी खानाबदोश प्रकृति उनके पंखों में एक कभी न

समाप्त होनेवाली गति उत्पन्न करती रहती। मानव उन्हें देखता और अपने जीवन के लिये नई भावनाएं प्राप्त करता। किसने सिखाई यह उड़ान इन स्वतन्त्र, चिन्ताहीन पक्षियों को ? सैंकड़ों नहीं, हजारों मीलों से गगनचुम्बी बर्फानी पहाड़ों के शिखरों को पार करते हुए वे मैदानों की ओर निकल आते हैं—प्रति वर्ष निश्चित ऋतु में ! किसने सिखाया मानव को हल चलाना और धरती की कोख में से अन्न के जवाहर पैदा करना ? प्रति वर्ष हर फसल पर खेतों की कोख से मानव के भोजन का जन्म होता है। संसार की विशाल गोद में जीवन-सरिता खेलती रहती है—निरन्तर अटूट गति से ! कौन जाने इसका आरम्भ कैसे हुआ और कब ? और क्या कभी इसका अन्त होगा भी ?

उस निर्जन टीकरे पर एक अहीर बाँसुरी बजा रहा था। गायों ने चरना छोड़ दिया। बाँसुरी के जादू भरे गाने ने उन में एक आह्लादमयी मानसिक स्थिति उत्पन्न कर दी। ढलान पर से वे ऊपर चढ़ आईं। जंगल के मृग और मोर भी दौड़े आए, और मस्त होकर बाँसुरी का गान सुनने लगे।

संसार और उसकी मनोरंजक गतिविधि से बेखबर होकर अहीर निरन्तर अपने गान का आलाप कर रहा था। बाँसुरी में उसने अपना हृदय उँडेल दिया था, जैसे वह बाँसकी पोरी न हो बल्कि एक युवती हो जो अपने प्रियतम की गहन अनुभूति की अभिव्यक्ति कर रही हो। जब से उसे गाँव के वातावरण में शान्ति प्राप्त हो गई थी, उसे अपनी बाँसुरी से एक कभी न टूटने वाला लगाव हो गया था। बार-बार वह सोचता कि बाँसुरी उसकी दुलहन है जो उसके ओठों के स्पर्श के लिए तरसती रहती है।

गायें मस्त हो रही थीं, मोर भी और मृग भी। जैसे उनकी कोई युग-युग की प्यास बुझ रही हो, कोई युग-युग में भूख

मिट रही हो। यह किसी नये जीवन का गान था। इसकी एक-एक तान पर वे भूम रहे थे। यह गान शायद स्वयं मुक्तकंठ से कह रहा था—जीवन एक है, इसका प्रवाह सदैव चलता रहता है।

फिर आकाश के पक्षी भी इस टीकरे पर उतर आये। यह मित्रता का गान था। इसकी हर लय प्रेम, सौंदर्य और यौवन से मिल कर बनी थी। बड़ा मीठा-मीठा रस था, बीच-बीच में एक दर्द-सा भी—एक चिर-पुरातन दर्द। खेतों का सारा संगीत वृक्षों की सब कानाफूसी, झरनों और नदियों के बहते पानी के सारे बोल, तेज हवा की सनसनाहट, गायों के दिलों की धड़कन, तेज सांम और सरर-सरर की आवाज़, जो इनका दूध दुहे जाने से पैदा होती है—यह सब कुछ कदाचित इस गान में समा गया था। और फिर एक विषेला साँप भी इस टीकरे पर चढ़ आया था।

साँप का स्वभाव है काटना। पर यह तो प्यार का गान था। सुनते-सुनते वह कई बार चौंक उठा। उसके कठोर सिर में ज़हर हरकत करने लगा। पर उसे अपने शरीर में एक झुरझुरी-सी अनुभव होने लगी। उसकी आँखों में आँसू उमड़ आये—गान ने उसके विष पर विजय पा ली थी।

गान की तान वातावरण में बिखर रही थी। चारों ओर एक शांत नीरवता छाई हुई थी। जीवन की सारी घृणा कौन जाने किन गहराइयों में गुम हो चुकी थी। पूर्वी वायु भी थम गई—यह कदाचित् उसके आत्म-समर्पण का प्रमाण था।

साँप का नंगा शरीर चमक रहा था। फन फैलाकर वह नाच रहा था—वही अनादि नृत्य! उस समय वह अपने ज़हर से बेखबर था। साँप का यह नृत्य कोई कृत्रिम नृत्य न था। यह प्यार के गान से पैदा हुआ था। साँप की आँखों से निरन्तर आँसू गिर रहे थे। वह भी दिल रखता था, केवल ज़हर ही

नहीं। और वह दिल का दर्द समझता था—जीवन की रग-रग में
अग्रसर होने वाला सूक्ष्म दर्द !

दूर पूर्वी क्षितिज पर एक काली बदली छा रही थी। परे खेत
से एक किसान की दुलहिन गा उठी—

अरी ओ काली बदली,
तुम मेरी धर्म की बहन हो,
देखो प्यारी बदली,
पहले मेरे पिता के खेतों पर बरसियो,
और फिर ससुराल के खेतों पर,
चूकना मत, बहन बदली,
जैसे मैं कहती हूँ,
वैसे ही करना, प्यारी !

और अहीर ने अपने ओठों से बाँसुरी हटा ली। उसके कान
खेतों से आते हुये गान की ओर आकर्षित हो गये। गायें टीकरे
से नीचे उतर रही थीं। मृग भी जा रहे थे और मोर भी।
पक्षियों को भी ऊँचा आकाश याद आ गया था।

जहरी साँप बराबर फन फैलाये नाच रहा था। अहीर डरा
नहीं। वह मुस्कराया। यह उसके गान के आकर्षण का प्रमाण
था। वह प्रसन्न था।

और किसान दुलहिन ने फिर गाया—

नीम पर, हरी-हरी नीम पर,
मेरी बहन भूला भूल रही थी।
हाय, मेरी माँ रो पड़ी,
मैं भी रो पड़ी,
बहन को काले नाग ने डस लिया था !

किस नाग ने डस लिया था भूला भूलती युवती को ? क्या
यही साँप था वह नाग, जो अहीर के पास फन फैलाये भूम रहा

था ? इसे तो रोना आता था । अब तक उसकी आंखें भीगी हुई थीं । और जब कोई रोता है तो उसका विष मर जाता है ।

: २ :

विषधर साँप टीकरे से नीचे उतर रहा था । उसके बन्द-बन्द में एक असाधारण थकान अनुभव हो रही थी । भावना के प्रवाह में वह बहुत देर तक नाचता रहा था, आवश्यकता से अधिक ।

यह गान न था, मन्त्र था । नहीं तो वह वहां क्यों जाता ?

उसका शरीर गर्म होने लगा । लहू पहली चाल से चलने लगा । वह फिर वही पहला साँप था, जिसका स्वभाव है काटना । और उसकी भावनाओं का परिचय केवल उसी को था ।

जब वह खेत की मेंड़ के पाम पहुँचा तो उसने साँपिन की लाश बराबर पड़ी देखी । अब उससे दुर्गन्ध उठ रही थी । साँप एकदम अधीर हो उठा । लाश के गिर्द उसने पाँच चक्कर काटे और फिर टकटकी लगाकर मुर्दा साँपिन की आँखों की ओर देखने लगा । उसके सिर में विष फिर जाग उठा ।

यह साँपिन उसकी प्रेयसी थी और वह उसके पीछे-पीछे चला करती थी । चांदनी रातों के कितने ही आह्लादमय क्षण दोनों ने अनेक बार एक-साथ बिताये थे ! उसकी उपस्थिति में जीवन कितना सुन्दर प्रतीत होता था—कितना मुलायम और चमकदार—साँपिन के शरीर के समान, और स्वयं उसके अपने शरीर के समान, जबकि केंचुली अभी-अभी उतारकर फेंकी गई हो ! कितनी ही बार उसने अपनी जिह्वा साँपिन की जिह्वा पर रखकर उसे अपने स्नेह का विश्वास दिलाया था । तब वह क्या जानता था कि उसे प्रेयसी की लाश पर आँसू गिराने होंगे ।

उसका ज़हर और भी भड़क उठा । अपना फन लाश के समीप लाकर उसने उसे फिर सूँघा और उसकी आँखों में

प्रतिशोध की आग जलने लगी ।

वातावरण में नीरवता छाई हुई थी । पुरवैया के स्पर्श से क्रोध में आये हुए साँप का बन्द-बन्द एक नई शक्ति का अनुभव करने लगा ।

किसी राजकुमार की चाँदरानी से साँप की प्रेयसी क्या कुछ कम थी ? उस चाँदरानी को कोई मार डालता तो हत्यारे को पकड़ने के लिये सरकार पड़ी चोटी का जोर लगा देती । यदि साँप भी अपनी प्रेयसी के हत्यारे का शत्रु बन गया तो कौन सी बड़ी बात हो गयी ?

पहले भी एक दिन अहीर ने बाँसुरी पर अपना गान छेड़ा था, और साँप और साँपिन गान के स्वरों से मस्त होकर उस टीकरे की ओर चल पड़े थे, जहाँ अहीर अपनी लय की नरम-नरम थपकियों से गायों का मन रिक्ता रहा था ।

और जब साँप और साँपिन पगडंडी के किनारे-किनारे जा रहे थे, किसी नटखट पथिक ने अपने पुराने स्वभाव के अनुसार साँपिन को निशाना बना दिया था । साँप काफ़ी आगे-आगे जा रहा था, नहीं तो यदि उसे उम्मी समय अपनी प्रेयसी पर किये गये उस अत्याचार का पता चल जाता तो वह झट उस अत्याचारी पथिक को मौत की नींद सुला देता । अब वह पथिक कहाँ चला गया था ? पिछले क्रोध के स्मरण ने प्रतिशोध की आग को और भी भड़का दिया ।

पहले साँप ने समझा कि साँपिन की मौत की जिम्मेदारी अहीर या उसके गान पर किसी तरह नहीं आती । और जब से उसने उसकी सबसे अधिक दूध देनेवाली गाय की पिछली टाँगों में लिपट कर उसका मीठा-मीठा दूध पीना आरम्भ कर दिया था, वह अपनी प्रेयसी की याद कुछ-कुछ भूल चुका था ।

पर साँपिन की लाश देखकर साँप के लहू की एक-एक वूँद

धृणा से जल उठी और वह सब शांति, जो उसे बाँसुरी का गान सुन कर प्राप्त हुई थी, न जाने कहाँ लुप्त हो गई।

वह पथिक अब नहीं मिलता तो न मिले। वह इस अहीर का अन्त कर डालेगा और उसके गान को सदा के लिये बन्द कर देगा। न उस दिन अहीर ने गान छोड़ा होता, न वह अपनी प्रेयसी सहित टीकरे की ओर चल देता ! और वह पथिक, जिसने साँपिन पर पत्थर फेंका, अवश्य इस अहीर का भाई-बन्धु होगा—आदमी का बेटा, साँपों का चिर शत्रु !

किसी दूनरी साँपिन से वह सरलता से प्यार कर सकता था और अपने वंश को आगे बढ़ाने में उसे क्या कष्ट हो सकता था ? आदमी भी एक स्त्री के मर जाने पर दूसरी स्त्री का दम भरने लग जाता है। पर इसका यह अर्थ तो न था कि वह प्रतिशोध की भावना से मुँह मोड़ लेता।

आखिर विष का अर्थ क्या है ? मारना ! प्रतिशोध लेना ! विष बना ही है मारने के लिये। आदमी को साँप से डरना चाहिये, साँप से, साँप के प्रतिशोध से। जहर साँप के साथ पैदा होता है और जब तक वह जीवित रहता है उसका जहर भी मरता नहीं। झूठे अमृत से तो साँप का विष ही हजार बार सच्चा है। उसकी जिह्वा अपवित्र है तो अपवित्र ही सही। पर क्या वह अमृत की डींगें मारनेवालों से प्रतिशोध लेना कभी छोड़ सकता है ? उसके सिर में विष सोता रहता है जब तक कोई इसे जगा नहीं देता।

जहरी साँप बहुत शीघ्र अहीर के हाथ से बाँसुरी गिरा देना चाहता था। सदा के लिये, जिससे कि फिर कभी उसका गान वातावरण में न गूँज उठे। और उसे उसके निर्णय से कौन रोक सकता था।

पश्चिम की ओर इन्द्र-धनुष तना हुआ था।

साँप टीकरे के ऊपर चढ़ रहा था। उसने देखा कि अहीर सो रहा है। बड़ा अच्छा अवसर था। धीरे-धीरे वह उसके समीप जा पहुँचा। उसने छतरी के समान अपना फन फैला लिया, अहीर के पैर का चुम्बन ले लिया।

: ३ :

अहीर फिर कभी न जागा। गायेँ बराबर टीकरे के समीप चर रही थीं, जहाँ हरी-हरी घास जीवन का कोई मूक गान सुनते हुए तेजी से उग रही थी।

जहरी साँप ने अहीर को ऐंसे क्रोध से काटा कि वह दर्द के तीव्र अनुभव से तड़पा। उसके मुख से भाग निकली, नाक से खून बहने लगा और वह सदा की नींद सो गया।

साँप खुश था। उसने अपने चिर-शत्रु का अन्त कर दिया था। ऊपर आकाश पर चाँद निकल रहा था। साँप ने चाँद की ओर देखा और उसके मन में वसा हुआ आत्माभिमान बोल उठा। आदमी तो आदमी, आवश्यकता पड़े तो वह चाँद को भी डस सकता है। साँपिन की याद अब उसे रुलाती न थी। वह तो एक अन्यायी के हाथों मर कर मानों बलि-वेदी पर चढ़ गई और अब उसका प्रतिशोध लेकर साँप ने अपने वंश की लाज रख ली। वह रौतान बन गया था।

विप कहता है—ओ जीवन, मुझ से डर। कौन जाने विप का आरम्भ कैसे हुआ और क्या कभी विप का अन्त भी हो जायगा ? पर जीवन का प्रवाह तो निरन्तर चलता रहता है।

पुर्वैया चल रही थी और वह मृत अहीर के सिर के नीचे पड़ी हुई बाँसुरी में से गुजर कर गान पैदा कर रही थी। पर हवा उदास थी और गान की वेदना बिखर रही थी।

वट-वृक्षों की जटायें बराबर लटक रही थीं—बल खाते

भयानक साँपों के समान ! पुर्वैया हवा के भोंके जटाओं को हिला रहे थे और उनकी काना-फूसी भी वेदना और टीस में डूब रही थी ।

गान गूँज रहा था, और साँप हैरान था । कौन बाँसुरी बजा रहा है । अहीर तो मर गया । वह चारों ओर बड़े आश्चर्य से देखता रहा । बार-बार फन फैलाता था । यह गान अवश्य बन्द होना चाहिये । किसे सूझी है यह शरारत ? क्या वह यह नहीं जानता कि मैं उसका भी उसी प्रकार चुम्बन ले सकता हूँ—वही चुम्बन, जिसने अहीर को मौत के मुँह में धकेल दिया ?

किसने फूँका जीवन में इतना आत्माभिमान ? आरम्भ में यह धीरे-धीरे उत्पन्न होता है, जैसे वृक्षों पर बौर आता है । क्या अमृत में भी इतना आत्माभिमान होता है जितना कि विष में ?

विषधर ने समझा कि अहीर के सब भाई-बन्धु-मनुष्य के पुत्र—बाँसुरियाँ बजा रहे हैं । उसके काले चमकीले शरीर का बन्द-बन्द दुखने लगा । नहीं, वह डरेगा नहीं । वह सामने से भागेगा नहीं । उसका विष और भी कड़ुवा हो गया था, जैसे वसन्त ऋतु में मधु और भी सुगन्धित बन जाता है और मोठा भी ।

पर वह अकेला है और आदमी के बेटे असंख्य । मुकाबिला कठिन है तो क्या हुआ ? वह डट कर लड़ेगा—मर जायगा या सब को मार डालेगा—पहले सब अहीरों को और फिर आदमी के बाकी बेटों को । और यदि सब के हाथों से बाँसुरियाँ न गिरा दीं, गान न बन्द कर दिया, तो उसका नाम नाग नहीं ।

समय बीत रहा था, पर्वत-माला पर धीरे-धीरे समाप्त होने वाली छाया के समान ! वट-वृक्ष वहीं खड़ा था, और टीकरा भी ।

गान बराबर चलता रहा, साँप की कल्पना में समय की लम्बी धूप-छाँह अपना प्रतिबिम्ब डाल रही थी।

उस समय भगवान का न्याय कहाँ था जब एक नटखट पथिक ने पगडंडी के किनारे साँपिन का सिर पत्थर से कुचल डाला था ? अब यदि भगवान भी उसे प्रतिशोध लेने से रोके तो वह एक न सुनेगा। भगवान होगा अपने घर में। वह अन्यायी हो सकता है। साँप पर अब उसकी आज्ञा नहीं चलने की। वह साँप भी है और शैतान भी ! यदि भगवान में ज़रा भी शक्ति है तो वह इस गान को ही क्यों नहीं बन्द कर देता ? भगवान भी निर्धनों और निर्बलों को ही डराता है। अक्खड़ और निर्भय के सामने उसकी भी एक नहीं चलती। साँप अवश्य कोई ऐसा उपाय निकाल लेगा, जिससे वह आदमी तो आदमी भगवान और आदमी की सम्मिलित शक्ति से भी होड़ ले सके। अकेला आदमी तो कदापि उसके सामने खड़ा होने का साहस न कर सकेगा।

एक दिन साँप सो कर उठा तो वह खुशी से नाचने लगा। फिर बहुत शीघ्र उसकी खुशी गम्भीरता में बदल गयी जैसे दैवी ज्ञान के पश्चात् आदमी की काया पलट जाती है।

पाताल के सारे साँप धरती पर आ गये। ज़हरी साँप यह जानता था कि पाताल के इन सब साँपों की शक्ति से भी वह प्रत्येक आदमी की बाँसुरी न गिरा सकेगा। पर वह खुश था कि वे उसका निमन्त्रण पाकर निःसंकोच भागे चले आये थे, वह इन सब साँपों को अपने समान शक्तिशाली बना देगा।

पश्चिम की ओर इन्द्रधनुष तना हुआ था। मानव सन्तान इसे देख कर खुश हो रहे थे। यह किसी बुढ़िया का भूला है, जैसा कि वे अपने बुढ़िया दादी से सुनते आये थे। पर उन्हें यह भी तो याद था कि जहाँ से यह भूला ऊपर उठता दिखाई

देता है, वहाँ क्षितिज के समीप ही जहरी साँप का बिल भी है। साँप से बचियो, बच्चा ! बुढ़िया दादी का यह उपदेश आदमी के हर बेटे को याद था।

जहरी साँप ने भोजन में किसी तरह अपने जहर का अधिकांश मिला दिया और यह भोजन करने के बाद सब साँप उसी के समान जहरीले बन गये।

रो-रो कर उसने अपनी वेदना भरी गाथा सब साँपों को सुनाई और आदमी और उसके गान के चिर-शत्रु 'बन जाने का उपदेश दिया।

सब साँप सहमत हो गये। पारस्परिक परामर्श द्वारा उन्होंने एक पंच वर्षीय योजना बनाई, जिसमें वे अधिक से अधिक सन्तान उत्पन्न करेंगे और अधिक से अधिक आदमियों को डसेंगे।

इधर आदमी की सन्तान ने भी साँपों के इस कार्यक्रम का भेद पा लिया। उन्होंने अपनी स्त्रियों के परामर्श से अधिक से अधिक सन्तान उत्पन्न करने का निर्णय किया ताकि उनका वंश कायम रहे और जहाँ तक वंश चलेगा साँपों का सिर कुचलते रहेंगे—उन्हें कभी दूध न पिलायेंगे।

साँप और सँपोलिये आदमी को धरती से मिटा देने का यत्न करते रहे।

घनी छाया वाले वट वृक्ष ने उस निर्जन स्थान को अब भी सड़क से छिपा रखा था। कहीं-कहीं घास उग रही थी। जैसे यौवन से ज़रा पहले किसी युवक की मसँ भीग रही हों। एक ओर समतल ढलान चली गई थी और दूसरी ओर एक टीकरा था, जैसे वह कुँवारी धरती का उभरा हुआ उरोज हो—और बाँसुरी बजती रही !

फत्तू भूखा है

भूख मर रही है। अब यह बढ़ तो नहीं सकती। पहले तो माँपिन की तरह बढ़ती चली आ रही थी। चूल्हे में आग नज़र नहीं आती। आज आग नहीं जलेगी। दोपहर तो कभी की ढल गई। पिता जी भूखे हैं, चाचा भूखा है, चाची भूखी है, माँ भी, मैं भी, छोटा भाई भी। और फत्तू भी तो भूखा है।

फत्तू ने कल भी कुछ नहीं खाया था। इधर सारे घर में बताया तो यही गया कि किसी ने कुछ नहीं खाया। पर एक माँ को छोड़ कर सब ने कुछ न कुछ डाल ही लिया था मुँह में चोरी-छिपे। गुस्से से जला-भुना फत्तू भैंसों के समीप खाट डाल कर सो गया था। अनेक वर्षों से वह इसी जगह सोता आया है।

फत्तू मुसलमान है। जी हाँ। हम हिन्दू हैं, होंगे ! पर फत्तू एक मुद्दत से हमारी भैंसों की सेवा करता आया है। कम दूध देनेवाली भैंसों अधिक दूध देने लगीं, नाच नचानेवाली अड़ियल भैंसों सीधी हो गईं। वह वेतन भी तो नहीं लेता।

वह तो घर का आदमी है। जो हाँ, घर का आदमी। सब अपना-अपना काम करते हैं। वह भैंसों को सम्भालता है। भैंसों उसे चाहती हैं। जरा किसी भैंस के शरीर पर हाथ फेर दिया, बस वह उस पर खुश हो गई। भैंस तो भैंस, अभी परसों तक तो यह हाल था कि वह किसी भैंस के शरीर पर अपना हाथ फेरता और मुझे यों लगता कि वह मेरे शरीर पर हाथ फेर रहा है। हाँ तो आज फत्तू भूखा है।

भैंसों भी उदास नज़र आती हैं। उन्होंने कैसे जान लिया कि फत्तू भूखा है? गोमा का मुँह तो उतर गया है। वन्तो मुँह बांधे बैठी है। रेशमा की आँखों में आँसू आया चाहते हैं। बेजुबान भैंसों ने कैसे जान लिया कि फत्तू भूखा है?

कल फत्तू भूखा नहीं रहा होगा। किसी भैंस का दूध पी कर पड़ रहा होगा। नहीं नहीं, वह ऐसा आदमी नहीं। जरूर वह कल भी भूखा रहा होगा। और वह आज तो भूखा है ही।

माँ कह रही है—“रोटी खा ले, फत्तू! पेट के साथ क्या दुश्मनी है? कल से चूल्हा ठंडा पड़ा है। अभी चूल्हे में आग जलाऊँगी। बस तू जरा हाँ कर दे, फत्तू!”

मैं फत्तू के गमीप खड़ा हूँ। इधर मेरी उदासी बढ़ रही है। फत्तू भूखा है। उसकी आँखें मंदिर के दीयों के समान टिमटिमा रही हैं। मुँह से वह कुछ नहीं बोलता।

तुम भी एक ही गुमैल हो, फत्तू! मैं कहना चाहता हूँ, तुम्हारे कपड़ों से तो गोबर की बू आती है। फिर भी मैं तुम्हारे पास दौड़ा आता हूँ। तुम्हारा यह गुस्सा मुझे सिर से नापसन्द है। पेट के साथ क्या दुश्मनी? माँ सच कहती है। अभी कल तक मेरे हँसने-खेलने के दिन थे, अब मैं समझदार हो रहा हूँ। केवल हँसता-खेलता रहता तो आठवीं की परीक्षा में सारे स्कूल में प्रथम कैसे रहता? सब लड़कों के सामने हेडमास्टर साहब ने

मुझे शाबाश दी थी। कुछ दिन और हूँ इधर। हाई स्कूल में भरती होने के लिये बाहर जाना होगा। फिर न वहाँ फत्तू होगा, न गोमा, न वन्तो, न रेशमा। हाँ तो फत्तू आज भूखा है।

पहले-पहल फत्तू इस घर में आया था तो वह मुझ से एक ही वर्ष बड़ा था—एक अनाथ लड़का। खुले शब्दों में वह वेतन माँग सकता था। उसने तो घर का आदमी बनना ही पसन्द किया। लोगों ने उसे सौ-सौ पट्टियाँ पढ़ाई। उस पर कुछ प्रभाव न हुआ। माँ ने भी बहुत कहा फत्तू रुपये माँग ले। पर वह हमेशा इसे मजाक समझता रहा। बेटा माँ से तनख्वाह ले, यह तो न होगा। बस यही उसका गढ़ा-गढ़ाया जवाब था।

चूल्हे में आग नहीं जली। सारे घर में अफरा-तफरी फैल रही है। फत्तू चुप है। जी चाहता है कि उसकी खाट के गिर्द कोई अजीब सा नाच नाचूँ और उस गीत के बोल गुनगुनाऊँ जो मुझे बहुत पसन्द है—फत्तू की पगड़ी में कोयल का घोंसला। पर अब तो हवा भी थम गई। मुझे भी शान्त होकर बैठ जाना चाहिए। टिकटिकी बाँधे मैं फत्तू की ओर देख रहा हूँ। कितना सूखा-साखा-सा आदमी है। पर वह दूध में बसता है। रेशमा और गोमा को दुहते समय, शुरू में या आखिर में, उनके थनों को मुँह लगा कर जितना चाहे दूध पी सकता है। कोई निगरानी तो नहीं करता। पर नहीं नहीं, वह इस तरह दूध नहीं पीता। घर का आदमी जो ठहरा। पूरा दूध दुह कर लाता है। मेरी निगाह में तो वह एक मूर्ख है। उसे तो खूब दूध पीना चाहिए। लाख कोई झूठ मारा करे, चोरी का नाम दिया करे। मैं तो इसे चोरी न कहूँगा। अपने दूध की चोरी—खूब इन्साफ है। जी हाँ, फत्तू तो घर का आदमी है।

चाची ने आज भी चोरी-छिपे पंजीरी खा ली होगी। ऊपर से वह फत्तू की मिन्नत किये जा रही है—“देख फत्तू बेटा, रेशमा

कितनी उदास हो रही है।” ठीक तो है। रेशमा को फत्तू से पूरी हमदर्दी है—चाची से कहीं ज्यादा।

रेशमा की बड़ी-बड़ी आँखों में भाँक कर मैं पूछता हूँ—क्या तुम जानती हो रेशमा, कि चाचा जी फत्तू की सलाह लिए बिना ही तुम्हें बेच डालेंगे ? और उसकी बड़ी-बड़ी आँखें जैसे आँसुओं से गीली हो गईं। जैसे वह कहना चाहती हो—फत्तू के बिना मैं कैसे जिन्दा रहूँगी ? और मेरे कारण वह इस घर को तो छोड़ने से रहा।

गोमा अलग उदास बैठी है। जैसे कहना चाहती हो—फत्तू यहाँ से चला गया तो मैं कैसे जिन्दा रहूँगी। जब वह मुझे नज़र नहीं आता तो मुझे बिनौले भी अच्छे नहीं लगते।

बन्तो ने अपनी थूथनी गोबर और पेशाब से लथपथ ज़मीन पर रख छोड़ी है। जैसे वह अब इसी तरह बैठी रहेगी। उसके शरीर पर कभी फत्तू ने मालिश नहीं की। वह जानती है कि उसे सबसे अधिक प्रेम रेशमा से है। उसी को वह सबसे अधिक बिनौले खिलाया करता है। पर वह ईर्ष्या में फँस कर फत्तू से घृणा नहीं करती।

बचनी ने घास को मुँह तक नहीं लगाया। पहले फत्तू खायगा। जी हाँ, पहले तो फत्तू को ही खाना चाहिये। और जब तक फत्तू अपनी ज़वान से हुक्म नहीं देता, बचनी अपने पेट की बात कभी नहीं सुनेगी।

चाची कह रही है—“इन गरीब भैंसों का ही कुछ खयाल करो, फत्तू ! क्या खाओगे ? बोलो तो। जो खाओ वही पका दूँ। तेरे अल्ला का वास्ता। गुस्से को थूक दो। मैं देखूँगी कि किस तरह तुम्हारे चाचा रेशमा को बेच डालते हैं। उन्हें आने तो दो। मैं खुद उनका हाथ पकड़ लूँगी। वही होगा फत्तू बेटा जो तम चाहोगे। बस अब ज़िद न करो। पहले कुछ खालो।”

रेशमा ने अपनी थूथनी फत्तू की खाट पर रख दी और अपनी बड़ी-बड़ी आंखों से उसकी ओर देख रही है। जैसे कह रही हो—हां हां, फत्तू पहले कुछ खा लो। चाची की बात रख लो, कब तक भूखे रहोगे? अपनी भूख की तो मुझे कुछ चिन्ता नहीं। तुम ज़रूर मेरे दूध की खीर बनवा लो अपने लिए।

मैं सोच रहा हूँ कि चाची से कैसे सवाल जवाब करूँ। तेरे अल्ला का वास्ता ! तो क्या फत्तू का अल्ला और चाची के भगवान् दो हैं ! दो तो न होंगे। फत्तू कोई गाजी तो नहीं। पर उसका अल्ला उस पर खुश ज़रूर है। अल्ला ने ही रेशमा का दूध अधिक से अधिक बढ़ा दिया था। एक बार एक नई ब्याई भैंस मर गई थी। फत्तू ने समझ लिया कि अल्ला नाराज़ है। पर कुछ दिन बाद फत्तू ने मुझे समझाया था कि अल्ला अपने बन्दों को सज़ा दे कर खुश नहीं होता। तेरे अल्ला का वास्ता ! यह क्यों न कहा कि मेरे भगवान् का वास्ता ?

कल जगदीश दुकान पर चाचा से कह रहा था—“न कोई अल्ला है न भगवान्। यदि कोई ऐसी शक्ति होती तो पहले अमीरी और गरीबी की सीमाओं को अपने वश में रखती। अमीरों को खून चूसनेवाली जोकें न बनने देती और गरीबों को जन्म-जन्म के गुलाम और पददलित पशु बनने पर मजबूर न करती। बल्कि अगर कोई खुदा होगा भी तो ज़रूर कोई साहूकार होगा क्योंकि आजकल साहूकारों की चाँदी है।

जगदीश न जाने क्यों ऐसी बातें किया करता है ? जी हाँ, वह अब प्रेजुएट है। न वह फत्तू के अल्ला को मानता है, न चाची के भगवान् को। क्या सब प्रेजुएट ऐसे ही होते हैं ? आज जब मैंने उसे बताया कि मैंने चाची को चोरी-छिपे पंजीरी खाते देखा है तो वह गला फाड़ कर हँसने लगा। बोला—“मैं भगवान् होता तो चाची को चार घूँसों से तो क्या कम सज़ा देता ?”

रेशमा और गोमा, वन्तो और वचनी—चारों भैंसों एक दूसरे की ओर देख रही हैं। शायद वे मिल कर कैमला करना चाहती हैं कि फत्तू को खाना खा लेना चाहिए।

मुझे विश्वास नहीं होता कि कोई ग्रेजुएट भी भैंसों से इतना प्यार कर सकता है। न मुझे यही विश्वास होता है कि भैंसों किसी ग्रेजुएट को भूख-हड़ताल करते देख कर खुद भी हड़ताल में शामिल हो सकती हैं। पर जगदीश तो नास्तिक है और उसने चाचा को भी नास्तिक बना दिया है।

जब से फत्तू हमारे यहाँ आया है, वह अपनी भैंसों को इसी तरह प्यार करता रहा है। हर साल ईद के अवसर पर वह सवेरे-सवेरे उन्हें नहलाता है और फिर एक-एक के कान में कहता जाता है—कल ईद है ! और रात को नहर के किनारे वह अपने साथ उन्हें भी ईद का चाँद दिखा कर खुशी से भूम-भूम उठता है। दिवाली की रात आती है तो वह खुरलियों पर दीये जला कर रखता जाता है। इस खुशी में भैंसों का दूध बढ़ जाता है। और फिर कार्तिक की पूर्णमासी पर वह उन्हें मेला दिखाने ले जाता है। कहता है—इन्हें भी तो मालूम होना चाहिये कि आज बाबा नानक का जन्मदिन है। जी हाँ, बहुत ही मजेदार आदमी है फत्तू। कहता है आदमी अपने त्यौहार मनाये और अपने मवेशियों को शामिल न करे, यह तो बड़ी मूर्खता होगी।

कभी-कभी फत्तू अपने ओंठ चूस लेता है। अब तो जरूर उसे कुछ न कुछ खा लेना चाहिए। शायद वह सोचता है—रेशमा, मेरी रेशमा मेरे पास से चली गई तो कौन उसे बिना देगा ? सूखा-साखा-सा भूसा खाते हुए वह कहा करेगी—किधर गया वह मेरा फत्तू ? उसके सींग तेल की मालिश के बिना सूख जायँगे। उसकी नरम और मुलायम पीठ से ही की पीठ की तरह

खुरदरी हो जायगी। उस समय वह मुँह उठा कर 'बाँय-बाँय' करती हुई कुछ तलाश करती हुई मी निगाहों से किसी को ढूँढा करेगी। पर उसे उसका फत्तू कहीं नज़र न आयगा। इससे अधिक वह कुछ नहीं सोच सकता। सिर को एक झटका देकर वह उठ बैठा है।

रेशमा अपनी बड़ी-बड़ी आँखों से फत्तू की ओर देखती हुई एक बार फिर अपनी थूथनी खाट की पट्टी पर रख देती है। जैसे कहना चाहती हो—तुम खा ना खालो फत्तू! चाचा ज़रूर चाची की बात रख लेंगे और मुझे बेचेंगे नहीं। और अगर उन्होंने मुझे बेच भी दिया तो मैं रस्सा तुड़ा कर भाग आऊँगी। मैं किसी भी तरह अपने नये मालिक के घर में बँध कर न रहूँगी। तुम तो जानते ही हो फत्तू कि तुम्हारे बिना मुझे कुछ भी अच्छा नहीं लगता। तुम दूध दुहने बैठते हो तो मैं चाहती हूँ कि तुम मुझे घण्टों दुहते रहो। मुझे उस समय एक गुदगुदी सी होती है और यह केवल तुम्हारे ही हाथों में दुह जाने पर।

भूखी आँखों से फत्तू रेशमा की तरफ देखता है। जैसे कह रहा हो—बस चलते तो तुम्हें विकने न दूँगा, रेशमा! मुझे मालूम है तुम हमेशा मेरे हाथों से दुहा जाना पसन्द करती हो। बल्कि तुम तो इस बात के लिए तरस जाती हो कि मैं कभी तुम्हारे थन को मुँह में ले कर दूध पिऊँ।

चाचा भी आ गये। फत्तू की ओर देखे बिना ही वह अन्दर चले गये। फत्तू की नाराज़गी के कारण चूल्हा ठण्डा पड़ा रहे यह बात उन्हें पसन्द नहीं। असल में वे फत्तू से तंग आ चुके हैं। फत्तू हमेशा खुद ही दूध दुहता है। और चाचा कहता है कि कोई देखनेवाला न हो तो वह भैंस के थन को मुँह में ले कर जितना चाहे उतना दूध पिया करे हर रोज़।

पिता जी कह रहे हैं—“अब छोड़ो यह भूख हड़ताल, फत्तू

बेटा ! रेशमा तुम्हारी है और तुम्हारी ही रहेगी। वह बिकेगी नहीं, हम गिरेंगे नहीं।”

अगर रेशमा सचमुच बिकेगी नहीं तो खुद चाचा क्यों नहीं कह देता ? न भगवान् की कसम खाये न अल्ला की। केवल कह दें कि रेशमा बिकेगी नहीं। पर आश्चर्य तो इस बात का है कि जब से जगदीश चाच के पाम आने लगा है, चाचा फत्तू की ओर और भी उपेक्षा से देखने लगे हैं।

चाची परे वैठी कमीज़ सी रही है। जरूर यह चाचा के लिए सिल रही होगी। पर मैं सोचता हूँ कि चाचा को यह कमीज़ हरगिज़ नहीं मिलनी चाहिये। फत्तू का चाचा ज़रा भी तो खयाल नहीं। जी हाँ, अब तो फत्तू को बहुत सख्त भूख लग रही होगी। भूख से उसकी जान निकल रही होगी। पर वह भी एक ह. हठीला है। अड़ गया तो अड़ गया हमेशा के लिए। बस अब खुदा भी आ कर कहे कि भूख हड़ताल बन्द कर दो तो वह एक नहीं सुनने का।

फत्तू की ज़बान पर बराबर टाँका लगा है। अन्दर से निकल कर चाचा उसकी खाट के समीप खड़ा हो गया है। दोनों खामोश हैं। ऐसी भी क्या खामोशी है ? शायद चाचा भुकने को तैयार है। लेकिन बात मुँह पर नहीं आती। कितना ज़िद्दी है चाचा भी। आखिर इसमें ज़िद्द की क्या बात है ? रेशमा को बेचना इतना ज़रूरी कहाँ से हो गया ? फत्तू भी आखिर इन्सान है। अगर वह सचमुच रेशमा को बिकने नहीं देना चाहता तो व्यर्थ में ही चाचा को ही ज़िद्द करने की क्या ज़रूरत है ?

फत्तू के दिल में तो सारे घर का दर्द भरा है, सब भैंसों का दर्द भरा है। वह कितना भला आदमी है—बिल्कुल घर का आदमी। आज वह कैसे पराया हो गया ? वह अनाथ सही, उसका रक्त-मांस किसी अपरिचित परिवार का सही, उसका

मजहब भी भिन्न सही, पर उसने अपना सारा जल इसी नदी में मिला दिया है। और यदि यह सत्य है तो उसका सत्याग्रह भी ठीक है।

क्या रक्त का सम्बन्ध ही सबसे बड़ा सम्बन्ध है ? फत्तू मेरा भाई है। उसका अल्ला मेरा भी अल्ला है। उसके साथ मैं भी मुसलमान हूँ। अरे, अरे ! यह मैं क्या कह गया ? पर ऐसी भी क्या बात है। फत्तू मेरा भाई है। जी हाँ, फत्तू हमेशा मेरा भाई रहेगा। उसकी आँखों में आँखें डाल कर मैं हमेशा दिल की बातें भाँप सकता हूँ। और उसके गले में बाँहें डाल कर मैं हमेशा कह सकता हूँ—तुम कभी इतने नाराज़ तो नहीं हो जाओगे फत्तू कि मुझे अकेला छोड़ कर चले जाओ ?

पिता जी कह रहे हैं—“अब ज़िद छोड़ दो, फत्तू बेटा ! तुम देखोगे कि रेशमा तुम्हारे पास ही रहेगी।”

चाचा अब भी खामोश है। न जाने चाचा क्यों खामोश है ? चाचा चाहे तो एक ही शब्द से फत्तू को खुश कर सकता है। लेकिन यह तो तभी हो सकता है कि चाचा ज़िद छोड़ कर सीधे मुँह बात करे। फत्तू में ऐसी क्या बुराई है कि चाचा व्यर्थ ही उसे नाराज़ करने पर तुल गया है। आखिर चाचा अपना इरादा जाहिर क्यों नहीं कर देता ? क्या रेशमा को बेचने की ज़िद बहुत जरूरी है ? रेशमा तो बहुत अच्छी भैंस है। उससे तो मुझे भी प्यार है। अब मैं कैसे कहूँ कि चाचाजी, फत्तू के लिए नहीं तो मेरे लिए ही रेशमा को रख लो।

जिस दिन परीक्षा का परिणाम निकला था मैंने फत्तू को चौदह अमरुद दिये थे। वह कितना खुश नज़र आता था। केमरा होता तो मैं उसका फोटो ले लेता। उस दिन उसने मेरे पास हो जाने की खुशी में एक नया गीत बना डाला था। जब वह गा रहा था तो मुझे ऐसा लगा कि परीक्षा में तो फत्तू पास

हुआ है और मैं केवल एक चरवाहा हूँ। फत्तू की पगड़ी में कोयल का घोंसला—मैं गा रहा था। उसने मुझे कान से पकड़ लिया। उसकी उँगलियों ने चिमटी का रूप धारण कर लिया था। मेरी चीखें निकल गईं। फिर कहीं उसने मुझे छोड़ा और धमकी दी—अब मत कहना कोयल का घोंसला फत्तू की पगड़ी में। आठवीं पास कर ली पर पुरानी शरारतें नहीं गईं। मैं इसके आगे-आगे दौड़ा जा रहा था। मैं उससे पूछना चाहता था कि कोयल का घोंसला उसने कभी देखा भी है या नहीं। उस समय मैंने सोचा कि अपने गीत का बोल बदल कर गाऊँ—रेशमा के सींगों पर कोयल का घोंसला। पर यह स्पष्ट था कि वह इसे भी पसन्द नहीं करेगा। उसकी उम्र चौदह वर्ष की है और मेरी तेरह वर्ष की। इसीलिये तो मैंने तेरह अमरुद लिये थे और उसे दिये थे पूरे चौदह के चौदह।

माँ कह रही है—तेरा चाचा तुझे नागाज नहीं करेगा फत्तू बेटा ! मुँह से न बोल, इशारे से कह दे। बोल आग जलाऊँ चूल्हे में ?”

चाचा कह उठता—“हाँ हाँ, जलाओ आग। अरे फत्तू तो बहुत समझदार लड़का है।”

मैं खुशी से उछल कर परे को सरक जाता हूँ। जी में तो आता है कि फत्तू के गले में बाहें डाल कर कहूँ—देखो अब यह तुम्हारी भूख हड़ताल नहीं चल सकती, फत्तू भैया।

चाची ने कमीज पूरी कर ली। वह मशीन से उठ कर चूल्हे के समीप जा बैठी और आग सुलगा रही है। आज भी आग न जलती तो वह जरूर चोरी-छिपे चाचा को पंजीरी खिला देती और आप भी खा लेती।

मैं कहता हूँ—“फत्तू के लिए भी आज एक नई कमीज होनी चाहिये।”

चाचा और पिता जी एक स्वर हो कर कहते हैं—“एक क्यों,—पाँच ।”

फत्तू उठ बैठा है । मारा घर खुश नज़र आता है । अब तो मालूम होता है कि जैसे फत्तू का अपने अल्ला पर ईमान है वैसे ही चाचा का अपने भगवान् पर विश्वास है । है भी ठीक । जगदीश का असर इतनी जल्दी कैसे हो सकता था ?

चाचा फत्तू से गले मिल रहे हैं । पिता जी परे खड़े यह तमाशा देख रहे हैं । वे अब कुछ न बोलेंगे । फत्तू कहता है—“रेशमा का क्या फैमला हुआ, यह तो कहो, चाचा ?”

चाचा पहले खामोश रहता है । फिर बड़े विश्वास से कहता है,—“मैं रेशमा को कहीं बाहर न ले जाऊँगा । यह तुम विश्वास रखो ।”

चूल्हे पर खीर पक रही है । छोटा भाई बाहर से आकर कहता है—“माँ, पहले मुझे देना खीर ।”

“नहीं, माँ,” मैं कहता हूँ, “पहले मुझे देना खीर ।”

पिता जी कह रहे हैं—“आँच और तेज़ कर दो ।”

न जाने खीर कब तक तैयार होगी ? मरी हुई भूख फिर चमक उठी है । भूख तो आदमी को बावला बना देती है । सब स्वार्थी की माँ है यह भूख । अगले ही रोज़ जगदीश दुकान पर चाचा से कह रहा था—जिसने भूख की फिलासफ़ी को समझ लिया उसने जीवन का भेद पा लिया । फिर न कोई अल्ला रह जाता है न भगवान् । न इन्सान न हैवान । मतलब यह है कि फिर अमीर गरीब का फर्क न रहेगा । न कोई नौकर होगा न मालिक । आदमी-आदमी सब बराबर होंगे ।

खीर तैयार हो गई । छोटा भाई कहता है—“माँ, पहले मुझे देना खीर ।”

माँ डाँट बता कर छोटे भाई को चुप करा देती है । और मैं

खुद ही शर्मिन्दा हो जाता हूँ । माँ चमक कर कहती है—“पहले फत्तू खायगा फत्तू भूखा है ।”

थाली में खीर भर कर चाची फत्तू के सामने ला रखती है और कहती है—“यह लो रेशमा के दूध की खीर फत्तू बेटा ! बासमती के चावल, रेशमा का दूध और गन्ने का रस । ऐसी खीर तुमने पहले कभी न खाई होगी ।”

फत्तू खीर खा रहा है और सोचता है कि सचमुच ऐसी खीर उसने पहले कभी नहीं खाई थी । छोटा भाई अलग चमचे भर-भर कर खीर खा रहा है ।

सब ने आज खीर ही खाई है—रेशमा के दूध की खीर !

×

×

×

रात के माये बढ़ रहे हैं । रेशमा और गोमा, बन्तो और वचनी—चारों भैंसें बड़ी-बड़ी आँखों से फत्तू की ओर देख रही हैं । जैसे कह रही हों—तुम्हारी जीत तो हमारी जीत है ।

रात का अन्धकार गहरा हो रहा है । रेशमा का ग्राहक भी आ पहुँचता है । पिता जी खामोश है । चाचा खामोश हैं । फत्तू भी खामोश है ।

अमावस की रात के नन्हे टिमटिमाते दीये के समान फत्तू बड़े गर्व से सर ऊँचा किये बैठा है । क्योंकि उसे भरोसा है कि चाचा अपना वायदा नहीं भूलेगा और रेशमा को हरगिज नहीं बेचेगा ।

उधर चाचा रेशमा के ग्राहक की ओर सरक जाता है और उनकी कानाफूँसी और भी पचीदा हो रही है ।

फत्तू सोचता है कि रेशमा कभी नहीं बिक सकती । आखिर चाचा अपने वायदे का पक्का आदमी जो ठहरा ।

हवा के जबरदस्त झोंके को दीये की लौ की क्या परवाह ? जी हाँ, रेशमा का ग्राहक भी एक बार आकर खाली कैसे जा सकता है ।

मिस बिलिमोरिया

यह प्रदर्शनी का अन्तिम दिन था।

उसने आइने के सामने खड़े-खड़े तेवरों का विचित्र-सा त्रिशूल बनाया जो नीलकमल की मुँहवोली माँ अर्थात् उसकी बुढ़िया पड़ौसिन के माथे पर अक्सर नज़र आ जाता था। उसने जल्दी-जल्दी बालों में कंधी की और बन-सँवर कर सड़क पर आ गई। यह तय था कि वह ठीक समय पर नीलकमल के यहाँ पहुँच जाय।

तेज़-तेज़ कदम उठाते हुए वह सोच रही थी कि आज प्रदर्शनी के रास्ते में वह दिल की बात कह डालेगी। आखिर कोई कब तक रहस्य को छिपा कर रख सकता है ? इससे लाभ भी क्या होगा ? एक सूक्ष्म-सा भय उसकी आत्मा की गहराई से उभरता और चलते-चलते उसके पैर धीमे पड़ जाते। आखिर यह बात वह नीलकमल से कैसे कहेगी ? वह कैसे उसे समझायगी कि उसकी मिस बिलिमोरिया आनन्द और वेदना के बीच लटक रही है ? वह कैसे उसे बतायगी कि उसे दुनिया वालों से डर लगता है इन दुनियावालों से खुदा ही बचाय। उनकी एक ही

तोहमत औरत को कुचल कर रख सकती है। आज उसे नीलकमल की सहायता की आवश्यकता थी। आज उसे असीम निष्कपटता का प्रमाण मिलना चाहिये। नहीं तो बात फैल जाने के पश्चात् मामला बिगड़ जायगा। जैसे वह गहरी भील में डूब रही हो। प्रदर्शिनी का ध्यान आते ही वह संभल गई। यह तय था कि आज नीलकमल वे सभी चीज़ें खरीद देगा जिन्हें वे दो-तीन दूकानदारों से रिजर्व रखने को कह आये थे। उसने फैसला किया कि वह प्रदर्शिनी से लौटते हुए नीलकमल को अपनी कहानी सुनायगी, पहले नहीं। उसकी बेचैनी कुछ-कुछ कम होती गई और वह तेज़ कदम उठाने लगी।

वहाँ पहुँच कर पता लगा कि नीलकमल उपस्थित नहीं है। बुढ़िया पड़ौमिन ने पहले के समान माथे के तेवरों का त्रिशूल बना कर उसके हाथ में चाबी थमाते हुए कहा—“तुम बैठो, बेटी! नीलकमल का तो स्वभाव ही ऐसा है। वायदा करके भूल जाता है।”

वह चाहती थी कि अकेली ही प्रदर्शिनी का रास्ता नापे। शायद उधर ही कहीं नीलकमल भी मिल जाय। पर बेदिली से कमरा खोल कर वह सोफे पर जा बैठी। बुढ़िया अपने कमरे की ओर चली गई थी। चलो अच्छा हुआ, उसने सोचा इस चुड़ैल से तो छुट्टी मिल गई। यहाँ आ बैठती तो वही पुराना राग छेड़ देती—यह आजकल की लड़कियों को क्या हो गया बेटी? न लाज न शर्म। तुम उनसे अलग हो। नीलकमल हमेशा तुम्हें सराहता है।

दीवारगीर पर रखी हुई मूर्ति की ओर उसने उचटती हुई निगाह डाली। यह मूर्ति उसे पसन्द थी। कलाकार ने सुन्दरी को कुछ इस अन्दाज़ में पेश किया था कि देखनेवाले को स्वतः विचार आ जाय कि वह माँ बनने वाली है। उसका रंग कुछ

इस तरह बदल गया था जैसे आने वाले बालक के विचार से ही उसे कष्ट हो रहा है।

सोफे के समीप फर्श पर ढेर की ढेर पुस्तकें बिखरी पड़ी थीं। कोई और समय होता तो वह उठ कर इन्हें ठीक करने लग जाती। उस समय उसकी अवस्था ऐसी थी जैसे किसी ने उसे संसार की आधी खुशियों से वंचित कर दिया हो। उसे याद था कि एक दिन नीलकमल ने उसे एक पुस्तक से किसी स्त्री की भावनाएँ पढ़ कर सुनाई थीं—‘प्राचीन काल में देवता धरती पर उतरते थे और स्त्रियों से प्रेम करते थे। अब वे नीचे नहीं उतरते। यदि वे मर चुके हैं या बूढ़े खूमट हो चुके हैं, तो क्या मुझे वह प्रेम प्राप्त न होगा जो जिन्दगी के साज पर दर्द-भरे गीत छोड़ सके ? उठ कर वह उस पुस्तक की तलाश करने लगी। यह विचार उसे गुदगुदातासा लगा कि नीलकमल कोई मामूली व्यक्ति नहीं, बल्कि देवता हैं जो आसमान से धरती पर उतर आया है। एक काला-कलूटी लड़की के सम्मुख प्रेम दिखानेवाला व्यक्ति जरूर कोई देवता होगा। पर अपनी कठिनाई का विचार उसे बुरी तरह सता रहा था। आज वह सब बात कह डालेगी। यदि देवता ने मुझे ठुकरा दिया तो मेरा क्या परिणाम होगा ? ये कलाकार किस्म के लोग बहुत बेपरवाह होते हैं। पर अब इसका भी क्या इलाज कि नीलकमल का नाम मेरी आत्मा पर कुछ इस तरह अंकित हो गया है जैसे संगमरमर पर किसी ने नोकदार चाकू से अपना नाम खोद दिया हो। यह सोचते हुए दीवारगीर पर रखी हुई मूर्ति की ओर एक बार फिर उसने उचटती-सी निगाह डाली।

आइने के सामने उसने अपने बाल खोल डाले और दोबारा से कंधी करने लगी। कमरे की बिखरी हुई चीजों पर उसे क्रोध आ रहा था। कंधी न की जाय तो बाल उलझ जाते हैं। कमरा

भी सफ़ाई चाहता है। भला कोई पूछे केले के छिलके मेज़ के पास क्यों पड़े हैं ? स्पष्ट है कि ये तो दीवारगीर की मूर्ति का मुँह चिड़ा रहे हैं। छत के समीप मकड़ी ने जाले तान रखे हैं। दीवारों पर शायद वर्षों से सफ़ेदी नहीं कराई गई। ये कलाकार किस्म के लोग अपने लिये कोई सिद्धान्त बना लें तो ज़रा अच्छे रूप में जीवन का आनन्द ले सकते हैं। हम मिल कर रहेंगे, मिला कर कमायेंगे। नीलकमल मेरी आवाज़ पर मरता है। कहता है—तेरी आवाज़ तो बुलबुल को शरमाती है, मिस बिलिमोरिया !

मूर्ति के समीप लपक कर वह उसे ध्यान से देखने लगी। वह जानती थी कि मूर्ति की सुन्दरी उस जैसी सौ लड़कियों पर भारी है। पर जब एक बार नीलकमल उसे अपनी कह चुका है तो वह अपना फ़ैसला कभी रह न कर सकेगा। अगले ही क्षण वह मूर्ति के समीप से हट गई। केले के छिलके उठा कर उसने बाहर फेंक दिये। और फर्श पर बैठ कर पुस्तकों को तरतीब से रगड़ने लगी। सहसा उसके हृदय में यह इच्छा पैदा हुई कि बुढ़िया भी आ जाय और उसकी सहायता करे।

उसने बुढ़िया को आवाज़ दी। कोई जवाब न आया। शायद वह कहीं बाहर चली गई थी। उसने सोचा कि बुढ़िया अभी यहाँ चली आय, तो फिर से यही रट लगाने लगेगी—चाँद सूरज की जोड़ी अच्छे कर्मों से ही बनती है। एक काली-कलूटी लड़की की चाँद से उपमा देना, यह कुछ बुढ़िया ही के हिस्से में आया है। उसके जी में आया कि भट उठ कर आइने में अपना रूप देख ले।

प्रदर्शनी का अन्तिम दिन हो और समय यों उड़ता चला जाय ! वह घबरा रही थी। वह चाहती थी कि अकेली ही प्रदर्शनी की ओर चल पड़े। आखिर इस हिमाकत का क्या मतलब कि

प्रदर्शनी का अन्तिम दिन यों नीरसता का शिकार हो जाय ?

न जाने क्यों उसे यों अनुभव होने लगा कि अब नीलकमल कभी इस कमरे में नहीं आयगा। जैसे उसका सिर दर्द के मारे फटा जा रहा हो। इन तीन महीनों में उन्होंने एक-दूसरे को पहचान लिया है। अब उसे दोबारा आँख-मिचौनी खेलने की आवश्यकता क्यों होगी ? न मैंने उस पर विश्वास किया होता, न आज मेरी यह अवस्था होती। मेरी बद-दुआएँ उसे खा जायँगी। मैं वह बदला लूँगी कि दुनिया मेरे साहस की दाद देगी। पर नीचे जीने से पाँव की आहट सुन कर वह संभल कर बैठ गई, जैसे कोई नर्तकी बाँह फैला कर गत की प्रतीक्षा कर रही हो।

“मुझे मालूम था कि नीलकमल अभी तक न आया होगा,” बुढ़िया ने नीचे से आ कर कहना शुरू किया, “बस ऐसा ही है मेरा मुँहबोला बेटा, बेटी ! उससे तो तुम ही अच्छी हो।”

बुढ़िया देहलीज़ पर बैठ गई। मिस बिलिमोरिया उठ कर सड़क की ओर खिड़की के सामने खड़ी हो गई। रात उतर आई थी। बिजली के बल्ब रोशन हो उठे थे। वह अंधकार में दूर कहीं किसी को आता हुआ देखने के लिए व्याकुल हो उठी। एक भारी भरकम ट्रक सड़क की छाती को दहलाता हुआ निकल गया। उसे लगा जैसे वह स्वयं भी एक सड़क के समान हो।

उसने मुड़ कर दीवारगीर की मूर्ति की ओर देखा जिसके अंग-अंग से प्रसव-वेदना की कल्पना स्पष्ट हो उठी थी। उसने सोचा क्यों न अपनी बात बुढ़िया से कह डाले।

बुढ़िया कह रही थी—“तुम उदास क्यों हो, बेटी ? आओ तुम्हें एक कहानी सुनाऊँ।”

कहानी ! कैसी कहानी ? मिस बिलिमोरिया पूछना चाहती थी।

पर इससे पहले कि वह कुछ कहती, बुढ़िया ने कहना शुरू किया—
 “बहुत पहले देश में एक बहुत भयानक अकाल पड़ा। भरने-
 तालाब और कुवें-सब सूख गये। एक लड़की पानी की तलाश में
 निकली। थक-हार कर उसने मटकी ज़मीन पर रख दी और सो
 गई। आँख खुली तो आँसू उमड़ आय। भगवान् की कृपा से
 उसकी मटकी ताज़े पानी से भर गई थी। वह बहुत प्यासी थी।
 पर माँ को पानी पिलाये बिना उसे एक बूँद तक गले में टपकाना
 पसन्द न था। घर पहुँची तो माँ के सिरहाने यमदूत खड़े थे।
 माँ बोली—बेटी मेरा अन्तिम समय समीप है। अब यह पानी
 तुम्हारे लिए है। ज्यों ही उसने कटोरा भर कर पानी पीना चाहा,
 कहीं से एक राही आ निकला। लड़की ने अपना कटोरा उसके
 हाथ में पकड़ा दिया। सात बूँदें लड़की की गोद में आ गिरीं।
 मटकी से एक नदी बह निकली जो आकाश पर पहुँच कर
 आकाश-गंगा बन गई। और वे सात बूँदें सात तारों के रूप में
 बदल गईं।”

कोई और समय होता तो मिस विलिमोरिया यही कहती—
 तुमने यों ही नीलकमल पर रोव जमा रखा है। यह कहानी तो
 बकवास है। मटकी से गंगा बह निकली। और फिर भला यह
 गंगा आसमान पर कैसे जा पहुँची। राही के पकड़े हुए कटोरे
 से लड़की की गोद में सात बूँदें गिरीं जो सात तारों में बदल गईं।
 यह उससे से भी बड़ी गप्प है। और जैसा कि नीलकमल ने
 मशहूर कर रखा है तुम भी सात बेटों की माँ रह चुकी हो।
 इससे बड़ी गप्प दूसरी न होगी। देख लो तुम्हारी ज्ञान-गूढ़ड़ी।
 इसे नीलकमल के सामने ही खोला करो। पर फिर उसे खयाल
 आया कि यह तो वही बुढ़िया है जिसने अभी-अभी कहा था—
 बस ऐसा ही है मेरा मुंहबोला बेटा, बेटी ! उससे
 तो तुम ही अच्छी हो। वह बुढ़िया से कहना चाहती थी—दादी

अम्मा, तुम्हारी यह आकाशगंगा वाली कहानी तो बहुत बड़ा सत्य है। शायद मैं ही वह लड़की हूँ जो प्यासी माँ के लिये पानी की तलाश में भटकती रही थी। तुम्हारा यह नीलकमल एक राही के समान हमारे यहाँ चला आया। और मैंने वैसा व्यवहार किया जैसा कि हमेशा एक अतिथि के साथ करना चाहिए।

एक ओर शूली पर चढ़े हुए ईसा का रंगीन चित्र दीवार पर लटक रहा था, जो अभी अगले ही दिन अपने जन्मदिन के अवसर पर उसने नीलकमल को भेंट किया था और जिसे लेते हुए उसने एक साहित्यकार का कोई अछूता विचार पढ़ कर सुनाया था—“अपनी भोली-भाली भेड़ों पर किये गये जुल्म को खुदा का बेटा सह न सका और उसने शूली पर चढ़ना स्वीकार किया। ईसाई धर्म के अनुसार यही मुक्ति का एक उपाय है।” उसके मन में मुक्ति का विचार बिजली की कौँदे की तरह लपका और वह खिड़की से हट कर सोफे पर बैठ गई।

बुढ़िया न जाने क्या सोच कर बड़-बड़ा रही थी—“लड़की के लेख तो उसके जन्म से पहले लिखे जाते हैं, बेटी !”

मिस विलिमोरिया ने एक हल्की-सी मुस्कराहट फेंकते हुए बुढ़िया की ओर देखा। जैसे कह रही हो—यह लेख-वेख काकिस्सा मेरी समझ में नहीं आ सकता। पर एक क्षण की खामोशी के बाद वह बोली—“छोड़ो, कोई काम की बात करो, दादी अम्मा !”

बुढ़िया ने इस रूखे जवाब से ज़रा भी घुरा न माना। वह तो अपने पिछले जीवन के विचार में उलझ रही थी। न जाने क्या सोच कर वह कड़ उठी—“वासी रोटी फिर से सेंक कर खाने में मज़ा आता है, बेटी !”

मिस विलिमोरिया चाहती थी कि बुढ़िया से कहे—यह

पहेलियां किसी और समय के लिये उठा रखो। मैं सब समझती हूँ। मुझे निपट अनजान मत समझो। तुम यही कह रही हो न कि हमारा ब्याह हो जाय तो तुम्हें किसी के यहां काम करके रोटी कमाने की ज़रूरत ही न रह जाय। यह सत्य है कि यदि हम तुम्हें घर का काम सौंप देंगे तो तुम्हारी बीती हुई खुशियां फिर से लौट आयेंगी। बारी-बारी से तुम्हारे जीवन में सात बेटे आये पर एक भी तो न रहा। नीलकमल तुम्हारा मुँहबोला बेटा है। कभी-कभी तुम्हारे हाथ पर दो चार आने रख देता है तो तुम खुश हो जाती हो। हमारा ब्याह हो जाय तो मैं तुम्हें और भी खुश किया करूँगी।

बुढ़िया अपने सारे विचारों का निचोड़ कर पेश करती हुई बोली—“मैं तो तुम्हारे ब्याह पर तुम्हें चाँदी का छल्ला भी न दे सकूँगी, बेटी !”

इसके उत्तर में मिस विलिमोरिया भट कह उठी—“तुमने ही तो कहा था दादी अम्मा, कि रूप को शृंगार नहीं चाहिए।”

बुढ़िया खिसियानी-सी हो गई। बोली—“मैं धनवान होती तो बहू को सोने में पीली कर देती। मैं तो इधर तुम्हारे ब्याह के दिन गिन रही हूँ, बेटी !”

मिस विलिमोरिया मुकरा कर इधर-उधर देखने लगी। वह कहना चाहती थी कि व्यर्थ दिन गिनते रहने से क्या लाभ ? कल-कल करते रहो तो वह कल कभी आता ही नहीं। कल की कल्पना धुंधली है। यह ‘आज’ तो बहुत प्रतीक्षा के पश्चात् आया है। यदि यह ‘आज’ भी व्यर्थ चला गया तो समझ लो कि दो जीवन सदा के लिये एक दूसरे से परे हट गये। दीवारगीर पर रखी हुई मूर्ति की ओर देखते हुए अब उसे पहला-सा कष्ट न हुआ। अनजाने ही उसकी निगाहें शूली पर चढ़े ईसा की ओर घूम गईं।

बुढ़िया की आँखों में आँसू चमक उठे। जैसे सात बेटों को खो कर उसने आठवाँ बेटा पा लिया हो। अब इस बेटे का ब्याह होगा। बहू बुरी नहीं। क्रिस्तान है तो क्या हुआ ? वह मेमों की तरह बाल तो नहीं कटाती। जैसा देश का रिवाज़ है, वह साड़ी पहनती है। और मिस बिलिमोरिया की सफ़ेद साड़ी की ओर देखते हुए वह बोली—“साँवले रंग पर सफ़ेद कपड़ा ही शोभा देता है, बेटा !”

मिस बिलिमोरिया ने हंस कर कहा—“पर ब्याह के अवसर पर तो लाल साड़ी चाहिये न। क्यों, दादी अम्मा ?”

बुढ़िया भट्ट कह उठी—“अपने हाथ से मैं तेरी माँग में सिन्दूर भरूँगी, बेटा !”

मिस बिलिमोरिया कहना चाहती थी कि नीलकमल तुम्हारा बहुत सम्मान करता है। तुम कहोगी तो कल ही मुझ से ब्याह कर लेगा। हाँ, अब तो फ़ैसला हो ही जाना चाहिये। आज मैं नीलकमल को अपनी अवस्था से परिचित करा दूँगी। महीने-डेढ़ महीने का हिसाब तो आसानी से इधर-उधर किया जा सकता है। यदि नीलकमल इन्कार कर दे, तो मैं क्या कर सकती हूँ ? मेरी माँ भी शायद मेरी सहायता न कर सके। छोटी बहन मुझे मूर्ख समझ सकती है। शायद मैं यों ही डरती हूँ। नीलकमल खुशी से उछल भी तो सकता है। वह चाहती थी कि सोफ़े से उठ कर बुढ़िया के समीप देहलीज पर जा बैठे, और उससे कहे कि खुदा ने चाहा तो कल ही मेरा ब्याह हो जायगा। नीलकमल बाज़ार से लाल साड़ी लेता आयगा। सिन्दूर तुम दे दोगी। पर न वह अपने स्थान से उठ सकी, न मुँह से ही कुछ कह सकी। मालिन के समान बैठी अपनी भावनाओं को ब्याह के धागे में पिरोती रही। उसे विश्वास था कि नीलकमल की रगों में एक शरीफ़ घराने का रक्त बह रहा है। और थोड़ा-

सा जोर डालने पर ही वह मान जायगा। 'आज' तो अब खत्म हो रहा है। कल हमारा व्याह हो जाना चाहिये। बुढ़िया सबसे पहले बधाई देगी। नीलकमल के मित्र कितने खुश होंगे। सबसे अधिक खुशी शंकर को होगी जो अभी उस रोज़ हँस कर कह रहा था—कमल भैया, तुम्हारे व्याह पर मैं तुम्हारे सागवान के सोफे पर नया पालिश करा दूँगा। फिर देखना यह कितना सुन्दर नज़र आयगा ! जवाब में नीलकमल ने आदाव अर्ज़ करते हुए कहा था—सुन्दरता पालिश नहीं चाहती। उसे याद था कि वह हँस-हँस कर लोट-पोट हो गई थी, जब नीलकमल का कन्धा झूमोड़ते हुए कुशल कह उठा था—सच है, मियाँ मजनू ! और वह जो रतन ने कहा था—सुन्दरता और कुरूपता के बीच सदा एक अदृश्य-सी सीमारेखा मौजूद रहेगी। पर कला के स्तर तक उभरने के पश्चात् कुरूपता भी कुरूपता नहीं रहती। दीवारगीर की मूर्ति की ओर एक उचटती-सी निगाह डाल कर उसने सोचा, न जाने रतन क्या कहना चाहता था ? कल ही, हमारा व्याह हो जाय तो रतन न जाने क्या भेंट लायगा।

बुढ़िया कह रही थी—“बेटी, ऐसी सब गुण पूरी बहू तो हर सास को मिले।”

जवाब में मिस विलिमोरिया कहना चाहती थी—तुम देख लोगी, दादी अम्मा, मैं अकृतज्ञ नहीं हूँ। सुन्दरता तो केवल एक गुण है। इस दीवारगीर की मूर्ति की सुन्दरी को ही ले लो। वह सुन्दर अवश्य है, सब गुण पूरी नहीं।

प्रतिक्षण एक अच्छी बहू बनने का विचार उसके रक्त को गरमाने लगा। वह जो उस रोज़ रतन ने पद्मिनी, चित्रणी, हस्तिनी और शंखिनी का किस्सा छेड़ दिया था और स्त्री की इन चार किस्मों की चर्चा करते हुए नीलकमल कह उठा था—क्या यह सम्भव नहीं है कि पद्मिनी सुन्दरतम होने पर भी

असुन्दरतम मस्तिष्क रखती हो ? ना, बाबा, मुझे पद्मिनी नहीं चाहिये। वह बुढ़िया से कहना चाहती थी—मुझे तुम से कोई जेवर नहीं चाहिये, तुम्हारी शुभकामना ही काफी है।

बुढ़िया कहे जा रही थी—“लाल साड़ी न भी लाई जा सकी तो अकेला सिन्दूर ही बहुत है, बेटी !”

मिस विलिमोरिया ने जावव में केवल इतना ही कहा—“नील कमल चाहेगा तो मुझे सिन्दूर से माँग भराने में कोई आपत्ति न होगी। आत्माओं के मिलाप के लिए ब्याह तो जरूरी है।”

एक बार मिस विलिमोरिया का खयाल अपनी सहेलियों की ओर चला गया। हर किसी ने अपनी पसन्द का दूल्हा चुना था। मोहिनी का अन्तिम फैसला यही था कि अच्छा पति वही है जो हर रोज़ जारजट की नई साड़ी ला सके। जारजट की साड़ी ! उसे ठेस-सी लगी। क्या आत्माओं के मिलाप के लिए जारजट की साड़ियाँ बहुत ही जरूरी हैं ? दर्शी ख्याति की भूखी है। उसने एक फिल्म एक्टर से शादी कर ली। लाजी को न जारजट की साड़ियाँ चाहियें, न ख्याति। उसने शत प्रति शत पुरुष किस्म का पति चुन लिया है। मुझे भी चाहिए कि नीलकमल को हर कीमत पर खुश रखूँ। कलाकार किस्म का व्यक्ति निर्धन जरूर रहता है। पर यदि उसका चुनाव करते समय यह बात पहले से ही ध्यान में रहे तो विवाहित जीवन आराम से बीत सकता है। नीलकमल ही मेरी कठिनाइयों का अकेला हल है। सम्पूर्ण पुरुष तो मुझे कहाँ मिलेगा ? सम्पूर्ण पुरुष ! जैसे नीलकमल को सम्पूर्ण पुरुष से कुछ कम नम्बर देकर उसे परीक्षा में प्रथम रखने पर भी उसे मानसिक कष्ट हो रहा हो ! और सम्पूर्ण स्त्री ! उसकी भी केवल कल्पना ही की जा सकती है। पर जब आत्माओं का मिलाप हो जाता है तो स्त्री-पुरुष का जोड़ा दुनिया भर की खुशियाँ अनुभव करता है।

वह उठ कर खिड़की पर जा खड़ी हुई। सड़क पर बेहरकत

साये रंग रहे थे। अन्धकार में प्रति पल अपनी ओर आते हुए नील-कमल की कल्पना उसे गुदगुदाने लगी। उसे ध्यान आया कि इधर कुछ दिनों से नीलमकल एक फिल्मी कहानी लिखने के चक्कर में है। मैं लाख समझा चुकी हूँ कि यह एक चट्टान से टकर लेने वाली बात है। फिल्म वाले कहानी नहीं चाहते, चूँ चूँ का मुरब्बा चाहते हैं। वह कहता है—एक कहानी बिक जाय तो तीन चार हजार रुपया आ जायें। मैं कहती हूँ कि फिल्म कम्पनी वालों का भी एक न एक चोर दरवाजा जरूर होता होगा। फिल्मी कहानी लिखने से पहले इस दरवाजे का पता लगा लो। शायद वह इस समय उसी दरवाजे की तलाश में भटकता फिरता हो। खिड़की के बाहर जैसे अन्धकार के पर्दे पर धुँधले-धुँधले बल्बों से बनाया गया 'स्वागतम्' उभरने लगा। बड़ी तीव्रता से वह नीलकमल की फिल्मी कहानी का विश्लेषण करने लगी। सात साल तक एक काश्मीरी लड़की अपने भावी पति के लिये एक सुन्दर शाल पर 'स्वागतम्' काढ़ती रहती है और उसके डिजाइन में वह पुरातन और नवीन कला का सम्मिश्रण दिखाने में सफल हो जाती है। पर रास्ते में ही उसके भावी पति की दिल-चस्पियाँ किसी और बिन्दु पर केन्द्रित हो जाती हैं। फिर उधर से निराश हो कर वह अपनी मंगेतर के यहाँ पहुँचता है। वह बराबर निष्कपट रूप से उसकी वाट जोहती रही थी। पर 'स्वागतम्' भेंट करते समय उसके हाथ काँपते हैं। और उसकी भयभीत आत्मा डूबने लगती है। प्रति क्षण उसके जीवन में वह विप फैलने लगता है, जिससे वह अब तक बची हुई थी। पति को इस वातावरण में सदा यही अनुभव होता है कि वह अपनी पत्नी के अयोग्य है और जो वस्तु वह 'स्वागतम्' के उत्तर में भेंट कर सकता है, उसे तो वह रास्ते ही में खो आया है। वह नीलकमल के सम्मुख इस दुःखान्त की बहुत प्रशंसा कर चुकी

थी। भले ही उसे यह विश्वास था कि कोई कम्पनी इस कहानी को फिल्माना स्वीकार न करेगी।

बुढ़िया न जाने क्या सोच कर बोली—“बेटी, ब्रह्मा खुश हो तो अच्छा पति मिलता है।”

मिस बिलिमोरिया ने बेदिली से भी हुंकारा भरने की आवश्यकता न समझी। उसे भय था कि बुढ़िया कोई पिटा-पिटाया किस्सा न शुरू कर दे। उसकी मानसिक अवस्था उड़ने के लिये उत्सुक अवाबील की सी थी, जिसे बार-बार ध्यान आ रहा हो कि उड़ने से पहले अपनी मंजिल का फैसला कर लेना चाहिये। वह कहना चाहती थी कि वह नीलकमल के योग्य है और नीलकमल उसके योग्य है। फैसले बार-बार नहीं किये जाते। उसे याद आया कि अभी अगले ही रोज नीलकमल कह रहा था—स्त्री को चाहिये कि ईर्ष्या को चीन की दीवार के समान रास्ता रोकने का अवसर न दे।

फिर उसे ध्यान आया कि बुढ़िया की पीठ पर जोर से एक ठोकर जमा कर कहे—दूर हो जा यहां से, बुढ़िया चुड़ैल ! बड़ी आई है मेरी सास, ऊँह ! मैं किसी सास को नहीं पहचानती। उसने विषभरी निगाहों से बुढ़िया की ओर देखा और देर तक दाँतों से नाखून नोचती रही। वह हमेशा के लिए इस परेशानी का हल ढूँढ लेना चाहती थी। बुढ़िया खामोश थी जैसे कोई मिटती हुई परम्परा अतीत के खंडहरों के नीचे सदा की नींद सोने का बहाना न पा कर अफसोस कर रही हो। नीलकमल से कह कर यह घर बदलना होगा। हम अपने यौवन पर इस चुड़ैल का प्रतिबिम्ब क्यों पड़ने दें ?

उसे घुटन-सी अनुभव हो रही थी। अनजाने ही उसका क्रोध नीलकमल की बजाय बुढ़िया की ओर परिवर्तित होता चला गया। उसे ध्यान आया कि अगले ही रोज नीलकमल कह रहा

था—मिस बिलिमोरिया, क्रोध को सदा के लिये थूक दो। और नीलकमल ने यह भी तो कहा था—मिस बिलिमोरिया, तुम एकदम अतिवादिनी स्त्री हो। जीवन सदा किसी एक ही धारा में बहने वालों को सजा देता है। न अत्यन्त घृणा अच्छी है, न अत्यन्त लाचारी। न अत्यन्त क्रोध अच्छा है, न दया। न बदले की भावना, न सेवा। न लगाव, न उपेक्षा, न सम्मान, न अपमान। इन में से किसी को भी हमारे अनुभव के चारों तरफ तेज़ी से घूमने की आज्ञा न होनी चाहिए। उसी अवस्था में संभव है कि हमारी रगों में रक्त हमेशा समान गति से बहता रहे। उसी अवस्था में वह शान्ति संभव है जिसकी तलाश कलाकार को व्याकुल किये रहती है। उसने सोचा कि काश नीलकमल बाहर से भट जाय और हम प्रदर्शिनी खरम होने से पहले वहाँ पहुँच जायँ। आइने के सामने खड़ी हो कर वह फिर से बाल ठीक करने लगी। वह जैसे आइने से भी कहने जा रही हो—अब तो कमल को आ ही जाना चाहिये।

बुढ़िया बड़बड़ा रही थी—“बेटी, मैं नीलकमल से कहूँगी कि पिछले जन्म में कोई सौ-सौ मोती दान करे तो सब गुन पूरी बहू मिलती है।”

मिस बिलिमोरिया ने फ़ैमला कर लिया कि वह बुढ़िया की किसी बात का उत्तर न देगी। क्रोध की लहर के नीचे यह विचार भी दब गया कि वह आइने के सामने खड़ी-खड़ी बेकार वालों में कंधी करती चली जाय। वह फिर सोफ़े पर आ बैठी।

अब वह नीलकमल के मुख से सुने हुए इस विचार का विश्लेषण करने लगी कि कल्पना का सौन्दर्य सुन्दरियों के सौन्दर्य की अपेक्षा अधिक चमत्कारपूर्ण होता है। फिर उसे खयाल आया कि बुढ़िया तो जवानी के साथ कल्पना का सब सौन्दर्य भी लुटा चुकी है। ले-दे कर उसका मस्तिष्क पिटीपिटार्ई

परम्पराओं के गिर्द ही घूम सकता है। इसे कब कल्पना का सौन्दर्य कहा जा सकता है? मेरी कल्पना का सौन्दर्य तो बहुत ऊँचा है। और यों भी तो मैं एक सुन्दरी हूँ। सुन्दरी! जैसे किसी ने उसे चौंका दिया हो। भट संभल कर वह सोचने लगी कि नीलकमल के सम्मुख केवल सौन्दर्य ही सबसे बड़ा जीवन-मूल्य नहीं है। वह जानता है कि मैं उसकी प्रतिभा के विकास में हाथ बटा सकती हूँ, उसके रचनात्मक कार्य में बराबर की संगिनी बन सकती हूँ। मेरे पैर बतायेंगे कि गायक ठीक 'गत' बजा रहा है या नहीं। मुझ में इतनी योग्यता अवश्य है कि मैं नृत्य को चरम सीमा तक ले जा सकूँ।

बुढ़िया फिर बोली—“बेटी, जब व्याह होता है तो स्वर्ग के देवता आनन्द से फूले नहीं समाते।”

मिस बिलिमोरिया ने कुछ उत्तर न दिया। उसे ध्यान आया कि अभी पिछले ही राज नीलकमल कह रहा था—सौन्दर्य एक निश्चित वस्तु है, नकारात्मक कदापि नहीं। उसने बड़े ध्यान से बुढ़िया की ओर देखा। वह उससे कहना चाहती थी—अपनी बेसुरी बातों को बन्द भी करोगी या नहीं।

सहसा नीचे जीने से तेज-तेज उठते हुए कदमों की आवाज़ आने लगी, और बुढ़िया संभल कर बैठ गई। मिस बिलिमोरिया बराबर के सोफे पर जम कर बैठ गई। उस समय उसकी निगाहें न दीवार पर रखी हुई मूर्ति की ओर उठ सकती थीं, न सूली पर चढ़े ईसा के चित्र की ओर। वह दरवाजे की ओर देख रही थी।

नीलकमल ने अन्दर आते ही नीले कागज़ में लिपटी हुई कोई चीज़ परे रखते हुए मिस बिलिमोरिया की ओर बाहें फैला दीं। मिस बिलिमोरिया ने न उसके हाथ भटके, न यही

स्पष्ट होने दिया कि वह कितनी तीव्रता से उसकी प्रतीक्षा में बैठी रही थी। वह खिलखिला कर हँस पड़ी। बोली—“तुम्हें कुछ याद नहीं रहता, तुम कलाकार हो न कमल।”

बुढ़िया कह उठी—“आज व्याह का फैसला कर लो, बेटा ! कल व्याह कर लो।”

नीलकमल और मिस बिलिमोरिया हँसी-ठट्टों में खो गये। मिस बिलिमोरिया चाहती थी कि बुढ़िया और आगे बढ़ जाय। वह नीलकमल से अपने दिल की बात साफ़-साफ़ कह देना चाहती थी। पर जैसे छींक आते-आते रुक जाय, वह चुप की चुप रह गई।

नीलकमल बराबर हँस रहा था। मिस बिलिमोरिया शरमा कर बोली—“हाँ, हाँ, आज फैसला कर लो, कल व्याह हो जाय। दादी अम्मा सच ही तो कहती है।”

नीलकमल की हँसी एक झटके के साथ रुक गई। उसके चेहरे पर एक रंग आ रहा था, एक रंग जा रहा था।

गीले उपलों के कसैले धुँए के समान आनेवाले बालक का विचार मिस बिलिमोरिया के मन पर पहले से कहीं ज्यादा गहरा हो गया। दीवारगीर की मूर्ति पर उसने एक उचटती-सी निगाह डाली। उसे ध्यान आया कि यह मूर्ति कमरे के सौन्दर्य में विशेष वृद्धि कर रही है। पर आज वह अपनी चिन्ता नीलकमल के सम्मुख स्पष्ट कर देना चाहती थी। और असमंजस का यह हाल था कि मन की बात ओठों तक पहुँच कर खामोशी की गहराइयों में खो जाती थी।

नीले काराज को अलग करते हुए एक मूर्ति निकालकर नीलकमल ने दीवारगीर पर पहली मूर्ति से कुछ फासले पर रख दी। मिस बिलिमोरिया ने उधर ध्यान न दिया। वह कह उठा—“इधर देखो मिस बिलिमोरिया, इधर देखो। यह

एक हन्डिशन की मूर्ति थी जिसे पीतल में ढाल कर एक विशेष क्रिया की सहायता से चाकलेट का रंग दे दिया गया है।”

मिस बिलिमोरिया ने नई मूर्ति पर नजरें गाड़ दीं। बोली—
“यह सूजे हुए मोटे-मोटे ओंठ। ऊँह ! यह पकौड़ा-मी नाक। बाल तो जैसे सूखी हुई घाम। भद्दी बेडौल गर्दन। दायें बाजू के मुक्काविले में बुरी तरह ऊपर को उठा हुआ बायाँ बाजू। छाती ऐसी जैसे फोड़े उभर रहे हों।”

नीलकमल मिस बिलिमोरिया की बात पर बुरी तरह झुंझलाया। वह चाहता था कि भट्ट उसे एक फटकार बता कर कहे—चुप-चुप, इस ज़िन्दगी में तो तुम्हें कला को परखने की तमीज़ प्राप्त नहीं हो सकती। पर उसने खामोश रहना ही मुनासिब समझा।

पहली मूर्ति की ओर उँगली उठा कर मिस बिलिमोरिया कह उठी—“मालूम है नीलकमल, इस सुन्दरी की तरह मैं भी तुम्हें तुम्हारा प्रतिरूप भेंट करने जा रही हूँ। हाँ, तो अब हमें दुनिया के सामने पति-पत्नी के रूप में खड़े हो जाना चाहिए।”

नीलकमल ने नई मूर्ति को नये अन्दाज़ से दीवारगीर के एक सिरे पर रखते हुए कहा—“पर इसकी क्या आवश्यकता है ? तुम और हन्डिशन, जीवन और कला, कुरूपता और सुन्दरता—इनमें बहुत विषमता है। कला में कुरूपता भी सुन्दरता में बदल जाती है। पर जीवन तो जीवन है। नहीं, मिस बिलिमोरिया नहीं.....”

बुढ़िया देहलीज़ पर गठरी बनी पड़ी थी। मिस बिलिमोरिया ने दोनों मूर्तियों की ओर देखते हुए सूली पर चढ़े हुए ईसा की तरफ़ आँखें घुमाई और बिना कुछ कहे-सुने बिजली की तरह लपक कर कमरे से बाहर निकल गई।

सूइयां चलती रहीं

विक्टोरिया में बैठते ही उसने मुँह में सिगरेट लगा लिया। जेब से दियासलाई निकाली। उसके हाथ काँप रहे थे। न जाने क्या सोचकर बिना सुलगाये ही सिगरेट जेब में रख लिया। वह उड़कर हस्पताल पहुँच जाना चाहता था। इन घोड़ा-गाड़ियों से उसे हमेशा चिढ़-सी थी। पर वह मजबूर था। पेट्रोल न मिलने के कारण मोटर का मिलना कठिन था। उसने फिर सिगरेट निकाला और सुलगाकर कश लगाने लगा।

शाम के बढ़ते हुये सायों में विक्टोरिया रेंग रही थी। फुट-पाथ पर तेज़-तेज़ चलते हुए लोग शायद इन सायों को पीछे छोड़ जाना चाहते थे। उसे फिर विक्टोरिया पर क्रोध आने लगा। यह बूढ़ा कोचवान, यह मरियल घोड़ा ! ये शायद मुझे तंग करने के लिए ही जीवित हैं। उसके मन को धचका-सा लगा। रूप का मुखड़ा उसकी आँखों में फिर गया। काश ! वह आज छुट्टी ले सका होता और वह हस्पताल में रूप के सिरहाने उपस्थित रह सकता। रूप की माँ समझदार है। पर आखिर स्त्री

है। घबरा रही होगी। रूप को कितना संभाल कर रखा जाता है। न जाने कैसे उसे निमोनिया हो गया। खिड़की से भाँक कर उसने एक भिखारिन को ध्यान से देखा जो विलखते हुए बालक को अपना स्तन दे रही थी जिसमें अब दूध नहीं रह गया था। उसे ध्यान आया कि पिता के प्रेम का अपना रंग है, अपना अन्दाज। फिर जैसे उसकी आत्मा के किसी कोने से कोई कह उठा—अरे सामूहिक दुःख के सामने व्यक्तिगत दुःख की हैसियत ही क्या है? वह जोर-जोर से सिगरेट के कश लगाने लगा। जैसे उदासी से छुटकारा पाने का बस यही इलाज रह गया हो।

वह कोचवान से पूछना चाहता था कि उसके कितने बच्चे हैं। पर यह सोचकर कि यदि वह यह कह दे—मेरे छः बच्चे हैं, हुज़ूर! या छः नहीं तो सात, तो इससे क्या सिद्ध होगा? उसने केवल यही कहकर सन्तोष किया—

“जल्दी चलो, मुझे देर हो रही है।”

मरियल घोड़े की पीठ पर चाबुक बरसाने लगा। वृद्धी आवाज में कोचवान न जाने क्या-क्या कहता चला जा रहा था। वह कोचवान से कहना चाहता था—आज तो विक्टोरिया को मोटर बना कर दिखा दो। रूप मेरा बेटा बीमार है। मुझे जल्दी हस्पताल पहुँचा दो। उसे ध्यान आया कि विज्ञान तो विजली की तेज़ी में उन्नति कर रहा है। नये-नये आविष्कार सामने आ रहे हैं। क्या विज्ञान रूप को नहीं बचा सकता? नये सिगरेट को हाथ में मसलते हुए वह घोड़े के कदमों की टाप में खो गया।

सहसा चौंक कर उसने इधर-उधर देखा। जैसे कोई कह उठा हो—निमोनिया के तो नये-नये इलाज निकल आये हैं। मानसून की ठंडी हवा उसके शरीर में कँपकँपी-सी पैदा कर रही थी। उसे ध्यान आया कि वह समय दूर नहीं जब विक्टोरिया की कोई आवश्यकता ही न रह जायगी। पेट्रोल इतना आम हो जायगा कि

इतने ही पैसों में टैक्सी मिल जाया करेगी। उसने फैसला किया कि वह हस्पताल पहुँचकर अपनी पत्नी से कहेगा—सभ्यता सदा विज्ञान की ऋणी रहेगी रूप की माँ! आधुनिक साधनों के कारण तो संसार के सुदूर देश एक ही नगर के बाजार मालूम होते हैं। रूप ज़रा पढ़-लिख जाय। उसे लेकर हम देश-देश की सैर करेंगे।

कोचवान घोड़े को पुचका रहा था—

“सेठ को खुश कर दो, वेटा! इनाम मिलेगा।”

वह चाहता था कि कोचवान की ज़बान नोच कर कहे—चुप रह, सेठ के बच्चे! दुनिया कहाँ से कहाँ निकल गई। तू अभी तक किसी बीती हुई शताब्दी में ही साँस ले रहा है। यदि तेरी विकटोरिया इसी चींटी की चाल से चलती रही तो उसे एक दिन कोई धेले को भी नहीं पूछेगा। सहसा हस्पताल की घड़ी उसके मन में कुछ ऐसे भयानक अन्दाज़ में उभरने लगी कि वह पीठ से टेक हटा कर बैठ गया। घड़ी की सूइयाँ तेज़ी से दौड़ रही थीं, जैसे वह किसी बिन्दु की तलाश में हो! एकदम उसके वदन में झुरझरी-सी दौड़ गई। ये सूइयाँ रूप का वाल भी बाँका नहीं कर सकती। उसने अपने मस्तिष्क को दिलासा दिया। अपनी घुड़-दौड़ में दोनों सूइयाँ हर बार उस अपशकुन वाले बिन्दु से भटकती चली जायँगी। अपशकुन वाला बिन्दु! उसे अपने मन में बचे-बुचे अन्ध-विश्वाम से चिढ़-सी अनुभव हुई। एक बार फिर वह घोड़े के कदमों की टाप में खो गया।

जब वह अपनी पत्नी से कहेगा कि वह दफ़्तर से चल कर सीधा हस्पताल पहुँचा है तो वह बिलकुल विश्वाम नहीं करेगी। कहेगी—कहीं बैठे चाय पीते रहे होंगे। वह चाहता था कि विकटोरिया से छलाँग लगा दे और ऐसी दौड़ लगाये कि कुछ ही सैकंडों में हस्पताल जा पहुँचे। पर वह बड़े संयम और धैर्य

से विक्टोरिया में बैठा रहा। उसने कोचवान से कुछ कहने की आवश्यकता न समझी। सड़क से आती हुई आवाजें उनके मस्तिष्क पर हथौड़े चला रही थीं। एक मोटर का हार्न कुछ इस तरह हवा में उड़ला, जैसे कह रहा हो—अब कोई संकट नहीं। खिड़की से सिर निकाल कर उसने मोटर की ओर देखा जो तेजी से भागी जा रही थी। उसे खयाल आया कि वह तो यों ही घबरा रहा है। अब तक रूप की वही अवस्था थोड़े हो होगी। निमोनिया तो क्या, इस हस्पताल में तो इससे भी बड़ी बीमारियों का इलाज हो जाता है। और इस खुशी में वह अपना सिगरेट सुलगा कर गहरे कश लगाने लगा।

वह वातावरण में घुली हुई आवाजों का विश्लेषण करने लगा। कोई आवाज खुशबू का अन्दाज लिये हुए है तो कोई मानो पकती हुई भींगा मछली की बदबू। कोई आवाज 'हाँ' और 'नहीं' का सम्मिश्रण है, तो कोई चालू और खलास के बीच की सीमा-रेखा। चालू और खलास—ये दो शब्द उसकी आत्मा की गहराइयों में गूँज उठे। जैसे किसी ने यह नारा लगा दिया हो—चालू जिन्दावाद। हाँ भाई, जिन्दगी चालू है। जिन्दगी हमेशा चालू रहेगी। चालू जिन्दावाद का अर्थ है विज्ञान जिन्दावाद। क्योंकि विज्ञान के सहारे ही जिन्दगी चालू रहेगी। उसके जी में तो आया कि खलास मुर्दावाद का नारा लगाये। फिर जैसे किसी ने उसके कान के पास मुँह ले जाकर पूछा—क्या खलास मुर्दावाद का मतलब विज्ञान मुर्दावाद नहीं हो सकता? क्योंकि विज्ञान की सहायता से ही युद्ध में लाखों निहत्थे मनुष्यों पर मृत्यु की आग बरसाई जा चुकी है। भट उसने इसका उत्तर सोच लिया। निर्माण के लिए संहार आवश्यक है। जीवन चालू रहेगा। इस समय वह हस्पताल में होता तो अपनी पत्नी को समझाता कि संसार चालू रहेगा। वह मुस्करा

कर अपने बेटे पर झुक जाती और मचल-मचल कर कहती—
रूप, मेरा रूप ! पास से वह कह उठता—आज विज्ञान जीवन
पर मुस्कराहटें बिखेर रहा है, रूप की माँ !

बूढ़ा कोचवान मरियल घोड़े को पुचकार रहा था—

“चलो, बेटा—दौड़ कर दिखा दो । इनाम मिलेगा ।”

विक्टोरिया की चाल तेज हो गई । वह चाहता था कि
कोचवान से कह दे—मियाँ, तुम्हारा इनाम खरा है । पर हो सके
इसे और भी तेज चलाओ । रूप के वच जाने की खुशी में तो
सारा धन लुटाया जा सकता है । रूप ने दस बरस के बंजर
जीवन के पश्चान् आ कर सहसा हमारे सपने संवार दिये हैं ।
अब यह कैसे हो सकता है कि रूप को हम से छीन लिया जाय ।
उसने अपनी कलाई पर बँधी वाटर प्रूफ घड़ी की ओर ध्यान से
देखा । स्टेनलेस स्टील के बने हुए फ्रेम पर कभी दाग नहीं पड़
सकता, उसने सोचा, इसकी चमक चालू रहेगी । इसके विपरीत
सोचना विज्ञान का अपमान है ।

जब रूप को हस्पताल ले जाया जा रहा था तो उसकी पत्नी
ने कृष्ण जी का चित्र उतार कर अपने पास रख लिया था । उस
समय उसे इसके विरुद्ध कुछ कहना अनुचित प्रतीत होता था ।
कोई और समय होता तो निश्चय ही वह उस से झड़प लेने को
तैयार हो जाता । वह यहाँ तक कह देता—तुम विचित्र स्त्री हो ।
एक ओर यह कहती हो कि हम रूप को अँगरेजी शिक्षा दिला-
येंगे । और वह बड़ा होकर किसी कालेज में अँगरेजी पढ़ायगा ।
दूसरी ओर तुम यह समझती हो कि रूप कृष्ण जी को देन है ।
यदि यह अन्ध-विश्वास इसी तरह स्थिर रहा तो हम इकट्ठे नहीं
रह सकते । यह विज्ञान का युग है । बुद्धि के विरुद्ध मूर्खता
के लिए अब किसी को क्षमा नहीं किया जा सकता । कृष्ण जी के
चित्र से चाँदी के रुपये का स्पर्श करते हुए रूप के माथे से इसका

स्पर्श कराना और फिर इसे घर के पुरोहित के हाथों में पकड़ा देना और यह सोचना कि इस दान-पुण्य से रूप स्वस्थ हो जायगा, आखिर इससे यही स्पष्ट होता है न कि बुद्धि का दिवाला निकल चुका है ?

मेरे घर में कभी इसकी आज्ञा नहीं दी जा सकती। वह चाहता था कि बूढ़े कोचवान से पूछे—कहो बाबा, क्या तुम्हारी पत्नी का भी यही खयाल है कि उसे हर बालक कृष्णजी ने दिया है ? फिर यह सोच कर कि शायद बूढ़े की बुढ़िया कृष्णजी की वजाय गणेशजी की भगतिन हो, उसे ध्यान आया कि आज तो प्रकृति पर विज्ञान का साम्राज्य स्थापित हो रहा है। भला कब तक ये टोने-टोटके चलते रहेंगे ? वह चाहता था कि कोचवान को भंभोड़ कर कहे—तुम घर जाकर बुढ़िया को समझाना, बाबा। सड़क पर बिजली के दल्ब रोशन हो उठे थे। ऊँचे भवन सिर उठाये खड़े थे। पुटपाथ पर लोग आ जा रहे थे। उसे ध्यान आया कि किसी को क्या चिन्ता है कि मेरा बेटा किस हाल में है। यहाँ किसे इतनी कुरसत है कि मुझसे परिचित होने का कष्ट उठाये। कौन जाने यह कोचवान भी दुःखी है या सुखी। मैंने पूछा ही नहीं। शायद वह भी जीवन और मृत्यु के बीच लटका हुआ है। अब मैं उसे कैसे समझाऊँ कि हर किसी का दुःख दर्द दूर होकर रहेगा। सिगरेट का कश लगाते हुए उसने कहा—

“एक चवन्नी और मिलेगी। घाँड़ को तेज़ चलाओ, बाबा ! हस्पताल में मेरा बेटा बीमार है।”

“क्या बीमारी है, सेठ साहब ?” कोचवान ने खाँसकर गला साफ करते हुए कहा। झट घोंड़ की वाग खींची और उसकी पीठ पर चाबुक जमा दिया।

वह कोचवान से कहना चाहता था कि अब कभी मुझे सेठ

कह कर न पुकारना। उसकी अवस्था उस बुढ़िया की सी थी जिसने हुलास की चुटकी नथने में रख ली हो और चाहती हो कि उसका सिर हलका हो जाय। पर उच्चता की भावना कुछ इस प्रकार उसकी आत्मा से चिपक गई थी कि वह यत्न करने पर भी इससे छुटकारा न पा सका।

कोचवान न जाने क्या बड़बड़ाने लगा। जैसे किसी लड़के की याद में खो गया हो और अब अपने भाग्य को कोस रहा हो। उसका लड़का बड़ा हो कर उसकी तरह विक्टोरिया ही चला सकता था। शायद वह कहना चाहता था—ये सब भाग्य के खेल हैं। मेरा चेतुआ आज जीवित होता तो आप इसी विक्टोरिया में बैठ कर अपनी खुशी में चवन्नी की बजाय अठन्नी इनाम देते। ऊपर से वह कहे जा रहा था—

“हैजा बुरी बला है—हस्पताल में भी इसका इलाज कठिन है। हैजा का कोई इलाज नहीं।”

कोचवान के दिल में दबी हुई आग भड़क उठी थी। किसी सवारी ने अपने लड़के का दुःख उसके सामने प्रकट नहीं किया था। वह सोच रहा था कि लड़के सब के एक समान होते हैं। वह बोला—

“बेटे को क्या रोग है, सेठ साहब ?”

अमृत ने सिगरेट की राख गिराते हुए सहानुभूतिपूर्ण स्वर में कहा—

“निमोनिया है, बाबा ! आदमी के फेफड़ों पर बर्फ ही तो जम जाती है।”

पर कोचवान के विचार में तो हैजा ही सबसे बड़ी बीमारी थी। बोला—

“हाँ जी, पर हैजे का इलाज नहीं। मेरा चेतुआ—”

इसके आगे कोचवान कुछ न बोल सका, और वह घोड़े को

बेटा बेटा कह कर पुचकारने लगा ।

एक क्षण के लिये अमृत को ध्यान आया कि शायद कोचवान सिरे से भूठ बक रहा है । यह सब इसलिये कि इसे चवन्नी की बजाय अठन्नी इनाम में मिल जाय । वह कहना चाहता था— अपनी कहानी बन्द करो, बाबा, मैं कुछ नहीं सुनना चाहता । मैं सब समझता हूँ । सच का गला घोट कर भूठ जीवित रहना चाहता है । विज्ञान इसकी आज्ञा नहीं दे सकता । उसने ज़रा गर्म हो कर कहा—

“घोड़े को तेज़ चलाओ, बाबा !”

चावुक का निर्दय कुण्डल हवा में लहरा कर घोड़े की पीठ पर आ रुका । घोड़े के कदमों की टाप और विक्टोरिया के पहियों की चीख तीव्र से तीव्रतर होती गई । घोड़ा भाग-भाग कर जान हलकान करने लगा । जैसे वह सब समझता हो कि इनाम की चवन्नी के लिए दौड़ना कितना ज़रूरी है । चवन्नी तो मिलनी ही चाहिये ।

यह विक्टोरिया कोई खास बुरी नहीं अमृत ने सोचा, यदि यह इसी रफ्तार से चलती रही तो बहुत जल्द हस्पताल पहुँच जायगी । पर थोड़ी दूर चल कर घोड़ा फिर धीमा पड़ गया । वह चाहता था कि कोचवान को डाँट कर कहे—चवन्नी मुफ्त नहीं मिला करती, बाबा ! फिर स्वयं ही यह सोच कर कि चवन्नी का मूल्य ही आजकल इकन्नी रह गया है, वह चुप बैठ रहा ।

कोचवान ने चुप्पी को तोड़ते हुए कहा—

“यदि पैसे होते तो हम डाक्टर को दिखाते, सेठ साहब, पर हैजे का इलाज नहीं । मैं कहता हूँ चेतुआ न मरता, मैं मर जाता !”

अमृत चाहता था कि कोचवान से कहे—हर कोई बाबर नहीं

बन सकता । पर न जाने क्या सोच कर वह त्रिजली के खंभे गिनने लगा । जैसे अपने बेटे के साँस गिन रहा हो । उसे ध्यान आया जैसे हर खम्भों के अन्तर के समान उसके बेटे के साँस समान अन्तर के पश्चात् चल रहे हों ।

कोचवान न जाने क्या सोच कर बोला—

“जंग में तो हजारों, लाखों सिपाही मर गये होंगे, सेठ साहब ।”

ऐसा ही होता है, बाबा !”

फिर वह सोचने लगा कि इतने बड़े दुःख के सामने किसी आदमी की मुसीबत क्या महत्व रखती है । युद्ध में तो देश के देश नष्ट हो गये, जातियाँ वरबाद हो गई । युद्ध समाप्त हो गया । पर भूख का युद्ध तो अभी लड़ा जायगा ।

कोचवान कहे जा रहा था—

“चेतुआ की माँ तो उसके दुःख में पागल हो गई, सेठ साहब ! मैं कहता हूँ कि वह भी मर जाय तो मुझे छुटकारा मिल जाय । पर दुनिया में आसानी से छुटकारा नहीं मिलना ।”

अमृत को यह बात बेटुकी मालूम हुई । उँगलियों से बालों में कंघी करने हुए उसने सड़क के किनारे चलते हुए लोगों को घूर कर देखा । ये सब छुटकारे की तलाश में ही तो कहीं जा रहे हैं । सहसा उसके दिमाग में यह विचार पैदा हुआ कि यदि मिनिटों में सैकड़ों मनुष्यों को नष्ट किया जा सकता है तो क्या घंटों में एक बालक को नहीं बचाया जा सकता ? उसने स्वयं ही इसका उत्तर खोज लिया—जरूर बचाया जा सकता है । रूप बच जायगा । रूप—मेरा बेटा, जो दस बरस के बंजर जीवन के पश्चात् हमारे सपनों को संवारने के लिए आ निकला है ।

कोचवान कह रहा था—

सेठ साहब ! मेरी पत्नी अब पागल हो गई है। उसने मुझे बरबाद कर डाला। मैं कहता हूँ किसी की मौत उसे आ जाय। उसका पागलपन समाप्त न हुआ तो मैं तंग आ कर उसका गला घोट डालूँगा, चाहे मुझे फाँसी ही हो जाय।”

अमृत दुःख और वेदना में डूबा जा रहा था। कोचवान के अन्तिम वाक्य ने उसे चौंका दिया। कोई और समय होता तो वह दबदबे और क्रोध से काम लेता। उसका मन हस्पताल की ओर घूम गया, जहाँ घड़ी की सूइयाँ बराबर अपनी गति में घूम रही थीं। वह डर गया। क्या ये सूइयाँ निश्चित बिन्दु पर पहुँचकर रुक जायँगी ? क्या उस समय रूप का जीवन समाप्त हो जायगा ? उसका दिल धकधक करने लगा। एक क्षण के लिये जैसे भविष्य उसकी आँखों में फिर गया हो। जैसे रूप सचमुच मर गया हो और रूप की माँ पागल हो गई हो। जैसे उसके भगड़े टंटे से तंग आ कर उसने उसका गला घोट डाला हो ! और अब वह फाँसी पर चढ़ने जा रहा हो ! उसने चौंक कर इधर-उधर देखा। और यह सोच कर कि यह सब उस कोचवान का कसूर है, उसने निश्चय कर लिया कि अब वह उसको अपनी कहानी सुनाने का अवसर न देगा।

कोचवान कहे जा रहा था—

“दौड़ कर दिग्या दो, बेटा। सेठ साहब भी क्या याद करेंगे ! उनका बेटा बीमार है। इनाम मिलेगा। अठन्नी भी दे सकते हैं। ऐसे दौड़ो बेटा जैसे जंगल में हिरन दौड़ता है।”

अमृत, जो एक क्षण पहले कोचवान से सम्बन्ध तोड़ने की बात मोच रहा था, अब फिर उसकी ओर आकर्षित हो गया। उसने फैसला किया कि वह उसकी हर बात में दिलचस्पी लेगा। आखिर सब इन्मान भाई-भाई ही तो हैं। विज्ञान के नये-नये आविष्कारों से लाभ उठाने के लिए तो और भी आवश्यक है

कि सब इन्सान आजकल एक-दूसरे के समीप चले आयें। पर बहुत यत्न करने पर भी वह कुछ न कह सका। उस समय वह इतना भी तो न कह सका कि वह खुश है और फिर कभी अवसर मिलने पर वह इसी विक्टोरिया में बैठना पसन्द करेगा। उसे ध्यान आया कि सभ्यता ने खूब प्रगति की है। सड़क के साथ-साथ ऊँचे भवन इसी सभ्यता के प्रतीक हैं। पर भट्ट यह सोच कर कि कोचवान को तो किसी मकान का कोई गन्दा-सा कोना ही रहने को मिला होगा, उसे इस सभ्यता पर क्रोध आने लगा।

पार्स के रेस्टो-रों में पश्चिमी संगीत के स्वर सुनाई दे रहे थे। अमृत चाहता था कि कोचवान से पूछे—क्या कोई मन-मोहक गान सुनते हुए तुम्हें यों माहसून नहीं होता, बाबा, कि सारे घावों पर किसी ने मरहम लगा दिया है। एक पुराना फिल्मी गाना—‘आग खा, अंगारे खा। भूखें ! गगन के तारे खा !’ उसके मन में गुँज उठा। और वह सोचने लगा कि इस पश्चिमी गाने से तो वह गाना सचमुच कितना ऊँचा है !

नारियल के पेड़ उसे दूर से बहुत सुन्दर मालूम होते थे। भले ही उसका यह स्वप्न कि उसका घर कहीं ऊँचे-ऊँचे पेड़ों के अंचल में स्थित हो, अभी तक पूरा होता नज़र न आता था। वह किराये के फ्लैट से तंग आ गया था। यह बात उसे सब से असहनीय थी कि एक ही मकान में पूरे चिड़ियाघर का नक्शा नज़र आ रहा हो—न एक भाषा, न एक पोशाक ! हर कोई अपनी ही बोली बोल रहा है। वह कोचवान से कहना चाहता था कि यदि कभी उसे अपना स्वप्न पूरा होता नज़र आया तो वह सब से पहले उसे सूचना देगा। और यदि वह चाहे तो उसके लिये भी अपने मकान के पीछे दो-एक कमरे बनवा देगा। समुद्र के किनारे नारियल के ऊँचे पेड़ों के अंचल में से समुद्री

क्षितिज पर छाया हुआ धुँधलका देखकर उसे कितनी खुशी हुआ करेगी। वह कोचवान से कहना चाहता था कि ऐसे में उसकी पत्नी का पागलपन भी दूर हो जायगा। पर वह इस मोच में खो गया कि आदमी पागल क्यों हो जाता है। 'आग खा, अंगारे खा, भूखे ! गगन के तारे खा !'—यह भी किसी पागल की ही आवाज़ है। भूखा आदमी गगन के तारे कैसे खा सकता है ? पेट में कुछ न पड़े तो तारे भी सुन्दर नहीं लगते। सभ्यता ने प्रगति की है। क्या खाक प्रगति की है ? आज भी लाखों मनुष्य रात को बिना खाये सो जाते हैं। आज भी विमारी पर विमारी हमला करती नज़र आती है। आज भी मृत्यु शिकार पर शिकार खेले जाती है।

कोचवान थोड़े को पुचकार रहा था—

“तुम मेरे दुःख के साथी हो, बेटा ! तुम चाहो तो मैं तुम्हें भी खिला सकता हूँ....पंछी बावरा चाँद से प्रीत लगाय...अब चेतुआ कभी वापस नहीं आयगा। उसके जाने के बाद हम दोनों उदास हैं।”

अमृत चाहता था कि कोचवान से कहे—तुम्हारे दुःख में मैं भी दुखी हूँ, बाबा। पर इसका क्या इलाज कि पंछी बावरा चाँद से प्रीत लगाता है। उसे याद आया कि नारियल के वृक्षों के पीछे से पूर्णिमा का चाँद देखकर वह कितना खुश हो जाता है। उस समय जीवन उदास नहीं रहता। पर यह विचार आते ही कि उनके पास केवल दो कमरे हैं और एक किचन, वह उदास हो गया। उसकी पत्नी सदा शिकायत किया करती कि यह घर नहीं कारागार है, भले ही वह कभी-कभी उसे अपने साथ समुद्र के किनारे सैर कराने ले जाता था। समुद्र की लहरों को देख कर रूप उछल पड़ता और एक चमत्कार-सा स्थापित हो जाता। पर उसकी पत्नी आगे बढ़ कर यह चमत्कार तोड़ देती।

बार-बार दोहराई हुई बातें कि मुझे यह चीज चाहिये, मुझे वह चीज चाहिये। पहले वह वचन दे देता था पर अब कोई भी वायदा करते उसे संकोच होता। उसे सदा यह अनुभव होता कि सभ्यता की प्रगति मनुष्य के लिए कुछ कम महंगा सौदा नहीं है। जीवन के मानदण्ड को ऊँचे से ऊँचा करने का विचार बढ़ता जा रहा है। पति-पत्नी के बीच भी व्यापारिक भावना काम कर रही है। पत्नी की माँगें कभी समाप्त ही नहीं होतीं। पति को एक मुस्कान चाहिये। पर बिना मूल्य मुस्कान घर में भी कहाँ मिलती है ?

उसे खुजली के सताये हुए उस कुत्ते का ध्यान आ गया, जो उसके पड़ोस में अजब अन्दाज से सिर हिला कर भौंकता था। उसे ऐसा अनुभव हुआ कि उसका अपना जीवन भी धीरे-धीरे स्थाई खुजली का शिकार-सा हो रहा है। वह कोचवान से पूछना चाहता था कि इस खुजली से कब छुटकारा मिलेगा। खुजली के बीमार कुत्ते से कौन प्यार करना पसन्द करेगा ? इस विचार से उसे झटका-सा लगा। फिर कहा जाता है कि सारे संसार का दर्द हमारे दिल में है। ऊँह ! हमारा अपना दर्द कौन सा कम है ?

अचानक उसे उस गुजरातिन का चेहरा, जो अजन्ता की स्त्री की याद ताज़ा कर जाता था, सड़क के फेले हुए अन्धकार में से उभरता हुआ अनुभव हुआ। यह गुजरातिन रूप से बहुत स्नेह करती थी। जब कभी वह फिल्मी गीत गुनगुना रही होती, अमृत की आँखें चमक उठतीं। पर झट ही वह डर जाता। पत्नी ने देग्व लिया तो खैर नहीं। न जाने क्या कुछ बकने लगेगी। उफ़, यह अथाह ईर्ष्या। इससे छुटकारा नहीं मिल सकता। वह कोचवान से पूछना चाहता था कि क्या उसकी भी कोई कहानी है ? क्या बुढ़ापे में उसे यौवन की याद नहीं आती ? यह कैसे हो सकता है कि उसकी पत्नी बेटे की मृत्यु के कारण

पागल हो गई ? हो सकता है कि इसमें वर्षों की दबी हुई ईर्ष्या का भी हाथ हो !

सिगरेट समाप्त हो चुके थे। कोचवान के मुँह से बीड़ी की प्रशंसा सुन कर अमृत ने जेब से पैसे निकाल कर कोचवान के हाथ में पकड़ाते हुए कहा—“बीड़ी नहीं, मेरे लिये सिगरेट ले आओ सामने की दूकान से।”

“कौन से सिगरेट, सेठ साहब ?”

“जो भी मिल जायँ—अच्छे-बुरे जैसे भी हों।”

विकटोरिया को एक किनारे छोड़ कर कोचवान दुकान की ओर चल पड़ा। अमृत को अफसोस अवश्य हुआ कि अपनी पसन्द के सिगरेट मंगवाने से क्यों संकोच किया। छोटे बड़े का अन्तर तो हमेशा रहेगा। बीड़ी पीने वाले बीड़ी पियेंगे और सिगरेट पीने वाले सिगरेट। पसन्द अपनी अपनी। मजा तो अपनी पसन्द का सिगरेट पीने ही में है। वह चाहता था कि ऊँची आवाज़ से कोचवान को पुकार कर अपनी पसन्द के सिगरेट का नाम बता दे। पर कोचवान बहुत दूर निकल गया था। उसने अपने मस्तिष्क को समझा लिया। अब जो सिगरेट भी कोचवान ले आये। शायद वह मेरी पसन्द के सिगरेट लाने ही में सफल हो जाय।

कोचवान सिगरेट लाया तो उसने चमक कर पूछा—

“कौन-से सिगरेट मिले ?”

“कैची के।”

उसने अरुचि से सिगरेट की डिविया ले ली। बाकी पैसे मॉगने का ग्याल भी न रहा। उ्यों ही विकटोरिया के पहियों में गाँत आई, उसने सिगरेट निकाल कर सुलगाया और बैठा ज़हर-मार करता रहा। एक माधारण-मी उपेक्षा कितने कष्ट का कारण बन सकती है। कोई एक मुसीबत हो तो शायद उससे

छुटकारा भी मिल सकता है। यहाँ तो पग-पग पर, प्रति पल मुमीबतों का सामना करना होता है। बहुत-सी मुमीबतों को तो मनुष्य स्वयं मोल ले लेता है। पर कुछ ऐसी भी तो हैं जो उमके मिर पर यों ही लाद दी जाती है। उमका समूचा अस्तित्व भान्त्वना के लिये तड़प रहा था। वह कहना चाहता था—प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे से अलग-अलग जीवन व्यतीत कर रहा है, वाचा ! वस्तुतः गोपी गुजरातिन भी किसी अलग द्वीप में रहती हैं, और मैं अलग द्वीप में। यही हमारी मुमीबत का सब से बड़ा कारण है। विज्ञान के नये आविष्कारों का लाभ तो उन्ही समय हो सकता है जब सब लोग इनका एक समान उपयोग कर सकें। विज्ञान एक बहुत बड़ी शक्ति है, वाचा ! तुमने रेडियो तो सुना होगा। जिस समय एक गीत विलायत में गाया जा रहा हो, उन्ही समय वह हमारे पास पहुँच जाता है। गीत को हजारों मील की दूरी पर करते एक क्षण भी नहीं लगता। यह सब विज्ञान का कमाल है। उसे मालूम था कि कोचवान विज्ञान की शक्ति से परिचित नहीं हो पाया। वह चाहता था कि उसे रूम की वह घटना विस्तृत रूप में समझा दे जिससे विज्ञान का कमाल सिद्ध किया जा सकता था। कई घंटों तक कुछ लाशें कब्रों में दफ़न रहीं। फिर एक रूमी वैज्ञानिक की नहायता से उन्हें बाहर निकाल कर जीवित कर दिया गया। अब इस कोचवान को यह बताने की क्या आवश्यकता थी कि वस्तुतः उन लोगों की मृत्यु नहीं हुई थी। वे जहरीली गैस के कारण बेहोश हो गये थे। पर अचानक हस्पताल की घड़ी उम की कल्पना में घूम गई। सूइयाँ तो बराबर दौड़ रही थीं। उसे एक प्रकार से सन्तोष हुआ कि अभी तक ये सूइयाँ अपने निश्चित बिन्दु पर नहीं रुकीं। एक क्षण के लिए रूप का गुथड़ा भी उमकी कल्पना में उभरा। वह मुस्करा रहा था। जैसे कह रहा हो—अब मुझे कोई कष्ट नहीं, पिताजी !

फिर मानो पास बैठी हुई उसकी पत्नी भी मुस्कराने लगी। जैसे कह रही हो—तुम बहुत देर से आये। कृष्णजी ने तुम्हारे आने से पहले ही अपना प्रताप दिखा दिया।

कोचवान बड़बड़ा रहा था। जैसे उसकी कल्पना निरन्तर अपनी पत्नी पर जमी हुई हो और वह पूछना चाहता हो कि क्या संसार में कोई ऐसी शक्ति नहीं जो उस की पत्नी को मार सके। मरियल घोड़े को दौड़ाने में अपनी असफलता पर उसे बुरी तरह क्रोध आ रहा था। उसे विश्वास था कि अच्छी सवारी एक बार वायदा करके इनाम के पैसे देने में संकोच नहीं करती। फिर भी सवारी को खुश करने के लिए वह कह उठा—

“थोड़े रुपये जमा हो जायँ तो मैं नया घोड़ा खरीद लूँ सेठ साहब। फिर यही विक्टोरिया टैक्सी बन जायगी। आप खुश होकर चयन्नी की अठन्नी, और शायद अठन्नी का भी रुपया इनाम देंगे।”

अमृत ने कोचवान की बात सुनी-अनसुनी करते हुए कहा—

“तुम्हारा इनाम खरा है, बाबा ! पर अपने घोड़े से कहो कि जल्दी-जल्दी क़दम उठाये।”

कोचवान ने खाँसते हुए कहा—

“अब क्या चिन्ता है, सेठ साहब?—अब तो हस्पताल समीप है। बेटे को देख कर आपकी सब चिन्ता मिट जायगी।”

कोचवान की आवाज़ में एक दबी-दबी सी वेदना थी। उसे अपने बेटे की याद मता रही थी। उसे बिल्कुल आशा न थी कि एक रोज़ उस के पास इतने पैसे हो जायँगे कि वह एक नया घोड़ा खरीद सके। जवान घोड़े को हाँकने के लिये तो इन्सान को स्वयं भी जवान होना चाहिये। घोड़े को दौड़ाने की कोशिश करते हुए उसने बड़बड़ाना शुरू कर दिया—

हस्पताल दरवाज़े पर रुकना, बेटा। इनाम के पैसे आधे

तेरे, आधे मेरे। आज मैं वह मसाला खिलाऊँगा कि याद रखोगे। चलो बेटा, सेठ साहब को ख़ुश करदो।”

अमृत चाहता था कि कोचवान से कहे—यह बात किसी और समय के लिए उठा रखो। इस समय मेरी तबियत पर बोझ पड़ा हुआ है। यह बोझ रूप को देख कर ही उतर सकता है। किसी तरह रूप अच्छा हो जाय। रूप—मेरा बेटा, जो अभी से प्रतिभाशाली नज़र आता है। अभी उस रोज़ उसने एक चित्रकार को रूप का फ़ोटो दिखलाया था और चित्रकार उसे देख कर उछल पड़ा था। उसने वचन दिया था कि किसी रोज़ वह उसकी पोर्ट्रेट तैयार करेगा और उसे प्रदर्शनी में रखेगा। कलाकार का विचार था कि उस का यह चित्र उसकी तूलिका का श्रेष्ठ चमत्कार समझा जायगा। उसने सोचा कि यदि कलाकार का वह चित्र उसकी तूलिका का श्रेष्ठ चमत्कार होगा तो मुझे यह समझने से कौन रोक सकता है कि रूप मेरा श्रेष्ठ चमत्कार है—मेरा और उसकी माँ का चमत्कार। जीवन निर्माण चाहता है। प्रतिपल जीवन निर्माण पर मुस्करा बैठता है। काश ! मृत्यु न होती ! क्या कभी वह दिन आ सकता है जब विज्ञान मृत्यु पर विजय पा ले ? सचमुच विज्ञान सफल हो कर रहेगा। उस दिन मनुष्य ठीक अर्थों में स्वतन्त्र होगा। कहते हैं मृत्यु सदा एक बहाना चाहती है। निमोनिया हो, हैज़ा हो—केवल एक बहाना। पर विज्ञान बहाने नहीं चाहता, प्रयोग चाहता है। वह कोचवान से कहना चाहता था कि अब तो न निमोनिया मनुष्य को मार सकता है, न हैज़ा। अब विज्ञान का युग है। युद्ध समाप्त हो गया और युद्ध के पश्चात् की दुनिया में सब बीमारियों का भी अन्त कर दिया जायगा। देश-देश में यही प्रयत्न किये जायेंगे। अब तो बूढ़ों को भी जवान कर दिया जायगा। बन्दरों के गुर्दे बूढ़ों के शरीर में डाले जा सकते हैं, और उन्हें फिर से जवान

बनाने की व्यवस्था अब दूर नहीं है।

विक्टोरिया रात के अन्धकार में रेंग रही थी। जैसे !— सदा इसी तरह रेंगती रही हो। जैसे उसे अपनी रफ्तार तेज होने की कोई आशा न हो। अमृत को ऊँघ-सी आने लगी— जैसे समुद्र की बड़ी-बड़ी लहरें उसे थपथपाने लगी हों। वह सदा इस समय समुद्र के किनारे जा बैठता था। आज हस्पताल जाने की मुसीबत न होती तो वह समुद्र के किनारे पहुँच गया होता। समुद्र की आवाज़ तो जीवन की आवाज़ थी। हर समय उछलती-कूदती लहरें उड़ते हुए समय को पकड़ने में प्रयत्नशील रहतीं, और उसे सदा यही अनुभव होता कि समुद्र प्रति पल समय की वर्षगांठ मनाता आया है। विक्टोरिया के पहियों की चीखती हुई आवाज़ न जाने किसकी शिकायत कर रही थी। शायद विक्टोरिया भी उड़ते हुए समय को पकड़ने के लिए रेंग रही थी। पर उड़ते हुए समय को किसने पकड़ा है ? हस्पताल अभी दूर था। उसने चिल्ला कर कहा—

“बाबा, इस छकड़े को अब हाँकोगे भी या नहीं ?”

कोचवान घोड़े की पीठ पर चाबुक चलाने लगा। उसने सोचा इसके बिना कोई इलाज नहीं। इनाम की चवन्नी अठन्नी में बदल जाय, इसके लिये चाबुक जरूरी है। पेट को दो बार भरने के लिये अन्न चाहिये। हर सवारी अन्नदाता है। जब तक पेट लगा है, तब तक विक्टोरिया को चलाये वगैर गुज़ारा नहीं। बंटा चाहे मर जाय, चाहे जिन्दा रहे। पत्नी की अक्त कायम रहे, चाहे वह पागल हो जाय। जब तक संसार में जिन्दा रहना है, पेट को रोटी अवश्य चाहिये। एक जगह नुकड़ के समीप घोड़ा रुक गया। जैसे वह आगे न चलने का निश्चय कर चुका हो। कोचवान का चाबुक हार कर शान्त हो गया। अमृत को ऐसा लगा कि विज्ञान के युग में विक्टोरिया में बैठना सम्भ्यता

का अपमान है। उससे बहुत बड़ी भूल हुई; किसी भी कीमत पर उसने टैक्सी ले ली होती और अब तक कभी का हस्पताल पहुँच गया होता। पर अब क्या हो सकता है? न इधर, न उधर। अब इस अवस्था में विक्टोरिया छोड़ना भी उचित न था। कोचवान ने मार-मार कर घोड़े को हलकान कर दिया। लाचार होकर अमृत कह उठा—

“इसे आराम से मनाओ, बाबा! मार खा कर तो कोई भी वश में नहीं आता।”

विक्टोरिया से उतर कर कोचवान घोड़े की पीठ थपथपाने लगा। अमृत को यों लगा जैसे बम बरसाने के पश्चात् अभी-अभी कोई किसी पीड़ित देश को भूठ-मूठ बाला रहा हो। सहसा उसका ध्यान अणु बम की ओर पलट गया। नागासाकी और हिरोशीमा पर अणु बम गिराये जाने के समाचार बड़े ध्यान से पढ़े थे। कुछ ही क्षणों में सैकड़ों मील के घेरे में जीवन के सब चिह्न समाप्त कर दिये गये थे। उस ने यह भी सुना था कि अणु बम की विभीषिका बहुत वर्षों तक अटल रहेगी। क्योंकि उसने पढ़ा था कि अणु बम ने अनेक कठिनाइयाँ उत्पन्न कर दी थीं। अब से वर्षों तक उस प्रदेश में जो बालक उत्पन्न होंगे उनमें योनिभेद न होगा। तो मनुष्य जाति कैसे बढ़ेगी? जीवन निर्माण चाहता है। यह तो जीवन की पराजय है कि ऐसे बालक उत्पन्न हों जो योनि-भेद से मुक्त हों! पर उस ने यह भी तो पढ़ा था कि अणु शक्ति से तो बहुत से काम निकाले जायेंगे। बड़े-बड़े वैज्ञानिक यह घोषणा कर चुके हैं कि अणु शक्ति का आविष्कार विज्ञान का सब से बड़ा आविष्कार है। जहाँ भीलें नहीं, वहाँ धरती से भीलें पैदा की जा सकती हैं। जहाँ पहाड़ नहीं, वहाँ अणु शक्ति की सहायता से पहाड़ पैदा किये जा सकते हैं। वह हैरान था कि यह सब कैसे होगा। पर वह इन समाचारों को असत्य भी न

मान सकता था। कोचवान बराबर घोड़े को पुचकार रहा था। अमृत को इस विक्टोरिया और अगु शक्ति की विषमता बहुत खटकी।

घोड़ा समझदार निकला। कोचवान फिर विक्टोरिया पर आ बैठा। विक्टोरिया फिर उसी तरह रेंगने लगी—जैसे वह अगु शक्तिका मुँह चिड़ा रही हो। अमृत चाहता था कि कोचवान को अगु शक्ति के चमत्कार सुना कर चकित कर दे, पर हस्पताल की घड़ी की सुइयाँ एक बार फिर उसकी कल्पना में उभरने लगीं! वह डर गया। इस घड़ी से छुटकारा नहीं मिल सकता। सुइयाँ उसी तरह भाग दौड़ कर रही थी। उसे ध्यान आया कि वे अपने विशिष्ट बिन्दु पर रुकने में सदा असफल रहेंगी। इसमें अगु-शक्ति भी उनकी मदद नहीं कर सकती। अपने मन को इस घड़ी की ओर से हटाने का कोई और इलाज उसकी समझ में न आया। खाँस कर गला साफ़ करते हुए उसने कोचवान से कहा—

“चवन्नी नहीं, अठन्नी। घोड़े को उड़ा ले चलो, बाबा।”

कोचवान बड़बड़ाने की बजाय खुश हो कर घोड़े को पुचकार रहा था। जैसे वह यह सिद्ध करना चाहता हो कि विक्टोरिया भी टैक्सी बन सकती है। इनाम चाहिये—हाँ भाई, इनाम। पैसे न हों तो आदमी किसी काम का नहीं। पैसे के बिना पेट नहीं भरता। न डाक्टर की फीस ही दी जा सकती है, न दवाई की कीमत। न हैजे से छुटकारा मिल सकता है, न निमोनिया से।

अमृत का दिल धकधक कर रहा था। वह हर कीमत पर जल्दी-से-जल्दी हस्पताल के दरवाजे पर पहुँच जाना चाहता था। उसे कुछ पता न था कि रूप किस अवस्था में होगा। पत्नी उसे देखकर मुस्करायगी।

समय बीत रहा था, उड़ा जा रहा था। कोई उसे पकड़ कर न रख सकता था। भावातिरेक में उसने चिल्लाकर कहा—

“तेज चलाओ, बाबा ! तो एक चवन्नी और मिलेगी ।”

विक्टोरिया उड़ते हुए समय को पकड़ने में असमर्थ थी । बूढ़े कोचवान के शरीर में भी किसी चालाक बन्दर की शक्ति का प्रवेश नहीं कराया जा सकता था, और मरियल घोड़ा भी फिर से जवान न हो सकता था । कोचवान का चाबुक वातावरण में अजब कुण्डल बनाता निर्दयता से घोड़े की पीठ पर गिरता । पर घोड़े के कदम अब तेज न हो सकते थे ।

आखिर विक्टोरिया हस्पताल के दरवाजे पर पहुँच गई । कोचवान के हाथ में पैमे थमाते हुए अमृत हस्पताल में घुस गया ।

ज्यों ही उसने वार्ड के भीतर प्रवेश किया, उसने डाक्टर को यह कहते सुना—

“वाई से कहो कि मुर्दे को ले जाय ।”

उम के पाँव के नीचे से ज़मीन निकल कई । पर वह किसी अगु शक्ति के साथ आगे बढ़ता गया ।

उम की पत्नी रूप की चारपाई पर झुकी हुई थी । पास बैठी गोपी गुजरातिन मानो धरती और आकाश की हर चीज़-से व्यंग पूर्वक पूछना चाहती थी—क्या माँ बनकर मेरी भी यही दशा होती ?

हस्पताल की घड़ी की सूइयाँ बराबर चलती रहीं—जैसे अब बीते हुए क्षण को वापस लाने की शक्ति इन सूइयों में तो क्या, किसी अगु शक्ति में भी न हो !

जशन

रात भर के सफर के पश्चात् वे छावनी के दरवाजे पर पहुँचे। जंगल बहुत पीछे रह गया था। धनुषिया को चढ़ते सूरज की किरणें यहाँ भी सीठी मालूम हुईं और उसने दायें-बायें खुबती निगाहों से देखकर कहा—“अरे तीर्थू और मंगलू, यहाँ भी धूप में दूध के छींटे और शहद की बूँदें मिला रखी हैं देवी माता ने। क्यों मैं भूठ कहता हूँ ?”

तीर्थू और मंगलू बोले—“धनसुख कह दे तो हम भी मान लें।”

धनसुख पास खड़ा अर्जुन के अग्निबाण की कहानी सुना रहा था। तीर्थू और मंगलू की बात सुन कर वह बोला—“क्य कह रहा है हमारा सरदार ? अरे क्या हमारे सरदार को अर्जुन के अग्निबाण की कहानी सुनने का भी शौक नहीं रहा ?”

किसी ने पास से कहा—“धीरे-धीरे बोलो, धनसुख ! कमान अफसर न सुनले हमारा शोर।”

धनसुख चमक कर बोला—“कमान अफसर सौ बार सुन ले। अर्जुन के अग्निबाण की कहानी भूठ थोड़े ही है।”

धनुषिया सामने से मुस्करा दिया। बोला—“थोड़ा चुप रह जाओ, धनसुख ! कभी फिर सुन लेंगे अर्जुन के अग्निबाण की कहानी।”

कालो भुजंग, हठीले, गुसैले भील—जिनके शरीर पर लंगोटी और गले में मूँगों की माला थी—अपना-अपना धनुष-बाण संभाले खड़े थे। उनके सरदार धनुषिया के सिर पर पगड़ी बाँधी थी—वही पगड़ी जो किसी जमाने में दूधिया रही होगी और अब मटभैली की सीमा से लॉघ कर कुछ-कुछ काली हो चली थी। उनके शरीर पर तरह-तरह के छोटे-छोटे गुदने गुदे थे। धनुषिया ने अपने सीने पर पूरा मोर खुदा रखा था जो इस बात का परिचायक था कि वह मोरी भीलों का सरदार है जिनकी स्त्रियाँ जंगल में मोर को देख कर सवा गज का घूँघट निकाल लेती हैं, जो ब्याह पर मोर की मूर्ति की पूजा करते हैं, कभी मोर को नहीं मारते, कभी उसके पद-चिह्नों पर पैर नहीं रखते। धनुषिया ने भीलों को समझाया था कि हो न हो संकट समीप है। पहले कब आकाश पर हवाई जहाजों की टोलियाँ नजर आती थीं। बहुत हुआ, कभी-कभी कोई इक्का-दुक्का जहाज नजर आ गया। और अब तो खबर उड़ रही है कि शत्रु बहुत समीप आ पहुँचा है। एक दिन वह हमारे जंगल को भी आग लगा देगा। उस समय धनुष-बाण काम न आयेंगे। इसी आग को रोकने के लिये उन्होंने फौज में भरती होने का निश्चय किया था।

कमान अफसर ने बाहर आ कर अन्तिम निर्णय की भंगिमा में कहा—“तुम लोग शौक से भरती हो सकते हो। पर ये धनुष-बाण फेंक देने होंगे। इन से यहाँ काम नहीं चलेगा।”

धनुषिया ने आगे बढ़ कर जवाब दिया—“मेरी आँखें बाँध दो। मैं केवल आवाज सुन कर निशाने पर तीर मार सकता हूँ।”

धनमुख बोला—“अर्जुन का अग्निबाण अभी तक लोप नहीं हुआ। अब भी तीर चला कर आग लगाई जा सकती है।”

मँगलू ने शह दी—“और अर्जुन का वर्षाबाण भी हमारे पास मौजूद है जिसे चला कर वर्षा बरसाई जा सकती है। पर निशानची चाहिये।”

तीर्थू ने स्वर साधते हुए कहा—“मैं ऐसा तीर मार सकता हूँ कि सेर-सेर भर के ओले गिरने लगें और शत्रु उनके नीचे दब जायँ।”

कमान अफसर बहस में न पड़ना चाहता था। उसने कहा—“तुम यह कहते हो। मैं यह समझता हूँ। पर अब तो बन्दूक भी बेकार नज़र आती है। मशीनगन और तोपें भी चन्द्र दिन की मेहमान हैं। वास्तव में यह युद्ध तो बमों के बल-बूते पर लड़ा जा रहा है।”

धनुषधारी भील एक दूसरे का मुँह देखने लगे। बन्दूक के करतब तो उन्होंने बहुत सुन रखे थे और उनका दावा था कि धनुष-बाण बन्दूक को हरा सकता है। हाँ, मशीनगन और तोपों की कहानियाँ जंगल के लिये अच्छी थीं। और बमों का किस्सा तो किमी की मसभ में न आया।

कमान अफसर ने अवसर पा कर फिर कहा—“भीलों की वीरता हमारे सिर-माथे पर। तुम वीर भीलों की मन्तान हो—यह मुझे मालूम है। पर तुम्हें समय के अनुसार चलना होगा। फिर तुम्हारी वीरता खरे सिक्के की तरह चलेगी।”

भीलों में तरह-तरह की बातें शुरू हो गईं। धनुषिया की आँखों में चमक पैदा हुई। उसने सब भीलों के चेहरों पर निगाह डाली। सब उसकी आज्ञा की प्रतीक्षा में थे। वह चाहता था कि सब शान्त रहें।

किसी ने धीरे से कहा—“यहाँ धनुष-बाण का अपमान हो

रहा है।”

पास खड़े भील ने उसका कंधा झटक कर कहा—“यह हमारे पुरखाओं का अपमान है।”

परं से आवाज़ आई—“जंगल पर हमेशा धनुष-बाण का राज रहा है।”

सामने से किसी ने माथे पर बल डाल कर कहा—“हाँ हाँ, उत्तर-दक्खिन, पूरब-पश्चिम, सदा धनुष-बाण से ही बड़े-बड़े शिकार खेले गये हैं।”

पर धनुषिया ने सब भीलों का प्रतिनिधित्व करते हुए कहा—“हमें सब स्वीकार है।”

“तुम वीर भीलों की वीर सन्तान हो,” कमान अफसर ने विजय के अनुभव से सिर घुमाते हुए कहा, “यह तो एक ज़माना जानता है। मुझे तुम से यही आशा थी।”

धनुषिया ने आगे बढ़ कर धरती पर धनुष-बाण रखते हुए पीछे मुड़ कर भीलों के चेहरों पर दृष्टि डाली।

मँगलू बोला—“सरदार का निर्णय हमें स्वीकार है।”

तीर्थ ने बल देते हुए कहा—“सब अपने-अपने धनुष-बाण सरदार के धनुष-बाण के ऊपर रख दें।”

धनमुख ने शह दी—“सरदार कहे तो हम अन्धे कुँ में कूद जायँ।”

सब बढ़-बढ़ कर अपने-अपने धनुष-बाण धरती पर रखते चले गये। सरदार कोई आज से तो सरदार नहीं बना था। वर्षों से भील उस की आज्ञा मानते आये थे।

किसी ने बड़े गर्व से आँखें झपझपाते हुए कहा—“सरदार दिन को रात कहे तो वह भी हमें स्वीकार है।”

पर कुछ लोग अपने धनुष-बाण उठा लेना चाहते थे। धनुष-बाण का अपमान उन्हें बुरी तरह खटक रहा था। आज

तक किसीने स्वप्न में भी न सोचा था कि एक दिन वे धनुष-बाण त्याग देंगे।

कमान अकसर ने मुस्कराते हुए कहा—“खरा सोना कसौटी पर चढ़ते कब डरता है ?”

आखिर उन्हें अन्दर पहुँचाया गया। नहाने को साबुन और तेल दिया गया। लंगोटी उतरवा कर कौजी वर्दी पहनाई गई। कौजी खाना खाते हुए सब भील धनुषिया की ओर देखते रहे।

मंगलू कह रहा था—“यह सब तुम्हारे कारण है सरदार। सब तुम्हारे कारण।”

तीर्थू ने कहा—“जंगल से चलते समय दाँये हाथ घोड़ा हिनहिनाया था। यह सब उसी के कारण समझो।”

धनमुख ने भी सुर साधना आवश्यक समझा। बोला—“जंगल में मोर भी तो बोल उठा था। यह सुख उसी के कारण मिला है।”

धनुषिया बोला—“क्यों मुझे छेड़ रहा है, धनमुख ? मैं तो मोरी भाल हूँ और मोर की आवाज़ पर सौ-सौ बार बलिहार हो सकता हूँ।”

फिर किसी ने चमक कर कहा—“पर सरदार, मोर की आवाज़ से तो मेंह का पता चलता है।”

चार्गे और कहकहे गूँज उठे। धनुषिया ने कहा—

“अब हम मिपाही हैं। हम युद्ध की आग बुझाने जायँगे। मूसलाधार मेंह बरसेगा तो अपने आप आग बुझ जायँगी।”

फिर किसी ने मंगलू को छेड़ने के लिये भूरिया भीलों पर व्यंग कस दिया—

भूरिया ठटक

तूमड़ी चटक

तूमड़ी में साँप निकल्यो

भूरिया केवे म्हारो बाप निकल्यो

धनुषिया को भट ध्यान आ गया कि आखिर वह भीलों का सरदार है। उसकी आँखें चमक उठीं। बोला—“भूरिया और मोरी का भेद-भाव छोड़ो। यह ठीक है कि भूरिया भीलों का पहला पुरखा भभूत रमा कर जोगी बना भटकता था। उस की तूमड़ी टूट गई, जिस से भूरे रंग का साँप निकला। उसने कहा—यह मेरा बाप है। और अब भूरिया भील न तूमड़ी खाते हैं और न साँप को मारते हैं। पर सब पूछो तो हम सब भाई-भाई हैं। रीति-रिवाज और त्यौहार थोड़े अलग-अलग भी हुये तो कोई अन्तर नहीं पड़ता। अब मेरे कहे से फौजी बर्दी पहनी है तो मेरी लाज रखना। बस आज से याद रहे कि चाहे बलवाल हो चाहे पारगी, दामोर हो चाहे ढोली; और ये राठिया, सेमिलिया, नातरा और बारेला—सब भाई भाई हैं। हम जंगल को आग की लपटों से बचाना चाहते हैं—जंगल, जिसकी कोख से हम जन्मे और जिसकी गोद में हमारा पालन-पोषण हुआ।”

: २ :

वे मोर्चे पर भेजे गये तो सेना आसाम की सीमा से बहुत दूर बर्मा में बढ़ चुकी थी। रंगून के बाद मांडले भी जीत लिया गया था। अब तो वे भी गोर्लियाँ चलाते, जान हथेली पर रखकर मोर्चे पर जाते। दिन-दिन भर डटे रहते। उन्हें विश्वास था कि अब यह आग बुझा कर ही वे अपने घरों को लौटेंगे।

धनुषिया ने कमान अफसर से पूछ कर अपना धनुष साथ रख लिया था। उसे याद था कि कमान अफसर ने हँस कर कहा था—हाँ, ले लो। कभी-कभी इसे देख लिया करना। पर सरदार,

आजकल की जंग में धनुष का क्या काम ?

बन्दूक चलाते समय धनुषिया को हँसी आने लगती। हाँ, अब यहाँ धनुष क्या कर सकता है ? यहाँ तो कभी-कभी बन्दूक भी बेकार नज़र आती है। मशीनगन और तोप से भी वह काम नहीं बनता जो बम गिरा कर किया जा सकता है। कमान अफसर सच कहता था। यह जंग तो बमों के बल-बूते पर ही लड़ी जा रही है।

सभी भील होशियार बन्दूकची सिद्ध हुए। कुछ लोग उन्नति करते-करते तोप तक जा पहुँचे थे और अब तो उन्हें मशीनगन भी समीप नज़र आती थी। धनुषिया ने तो सब बन्दूकचियों और तोपचियों को पीछे छोड़ दिया था। अब वह हवाई बमबारी के सपने देखा करता। हथगोले तो वह इस होशियारी से फेंकता कि फौज के अफसर अश-अश कर उठते।

मंगलू छेड़ता—“सरदार हमेशा सरदार रहता है।”

तीर्थू कहता—“मंगलू, तुम भूरिया साँप हो और धनुषिया एक मोर है। वह तो जब चाहे तुम्हें खा जाय और उसे जहर भी नहीं चढ़ सकता।”

पास से धनसुख कह उठता—“तीर्थू, सरदार की बात याद नहीं ? सब भील भाई-भाई हैं। भूरिया और मोरी का भेदभाव छोड़ो।”

एक स्थान पर एक बर्मी स्त्री की आँखों में सहानुभूति देख कर धनुषिया को राजली याद आ गई। उसने देखा कि वह स्त्री जंगल से शहद लाई है। वह उसकी भाषा समझने में असमर्थ था। पर उसे यह समझते देर न लगी कि वह शहद का डब्बा उसी को देना चाहती है। उस ने शहद ले लिया और ध्यान से उस स्त्री की ओर देखा। वह आँखों ही आँखों में कह रही थी—सिपाही, मैं गलाम बन चुकी थी। तुम ने मुझे आज़ादी

दिलाई है। उस ने अपने दिल से कहा—तो क्या मैं इस अकेली स्त्री को आजादी दिलाने के लिये राजली को छोड़ आया हूँ ? वह भीलनी और यह बर्मन ! न जाने इसका क्या नाम है ?

शत्रु की खन्दकों पर धनुषिया बुरी तरह झपटता। वह हथगोले ऐसे फेंकता जैसे गोफने में पत्थर रखकर फेंका जाय और फड़फड़ करते पत्थी गिर पड़ें। एक दिन वह शत्रु के पंजे में बुरी तरह आ गया था। पर वह शत्रु को मार कर और भगा कर जीवन लौट आया था।

उस रात मंगलू ने सब से पहले उसे बधाई दी। तीर्थू बोला—“अब कोई राजली को बताये कि तेरा धनुषिया मरते-मरते बच गया तो वह फूली न समाये।”

धनसुख ने शरारत से कहा—“इस की तो सब भीलनियों को खुरी होगी। मेरी रुकमिन तो इस खुशी में ऐसा नाच रचायगी कि जंगल में मंगल हो जायगा।”

यहाँ भी जंगल था। पर शायद वे इस के साथ अभी तक एकस्वरता स्थापित नहीं कर सके थे। बातों-बातों में वे घर का किस्सा ले बैठते। मंगलू अपनी सुखिया की चर्चा छेड़ देता तो तीर्थू कहता—“होगी सुखिया भी। पर मेरी सुन्दरी की तो और ही बात है। उस से अच्छा नाचने वाली तो सारे जंगल में कहीं न होगी। जिस दिन मैं उसे व्याह कर लाया था, उसकी पायल की झनकार सुनकर ही मैंने अन्दाजा लगा लिया था।”

दिन भर बन्दूकों, तोपों और बमों की भयानक आवाजें, और रात को स्त्रियों की बातें और नाच की चर्चा। धनुषिया को ये बातें अनमेल मालूम होतीं। वह चाहता था कि इन्हें रोक दे। पर फिर सोचता कि ये लोग यहाँ मेरी आज्ञा मानने से मना भी तो कर सकते हैं। वे कह सकते हैं—आज से तुम हमारे सरदार नहीं रहे। स्त्री और नाच की चर्चा बन्द होती तो

वे धनुषबाण की बातें शुरू कर देते—अर्जुन के अग्निबाण और वर्षाबाण की बातें। और वह चिढ़ कर कह उठता—यह सब पुरानी बातें हैं। और कहकहे ऊँचे उठ जाते, जैसे अनार छूटते हैं !

खाई या किसी गुप्त स्थान में बैठे-बैठे धनुषिया सोचता कि राजली दिन गिनती होगी। उस की आँखों का काजल दुलक कर गालों पर आ जाता होगा। उसकी कल्पना में एक उदास स्त्री का चेहरा उभरने लगता जो हमेशा यही पूछती—क्यों अभी तेरे तीर समाप्त नहीं हुए ? और वह जैसे जोर से हँस कर कहता—पगली तुझे क्या मालूम ? अरी राजली, यह युद्ध तो बमों के बल-बूते पर लड़ा जा रहा है।

: ३ :

युद्ध समाप्त होने का समाचार सुनते ही मंगलू और तीर्थ दौड़े-दौड़े धनुषिया के पास आये और बोले—“अब हम अपने जंगल को लौटेंगे।”

“क्यों, यह जंगल पसन्द नहीं ?” धनुषिया ने उनके कन्धों पर हाथ रखते हुए कहा, “और अगर मैं इसी जंगल में रह जाऊँ, तो ? मुझे तो यह जंगल अपने जंगल से भी घना नज़र आता है।”

धनसुख बैठा चुरुट का कश लगा रहा था। बोला—“अपने जंगल में यह चुरुट कहाँ ?”

मंगलू दौड़ कर तम्बू से शहद का डब्बा निकाल लाया। धनुषिया ने यह डब्बा छीनने का बहुत प्रयत्न किया, पर इधर से धनसुख और तीर्थ ने इसे संभाल लिया और देखते ही देखते डब्बा खाली हो गया। दार कर धनुषिया ने यही सोच लिया कि उस बर्मी स्त्री ने यह शहद मुझे नहीं, तीर्थ, धनसुख

और मंगलू को दिया था। उस ने अपने आप को धन्यवाद दिया कि उस ने उस बर्मी स्त्री की बात अपने साथियों को नहीं बताई थी। नहीं तो वे उस परबुरी तरह छींटे कसते और घर जा कर राजली को भी यह किस्सा खूब नमक-मिर्च लगा कर सुनाते।

एक भील हाँफता-हाँफता आया और बोला—“जापान ने हार मान ली। कल रोशनी होगी और नाच होंगे। बहुत बड़ा जशन। सरदार, सुना है कि नागासाकी और हिरोशीमा पर दो एटम बम गिरा कर जापानियों का रहा-सहा साहस समाप्त कर दिया गया और वे हार मानने पर मजबूर हो गये।”

धनुषिया ने हँस कर कहा—“बैठ जा और दम ले ले। ज़रा पहले आया होता तो शहद का जशन देखता ! अब तो डब्बा खाली पड़ा है।”

मंगलू बोला—“यह चाहे तो अब भी अपना हिस्सा ले सकता है। डब्बा तोड़ डालते हैं।”

“तो क्या यह शहद की अंतिम बूँदों के साथ टीन के टुकड़े भी खा जाय ?” तीर्थू ने आश्चर्य से पूछा।

“भील का बेटा तो टीन भी हज़म कर सकता है,” धनसुख ने शह दी, “अरे भाई, तोड़ दे डब्बा और ज़रा बचा कर शहद चाट ले।”

इस खुशी में किसी को यह खयाल न आया कि डब्बे को आग पर रख कर शहद की अंतिम बूँदें निकाली जा सकती हैं। धनुषिया की कल्पना घर की ओर घूम गई। उसे याद था कि पिछले साल जब उस ने एक नर-भक्षक शेर को मार गिराया था तो जंगल में भीलनियों ने दीपमाला की थी और ऐसे-ऐसे नाच नाचे गये थे कि मरते दम तक उस के मन से नहीं उतर सकते। यह तीर्थू, जो अपनी सुन्दरी के नाच की प्रशंसा किया करता है, सच ही तो कहता है। उस रात वही सब पर बाज़ी ले गई

थी। मंगलू कह रहा था—“कल पूनम की रात है। और जब मशालें ही मशालें नज़र आयंगी, पूनम का चाँद भी शरमा जायगा।”

“पूनम की रात और रोशनी,” तीर्थू कह उठा, “तब तो विजय का जशन हमें सदा याद रहेगा।”

धनसुख ने पूछा—“नागासाकी का क्या मतलब होगा भला?”

मंगलू बोला—“वहाँ एक नाग रहता होगा। इसीलिए उसे नागासाकी कहते हैं।”

तीर्थू ने शह दी—“अरे, वाह रे मंगलू भूरिया! मैं कहता हूँ कोई भूरिया साँप का पुजारी ही नाग की बात सोच सकता है।”

धनसुख ने फिर पूछा—“और हिरोशीमा का क्या मतलब होगा?”

धनुषिया ने यों ही हँस कर कह दिया—“वहाँ शायद हीरे बहुत मिलते होंगे।”

इस पर चारों ओर से कहकहे ऊँचे उठ गये।

रात को स्वप्न में भी धनुषिया को नागासाकी और हिरोशीमा का ध्यान रहा। जैसे उसने अपनी आँखों से वहाँ अगु बम गिरते देख लिये हों। और सुबह उठ कर उसने देखा कि हर कोई विजय के जशन की बाट जोह रहा है।

दूध की मटकी उठाये एक बर्मी स्त्री उधर आ निकली। वह बहुत खुश नज़र आती थी। दूर से मंगलू, तीर्थू और धनसुख भी वहाँ चले आये। इशारे से उसने सिपाहियों से ओख लगाने को कहा। बारी-बारी से वे तीनों सब दूध पी गये और धनुषिया उनका मुँह देखता रह गया। स्त्री बहुत लज्जित नज़र आती थी, जैसे कह रही हो—मुझे मालूम होता, तो बड़ी मटकी में

दूध लाती ।

स्त्री चली गई तो तीनों साथी धनुषिया का मजाक उड़ाने लगे । आखिर उसने बता दिया—“अरे उल्लुओ, यही वह स्त्री थी जो मुझे शहद दे कर गई थी ।”

इन्हीं मस्तिश्यों में दिन बीत गया । जब पूनम का चाँद निकला तो एकदम सब मशालें रोशन कर दी गईं । नाच के लिए दूर-दूर से बर्मी बुलवाये गये थे । अफसर फूले न समाते थे । सिपाही विजय के नशे में भ्रूम रहे थे ।

कई घंटों तक नाच होता रहा । अभी जशन अपने यौवन पर ही था । पर धनुषिया का मन उदास था, वह बर्मन कहीं नजर न आई । आज वह उसके थिरकते हुए पैर देखना चाहता था । उसके ओठों से जादू भरा गीत सुनना चाहता था । यह कैसे हो सकता था कि वह यहाँ न आती । वह हट कर एक किनारे खड़ा हो गया ।

फिर न जाने क्या सोच कर वह कैम्प की ओर चल पड़ा । वह तेज-तेज कदम उठा रहा था । चाँदनी रात के साथों में उसे कोई भयानक वस्तु हिलती दिखाई दी । उस समय उसे अपने साथियों का ध्यान आया जो लड़ते-लड़ते मौत के मुँह में चले गये थे । जैसे उनकी आत्माएँ अब उसे पुकार-पुकार कह रही हों—सरदार, हमारे घरवालों को ज़रा ढंग से हमारी मृत्यु का समाचार सुनाना और तुम उनका ध्यान रखना । कोई और समय होता तो वह इस ज़िम्मेदारी को खुशी से निभाने का वचन दे देता । पर आज वह उदास था जैसे किसी वस्तु की कमी रह गई हो और जशन नीरस हो गया हो ।

कैम्प के समीप उसे कोई आहट सुनाई दी । उसने बू सूँघ कर समझ लिया कि कोई शेर इधर आ निकला है । फिर जैसे कहीं से उस बर्मन की आवाज़ आई—जाने से पहले इस

शेर को भी मारते जाओ, सिपाही ।

वह लपक कर कैम्प में चला गया और अपनी बन्दूक उठाने लगा । लेकिन भट्ट उसे ध्यान आया कि जशन के अवसर पर बन्दूक की आवाज व्यर्थ ही खलबली-सी मचा देगी । सहसा उसे धनुष-बाण का ध्यान आया और उसके हाथ उधर को ही बढ़ गये ।

बाहर निकल कर उसने शेर के क़दमों की चाप का हिसाब लगाया, और फिर, जैसे अर्जुन का अग्निबाण छोड़ दिया । शेर की भयानक आवाज़ गूँज उठी । तीर निशाने पर लगा था । उसने देखा कि शेर ने उसी की तरफ़ छलाँग लगा दी है । फिर दूसरे तीर से उसने शेर को मार गिराया ।

वह चाहता था कि इसी समय शेर को घसीटते हुए जशन में अफ़सरो के पास ले जाय और उनसे कहे कि वास्तव में उसी ने विजय पाई है, और यह जशन उसी के स्वागत में किया जा रहा है ।

एक फोटो की कहानी

म सूरी पहुँचते ही मैंने पहला काम यह किया कि अपने कैमरे के लिए नई फिल्म खरीद ली। कैमरे को मैं सदा गले में लटकाये रखता। फोटोग्राफी का मुझे अधिक अनुभव न था। बस अभी तो यह शौक शुरू ही हुआ था। यह सोच कर कि कोई सुन्दर दृश्य या आवश्यक चेहरा हाथ से न निकल जाय, मैं कैमरे को गले में लटकाये फिरता था।

पर कैमरा हमेशा साथ रखने का भी एक रहस्य था। मेरा मन सदा यही कहता रहता कि यह कैमरा पराई चीज है। सोचता कि सदा इसे गले में लटकाये रहने से मुझे यह विश्वास हो जायगा कि अब यह मेरा है और इस पर मेरा रंग चढ़ रहा है।

वैसे इस कैमरे में कोई दोष न था। बहुत बढ़िया तो न था। बस पुराना माल था—एक मित्र से मिली हुई भेंट। पता नहीं उस भले मानस के कान में किसने यह कह दिया था कि मेरे पास इतने पैसे नहीं जिन से कैमरा खरीद सकूँ।

किसी की प्रयोग की हुई पुरानी वस्तु लेकर मुझे कभी खशी

नहीं होती। हर वस्तु पर उसके मालिक के व्यक्तित्व का रंग चढ़ जाता है। कोई दूसरा आदमी किसी की चीज़ का प्रयोग करना चाहे तो बहुत-सा समय तो इसे इसके पहले रंग से मुक्त करने में ही लग जाता है। इस प्रयत्न में बहुत-सी खुशी व्यर्थ ही उड़ जाती है।

बहुत-सी फ़िल्में तो ख़राब हो गईं। बाद में कुछ-कुछ सफलता होने लगी। कई अच्छे फोटो अब मेरे संग्रह में मौजूद थे और मैं खुश था।

मेरा कैमरा पहाड़ी फूलों की ओर देखता और फिर गोरी पहाड़ियों की ओर घूम जाता। यहाँ बनावट न थी, स्वाभाविक सौन्दर्य था। मेरी आँखों में एक नई ही गर्मी, एक नई ही रोशनी आ जाती और कैमरे का साधारण लेन्स दृश्यों और चेहरों की सूक्ष्म रेखाओं को कलाकार की तूलिका के समान ग्रहण करता। कैमरे का यह कमाल मेरे मन में गुदगुदी-सी पैदा करता रहता।

मेरी आँखों में एक नशा-सा छाया रहता। कभी-कभी यह नशा उदासी में बदल जाता। मेरी पत्नी मेरी रुचि के इस उतार-चढ़ाव को ठीक-ठीक न समझ सकती। कला का शौक तो पहले भी था; पर न इतनी धूम थी, न दृढ़ता, न इतनी परवाह। मेरी इस उदासी का रहस्य तो वह बिलकुल ही न समझ सकी। वह अशान्त रहती। मैं चुप रहता। कला के सम्बन्ध में मौन रह कर ही कुछ सोचा जा सकता है, यह मेरा विश्वास था। कला का यह रंग मेरे वस्त्रों पर भी झलक उठा। कमीज़ और पायजामा—बिलकुल दूधिया सफ़ेद हों, यह पाबन्दी न रही। पहले तो मेरी पत्नी खुश हुई। उसने सोचा साबुन कम खर्च होगा। पर जब कमीज़ और पायजामे का मैला रंग मेरी शान्त प्रकृति में एक हो गया तो उसे मेरे दीवानेपन में कोई सन्देह न रहा। अब मैं

उसे यह भी तो नहीं बताता था कि मैं कृत्रिमता छोड़ कर एकदम प्राकृतिक सौन्दर्य के पीछे पड़ गया हूँ ।

मेरी आत्मा में जैसे सृष्टि का सारा सौन्दर्य रम रहा था । भावनाओं में ऐसा तूफान पहली ही बार आया था । मैं किसी पहाड़ी पर जा बैठता और दूर शिखरों की ओर देखा करता ।

उषा का दृश्य मैंने कोई पहली बार ही नहीं देखा था । पर जैसे उषा के ओठों का अनुभव पहले कभी न हुआ हो ! हाँ, यह मेरा दुर्भाग्य था कि मेरे कैमरे की सारी निपुणता फीकी पड़ गई । किसी भी कोटो में मुझे उषा की वास्तविक मुखकृति कभी नज़र न आई । हृदय में एक अशान्ति-सी रहती, एक मीठा-मीठा दर्द भी । मेरा मन कह उठता—यही दर्द कला का प्राण है, इसे समझना होगा और कला में इसे उपयुक्त रूप में दिखाना होगा । मुझे यह अनुभव होते भी देर न लगी कि वृत्तों की उभरी हुई जड़ें, सूखी, बिखरी हुई टहनियाँ अपनी सारी अस्तव्यस्तता के साथ प्रकृति की सुन्दरता को ही उजागर करती हैं और जिस वस्तु को सामान्य जन भद्दी कह छोड़ते हैं, उसमें भी कलाकार को एक आकर्षण-सा प्रतीत होता है । कुरूपता में भी जीवन का कोई ऐसा दृश्य प्रस्तुत किया जा सकता है कि चित्र शानदार मान लिया जाय और शायद एक 'मास्टर-पीस'—यह बात मेरे मन की गहराइयों से बार-बार उठती और मैं कैमरे का अधिक से अधिक कमाल दिखाने के लिये उत्सुक हो जाता ।

कला जिस धुन की भेंट चाहती है, वह मैं प्रस्तुत कर रहा था । अपनी पत्नी की आँखों में मैं दीवाना था । पर मैंने यह निर्णय कर लिया था कि कला की पूजा तो करनी ही होगी, लाख कोई दीवाना कहे और विस्मित नयनों से देखा करे । मैं सोचता कि वह दिन दूर नहीं जब मेरा भी कोई न

कोई मास्टरपीस तैयार हो जायगा। किसे खबर कि वह किसी प्रदर्शनी में संसार भर का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर ले, इसे बड़े से बड़ा इनाम दिया जाय। फिर जब संसार के किसी बड़े पत्र में मुख-चित्र के रूप में वह प्रकाशित हो तो मैं उसे अपनी भोली पत्नी को दिखाऊँ और कहूँ कि जिसे वह दीवाना समझती थी उसने भी कुछ कर दिखाया है, उसका भी कुछ मूल्य है।

अपने कैमरे के साथ मेरी निकटता प्रतिदिन बढ़ती रही। अब यह मेरी मल्लिकयत थी। इस पर मेरा रंग चढ़ रहा था। मैं इसका रोब मानता था। भले ही इसका लेन्स बहुत बढ़िया न था, न यह देखने में ही बहुत सुन्दर था। पर यह बहुत बहादुर था। अब यह मेरा अपना कैमरा था—मेरा साथी और मेरे दुख-सुख का भागी। अपनी अलबम में मैं पचास प्राकृतिक दृश्यों के फोटो चिपका चुका था और मैं सदा अलबम खोल कर उनकी ओर देखता रहता। इससे मेरी आत्मा को बड़ी शान्ति मिलती। मैं यह समझ गया था कि पहाड़ों का वातावरण चिरकाल से मनुष्य को प्रिय रहा है और यह उसे सदा प्रिय रहेगा। सूर्यास्त का फोटो देखते-देखते मैं यह अनुभव करता कि मैं भी एक सूर्य हूँ और धीरे-धीरे अस्त होता जा रहा हूँ। पर इससे क्या होता है? मेरा मन कहीं बीच में से ही कह उठता, फिर उषा का दृश्य सामने आयगा और मेरा चेहरा जगमग-जगमग कर उठेगा।

फिर कुछ दिन बाद मैंने देखा कि अनजाने ही मेरा दृष्टिकोण बदल रहा है। प्राकृतिक दृश्य भी अपने स्थान पर सुन्दर हैं, मैंने सोचा, पर मानव आकृतियाँ भी तो आँख से ओझल नहीं की जा सकती। केवल सुन्दर चेहरों पर ही बात खत्म नहीं हो जाती। हर चेहरा फोटो के योग्य होता है और अपने स्थान पर अद्वितीय होता है—यह बात मैं बहुत जोर दे कर कहना चाहता था।

मैंने अनुभव किया कि मैं गढ़वाल का एक पहाड़ी किसान हूँ और एक पहाड़िन मेरे सामने नखरे कर रही है। यह पहाड़िन कोई गौर स्त्री नहीं थी, मेरी अपनी पत्नी थी। उसकी नाक पहले की तरह मोटी थी, बाँयें गाल पर एक दाग भी था। पर जब वह मुस्कराती, मुझे लगता कि उसकी मुखाकृति बदल रही है और देखते-देखते वह एक सुन्दरी में परिणत हो जायगी।

‘सुन्दर पहाड़िन’—यह था उस फोटो का शीर्षक जिस में मैंने अपनी पत्नी को एक भरने पर मुँह धोते दिखाया था। उसकी एक-एक रेखा से यौवन की किरणें फूटी पड़ती थीं—जैसे वह सदा से इस भरने पर मुँह धोती आई हो और यह भरना उससे परिचित हो। मैं इस चित्र की प्रशंसा करता, पर मेरी पत्नी यही समझती कि स्वयं उसी की प्रशंसा की जा रही है।

फिर मैं मिसेज़ ओनियाल की पोर्ट्रेट बनाने की धुन में दीवाना हो गया। सचमुच वह गढ़वाली सौन्दर्य का एक जीवित प्रतीक थी। अब वह मेरी पत्नी की पक्की सहेली थी। मिस्टर ओनियाल भी मेरे बहुत निकट आ चुके थे। जब मैंने सुना कि मिसेज़ ओनियाल ने ‘सुन्दर पहाड़िन’ की बहुत प्रशंसा की है तो मैं उस दिन की बात जोहने लगा जब वह स्वयं मुझे अपने फोटो के लिये कहेगी। पर इसे मेरा दुर्भाग्य ही कहिये कि न कभी उसने यह बात चलाई और न कभी मिस्टर ओनियाल के मुँह से ही इस सम्बन्ध में कुछ सुनने को मिला।

काश मिसेज़ ओनियाल मेरे कैमरे के सामने बैठ सकती। दूर से चोरी-छिपे मैं अपने कैमरे का शटर दबा सकता था। पर इस से काम न बनता। रोशनी ठीक दिशा से पड़नी चाहिये। जिधर चाहूँ हाथ से उसका चेहरा घुमा सकूँ और दाँये गाल पर एक लट सरका सकूँ—बस मैं तो इसी प्रतीक्षा में रहा।

कभी मैं सोचता कि मिस्टर ओनियाल से पूछ लूँ। फिर

सोचता कि इसकी भी क्या आवश्यकता है। वह इसे बुरा थोड़े ही समझता होगा। कभी सोचता कि यदि मैं उससे पूछूँ भी और वह इन्कार करदे तो मैं सचमुच बहुत मुश्किल में पड़ जाऊँगा।

एक दिन मैंने खिड़की में से मिसेज़ ओनियाल को अपनी पत्नी के समीप बैठे केशों में कंवी करते देखा। सचमुच यह उसका फ़ोटो खींचने का बहुत अच्छा अवसर था। पर इसे मेरा दुर्भाग्य ही समझिये कि मेरा कैमरा उस दिन काम नहीं कर रहा था। उसके शटर में थोड़ा नुक्स पड़ गया था। सवरे का समय था। अभी मिसेज़ ओनियाल की काली मदमाती आँखों में नींद का उन्माद बाक़ी था। ओ मेरी चाँदनी रातों की अप्सरा—मैंने उसे अपने मन में सम्बोधित किया।

फिर मैंने झट बाहर जा कर बड़े गम्भीर स्वर में कहा—
“अपनी सहेली को आप इतना भूल जाती हैं। तीन दिन से न न जाने आप कहाँ रहीं। इतना समीप मकान और फिर हम लोगों की इनकी उपेक्षा।”

वह खिलखिला कर हँस पड़ी। मेरी पत्नी भी लोट-पोट हो गई। काश ! मैं उस समय उन दोनों का फ़ोटो खींच सकता।

गाँव में भी तो सुन्दरता मिलेगी। वहाँ क्यों न चला जाय—यह विचार वर्षाऋतु के मेघ के समान मेरे मन पर फैलता चला गया। वहाँ भी काली मदमाती आँखें मिलेंगी—इन आँखों से कहीं अधिक बेपरवाह। वहाँ कोई पाबन्दी न होगी। ओनियाल वहाँ भी होंगे। पर शायद उनसे आज्ञा लेने की आवश्यकता न पड़ेगी। पहाड़िनें तो पहाड़ की पुत्रियाँ हैं। पहाड़ के फ़ोटो लिये जा सकते हैं तो उसकी सुन्दर छबीली पुत्रियों के फ़ोटो लेने से कौन मना कर सकता है।

फिर एक दिन देर तक मैं अपने कमरे में चुपचाप बैठा रहा।

बाहर से मिसेज ओनियाल की मधुर आवाज़ मेरे कानों तक पहुँचती रही। वह बहुत धीरे-धीरे बोल रही थी। पर कभी-कभी उसकी आवाज़ ऊँची हो जाती जैसे बाँसुरी का स्वर ऊपर उठ आया। 'सुन्दर पहाड़िन'—उसने ज़रा ऊँची आवाज़ से कहा। फिर उसकी आवाज़ न आई। मैं समझ गया कि वह मेरे उस फोटो की प्रशंसा कर रही थी। चंचल पहाड़िन! चंचल ही नहीं चतुर भी। मैंने सोचा कि वह शायद अपनी सुन्दरता के सम्मुख मेरी पत्नी को कुछ भी नहीं समझती। उसकी नाक मोटी सही। बाँयें गाल पर एक दाग भी सही। पर इसका यह अर्थ नहीं कि वह भद्दी है। चलो वह भद्दी ही सही, वह मेरी है—मेरी 'सुन्दर पहाड़िन'।

मैं उठ कर खड़ा हो गया और अब मैं खिड़की में से बाहर देख सकता था। मैंने देखा कि मिसेज ओनियाल 'सुन्दर पहाड़िन' को बड़े ध्यान से देख रही हैं। मुझे मन ही मन में यह कहना पड़ा कि यह स्त्री दिल की बुरी नहीं है। वह अवश्य एक दिन मुझे अपने फोटो के लिये कहेगी या मिस्टर ओनियाल से कहलायगी।

पर वह क्षण न आया जिसकी मैं वाट जोह रहा था। बल्कि शतरंज का मोहरा और भी उलटा पड़ा, क्योंकि मिसेज ओनियाल अचानक अपने मायके चली गई।

मधुमक्खियों के समान पहाड़िनें मेरे मन में मधु एकत्रित कर रही थीं। मिसेज ओनियाल उपस्थित न थी। पर वह मधु, जिसे वह छोड़ गई थी, कुछ कम न था। अब मैं चुपचाप नहीं रहता था। मेरी पत्नी भी यह देख कर मुस्करा उठती। "क्या सोच रही हो 'सुन्दर पहाड़िन'?" मैं पूछता और वह खिलखिला कर हँस पड़ती जैसे कोई पहाड़ी चश्मा गुनगुना उठे।

पर मैं भीतर से उदास था और कुछ कम ही बोलता। मन

में बड़ी खींचतान रहती। मिसेज़ ओनियाल को भुलाने का लाख यत्न करता, पर ऐसा कर न सका। उसका दिया हुआ मधु बाहर कैसे फेंक देता ?

एक दिन मैं नीचे की घाटी की ओर चल पड़ा। कई दिनों के बाद मैं बाहर निकला था। कोई तीन मील चल कर थक गया। दूर से आते गीत के स्वर सुनते-सुनते ज्यों ही आगे बढ़ा मैंने देखा कि पगडंडी बहुत कठिन है। दो-तीन बार तो मैं बजरी से फिसलते-फिसलते बचा।

पैर भारी हो रहे थे। पर फूलों की खुशबू भी तो मस्तिष्क में उतर रही थी। मन में किसी 'सुन्दर पहाड़िन' का फोटो लेने का विचार नाच रहा था। बस यह पहाड़िन इतनी सुन्दर होनी चाहिये कि देखते ही हृदय कह उठे—ओ, मेरी चाँदनी रातों की आसरा !

पता नहीं मैं किस गाँव की ओर जा रहा था। जिधर को मुँह उठा, उधर को ही हो लिया। मन ही मन में मैंने अपनी बहुत आलोचना की, कई व्यंग कसे। पर पैर आगे बढ़ते ही गये। स्वप्न में मैंने मिसेज़ ओनियाल को देख लिया था—उस घने केशोंवाली सुन्दरी को जो इतने दिन मेरी आत्मा में मधु-संचय करती रही थी। मैंने सोचा कि शायद किसी अगले गाँव में उसी का मायका हो और वह मुझे किसी खेत की मुँडेर पर खड़ी नज़र आ जाय। वह समझती होगी कि उससे सुन्दर स्त्री मुझे देखने को नहीं मिलेगी। इन स्त्रियों ने कला के मुकाबिले में कोरी सुन्दरता को क्या समझ रखा है ? कलाकार भी कोई उनका आश्रित नहीं। उसमें भी आत्मसम्मान होता है।

पाम के खेत से किसी के गाने की आवाज़ आई—

तेरी मेरी माया सूझा

चलू की चटनी

अर्थात् तेरी मेरी प्रीति तो चूल् की चटनी के समान है। मैं सोचने लगा कि एक प्रीति ही क्यों, मनुष्य का सारा जीवन ही, और विशेष रूप से मेरा जीवन, चूल् की चटनी के समान एक खटमिठी चीज है। यह गीत तो मिसेज़ ओनियाल भी जानती होगी। उसे यह भी याद होगा कि सर्वप्रथम यह गीत उसने किस से सुना होगा। शायद गाँव की कुँवारियों के साथ वह भी किसी न किसी नृत्य में सम्मिलित होती हो और आरंभ में यही गीत गाती हो। काश ! मैं उसे किसी ऐसे नृत्य में मस्त हिरनी की तरह हचकोले खाते देख सकूँ और हो सके तो मैं इस नृत्य का एक फोटो भी ले लूँ जिसमें वह मुस्करा रही हो।

एक स्थान पर मैं बैठ गया और आँखें बन्द करके उस सुन्दरी की कल्पना करने लगा। धरती भीगी हुई थी और मेरी कल्पना की धरती को भी तो मानो आँसुओं ने तर कर दिया था। मेरे मन के कलाभवन में मिसेज़ ओनियाल का चित्र उपस्थित था। पर मैं तो उत्सुक हो रहा था कैमरे का जौहर देखने के लिए।

मेरी दृष्टि नीचे खेत में बैठी दो स्त्रियों की ओर घूम गई। दबे पाँव मैं उधर ही को चल दिया। उन्हें पता भी न चले और मैं उनका फोटो खींच कर आगे की ओर चलता बनूँ, बस यही मेरी इच्छा थी।

छोटी आयु की स्त्री नई नवेली दुलहन प्रतीत होती थी। उसके केश कन्धों पर बिखरे हुये थे, जैसे पहाड़ की चोटियों पर साये फैल रहे हों। वह दूसरी स्त्री के केशों में कंधी कर रही थी जो उसकी मास मालूम होती थी।

इस भय से कि कहीं वे मेरी पद-ध्वनि न सुन लें, मैं धीरे-धीरे उनकी ओर जा रहा था। सोचता था कि यदि मैं यह फोटो

ले सका और वह भी उनको मालूम हुये बिना, तो शायद यह मेरी कला का उत्कृष्ट नमूना मान लिया जायगा। दुलहन के आभूषण बहुत कीमती न थे। न उसके वस्त्र ही बहुत भड़कीले थे। मेरा कैमरा बिलकुल तैयार था। उधर वह दुलहन अपनी सास की बाँई लट को बायें हाथ से ऊपर खींच कर अपने दायें हाथ में पकड़ी हुई कंधी को केशों के समीप लायगी और इधर मैं भट अपने कैमरे का शटर दबा दूँगा—मैंने यह निर्णय कर लिया था। रोशनी ठीक पड़ रही थी।

पर इससे पहले कि वह लट ऊपर उठाई जाती, उन्होंने सहसा पीछे मुड़ कर देख लिया और जोर से चीख मारी।

मैं डर गया और सहमी हुई अवस्था में ही मैंने शटर दबा दिया।

वे अपनी भोंपड़ी की ओर भाग गईं। वे चीखें मार रही थीं। मैंने समझा कि कोई बड़ा संकट समीप है। मैं भट भाग निकला। पगडंडी आगे एक सड़क में जा मिली। मैं अन्धाधुन्ध भाग रहा था। जैसे मुझ से कोई खून हो गया हो। मेरा दिल धड़क रहा था। साँस फूल रहा था। मालूम नहीं कि मेरे पैरों में कहाँ से इतनी शक्ति आ गई थी—मैं भागता जा रहा था, पता नहीं किधर।

वह दुलहन मिसेज ओनियाल से भी सुन्दर थी। पर उस समय मेरे लिये सुन्दरता की भावना का अनुभव असम्भव था। सिमट-सिमटा कर मेरा मन रक्षा का कोई उपाय ढूँढ़ रहा था। किधर जाऊँ ? यदि इन स्त्रियों के घरवालों ने मेरा पीछा किया तो ख़ैर नहीं। मैं क्यों इधर आया ? क्यों न फोटो लेने से पहले उनसे पूछ लिया।

सामने एक गाँव नज़र आ रहा था। सड़क पर तीन ग्वाले मिल गये। मैं उनके साथ-साथ चल पड़ा। काफी देर हो गई

थी। पीछे से कोई न आया तो मैंने समझा कि बच गया।

मैं यह न समझ सका कि वे स्त्रियाँ रोने क्यों लग गई थीं, चीखें क्यों मारने लगी थीं। आखिर मैंने क्या किया था? पहाड़ की पुत्रियाँ हो कर यों रोना, यों चीख मारना तो शोभा नहीं देता। मैं कलाकार हूँ। मेरा कैमरा किसी चित्रकार की तूलिका से कम महत्व नहीं रखता। अन्तर तो केवल माध्यम का है। कला तो आखिर कला है। वह सुन्दर दुलहन, उसके वह काले रेशमी केश—पहाड़ों के सायों जैसे। नये गाल—नये पके चूल्हों—जैसे जिन्हें मनुष्य के हाथों ने मैला न किया हो। उसके पति के ओठों के नीचे ये गाल कितने गर्म रहते होंगे।

पीछे से आवाजें आने लगीं—

ठहर जा, बदमाश....ठहर जा,...ठहर जा, बदमाश साले!...आज तेरा खात्मा हो के रहेगा...साले बदमाश!

यह आवाजें क्या आई, बादल गरज उठे। दो ग्वाले भाग गये, एक मेरे पास ही खड़ा रहा।

दो पहाड़ी हाथों में बछियाँ पकड़े भागे आ रहे थे। मैं चाहता था कि भाग जाऊँ, पर उस समय मेरे पैर धरती में गड़े रह गये। स्वयं मृत्यु मुझे दबोचने के लिये आ रही थी। दोनों पहाड़ियों ने शराब पी रखी थी। एक शायद उस छबीली दुलहन का पति था और बूढ़ा पहाड़ी उस नवयुवक का पिता मालूम होता था।

नवयुवक ने आगे बढ़ कर मुझे गर्दन से पकड़ लिया और जोर से मुझे अपनी ओर खींचा। मैं भी बहुत कमजोर तो न था, पर निहत्था था। नरमी के सिवाय कोई चारा न था। वह एक शिकारी के समान मुझे घूर रहा था। फिर उसका हाथ ऊपर उठा। मेरे गाल पर उसने जोर से चपत दे मारी और पीछे से

उस बूढ़े ने मेरी पीठ पर दो-तीन बार बर्छी की मूठ दे मारी ।

उस ग्वाले ने बीच-बचाव करना चाहा तो वह नवयुवक बोला—“रुक जा, पास आया तो तेरी भी खैर नहीं । और मुझे सारे वस्त्र उतार देने के लिये कहा गया ।

सब वस्त्र मैंने भट उतार डाले, बस एक पायजामा रह गया । इसे उतारने से मैं झिझक रहा था । खूनी रीछ के समान वह नवयुवक मेरी ओर लपका और उसने वह काम कर दिखाया जिसे करने से मैं झिझक रहा था । शायद वह चाहता था कि पहले मेरे वस्त्र जला दिये जायँ, फिर मेरा कैमरा चूर-चूर कर दिया जाय, और फिर मेरी गर्दन.....

सूर्य को परे पहाड़ियों में अस्त हुए अधिक देर नहीं हुई थी, और इधर एक कलाकार मौत के घाट उतारा जानेवाला था । मुझे अपने अलबम के उस सुन्दर चित्र का ध्यान आया जिसमें मैंने सूर्यास्त का दृश्य दिखाया था । हाँ, मैं भी एक सूर्य हूँ, मैंने सोचा, फिर सवेरा होगा । पर नहीं, मृत्यु के विचार ने मुझे एकदम कँपा दिया ।

फिर अचानक उस गढ़वाली नवयुवक के मन ने जबरदस्त पलटा खाया और वह बोला—“इधर आ, उठा ले अपने वस्त्र और फोटो की मशीन ।”

उसने बड़ी घृणा से मेरी ओर देखा और फिर बादल के समान गरज कर बोला—“जा इस पहाड़ पर चढ़ जा, पीछे मुड़ कर न देखना ।”

कपड़े और कैमरा उठा कर और मन ही मन में उन्हें धन्य-वाद देता हुआ भट मैं साथवाले पहाड़ पर चढ़ने लगा । एक बार भी मैंने पीछे मुड़ कर नहीं देखा । मृत्यु को मैं बहुत नीचे छोड़ आया था और अब केवल उसकी याद ही मुझे डरा रही थी । चारों ओर गहरा अन्धकार छा रहा था । कैमरा गले में लटका

लिया था और अपने वस्त्र मैंने कन्धे पर रख लिए थे। रास्ता तो था नहीं, खेतों में कमर तक घँसता हुआ मैं ऊपर चढ़ने का यत्न कर रहा था। मेरे अंग-अंग में पीड़ा का अनुभव हो रहा था। ऐसी सज़ा शायद ही पहले किसी कलाकार को मिली हो।

मैं आगे बढ़ रहा था। सड़क पर पहुँच कर एक भरने के जल से मैंने अपना टाँगे धो डाली और फिर से वस्त्र पहन लिये। अब सर्दी मालूम होने लगी। मैं हैरान था कि अब तक कैसे स्वर्ग से निकाले गये आदम के समान नंग धड़ंग चला आया था।

मैंने दूर से देखा कि सड़क पर एक साँप लम्बा पड़ा हुआ है। मैं डर गया और नीचे की तरफ भागा। थोड़ी देर बाद मैं फिर आगे बढ़ा। साँप पहले के समान लम्बा पड़ा था। इसका भी क्या सबूत कि यह साँप ही है, यह सोच कर मैंने एक कंकड़ उठा कर फेंका। साँप हिला नहीं। यह साँप नहीं था, वृक्ष की उभरी हुई जड़ थी। मुझे अपना पुराना विचार याद आ गया—वृक्षों की उभरी हुई जड़ें और सूखी बिखरी हुई इन्हिया अपनी सारी अस्त-व्यस्तता के साथ प्रकृति की सुन्दरता को उजड़वल करती हैं।

उधर से किसी की पदध्वनि सुनाई दी। यह कोई पहाड़ी था। उसने बताया कि थोड़ा ऊपर जा कर एक चौरस्ता मिलेगा और बायें हाथ को मुड़ने पर सड़क सीधी मसूरी पहुँचा देगी।

×

×

×

सवेरे उठ कर मैंने सल्यूशन तैयार किया और कैमरे से फिल्म निकाल कर धो डाली। मैंने देखा कि भय की अवस्था में कैमरे का मुँह मेरे अपने मुँह की ओर मुड़ गया था।

फिल्म में मेरा अपना भद्दा-सा धुंधला चेहरा नज़र आ रहा था।

देवता गिरता है

छोटी बहन बहुत खुश दिखाई देती है। शायद वह कोई जलपरी है और गहर पानियों से बाहर आ कर उसकी आँखें एक नई दुनिया का दृश्य देख रही हैं। यह रात किसी तरह गुजर जाय। कल सबेरे वह चरखा कातेगी। लम्बे बारीक तार निकाल कर उसे कितनी खुशी होगी। चरखा तो घर का सुहाग है। खेत से कपास आ गई। घर में सूत तैयार कर लिया गया। गाँव ही में जुलाहे ने कपड़ा बुन दिया। सदियों से यही होता आया है। मिल का कपड़ा तो नये ज़माने की चीज़ है। हुआ करे। वह तो चरखे से मुँह न मोड़ेगी।

बड़ी बहन को भी खुश होना चाहिए। छोटी बहन चरखे से लौ लगायगी। सबेरे ही सूर्य भगवान् को नमस्कार कर के चरखा कातना आरम्भ करने की रस्म पूरी की जायगी। नई रुई की पूनियाँ बना ली गई हैं। पुराना चरखा, जो दालान की दीवार पर खूँटी के सहारे लटका हुआ था, उतार लिया गया है। एक तरफ़ मकड़ी ने जाला बुन रखा था। सब जगह गर्द की मोटी तह जमी हुई थी। गर्द भाड़ते समय छोटी बहन का

मन उछल-उछल पड़ता था। जैसे कोई दूर से आता हुआ गीत सुन रही हो।

यह नहीं कि छोटी बहन पहली बार पूनी पकड़ेगी। माँ के चरखे पर वह कभी की हाथ साध चुकी है। पर जब नियमानुसार कातना आरम्भ किया जाय तो यह रस्म पूरी की जाती है और लड़कियों की आँखों में एक नई ही खुशी नाच उठती है।

बड़ी बहन अपने हाथ से चरखे को केसर का तिलक लगायगी, अपने हाथ से पहले पूनी के सिरे पर सिन्दूर लगायगी। मानो यह किसी दुलहन की माँग हो और जब छोटी बहन लम्बा बारीक तार निकालेगी तो बड़ी बहन कह उठेगी—सूत का यह बारीक तार नदी जितना लम्बा होता चला जाय। इसी रस्म में भाग लेने के लिए बड़ी बहन ससुराल से यहाँ आई है।

छोटी बहन चाँद की ओर देख रही है। दूर चाँद में अब भी उसे एक स्त्री दिखाई दे रही है—चाँद की माँ, जो न जाने कब से बैठी वहाँ चरखा कात रही है। चाँद के धब्बे निरर्थक तो नहीं। चाँद की माँ की कहानी तो बचपन की प्यारी कहानियों में से है। उसे खूब याद है कि किस तरह वह चाँद की माँ के चरखे की घूँ-घूँ सुनने में असफल रह जाया करती थी। माँ कहा करती थी—चाँद तो हम से बहुत दूर है, बेटी ! इतना थोड़ा है कि चाँद की माँ नज़र आ रही है और तुम साफ़-साफ़ कह सकती हो कि वह चरखा कात रही है।

चाँद की माँ के चरखे की ओर देखते-देखते छोटी बहन को उस पुराने चरखे का ध्यान आ जाता है, जिसे वह रोज़दीवार के सहारे खूँटी पर लटकता देखती रही है। उसे उन दिनों का ध्यान आ जाता है, जब इस चरखे पर बड़ी बहन काता करती थी। ज्यों ही उसने व्याह के बाद ससुराल की राह ली, यह

चरखा दीवार पर लटका दिया गया। यह देख कर कि कोई इस चरखे पर से गर्द नहीं भाड़ता उसे क्रोध आने लगता था। फिर एक दिन माँ से यह सुन कर कि असल में यह चरखा उसी का इन्तज़ार कर रहा है उसे कितनी खुशी हुई थी।

बड़ी बहन सोच रही है कि कभी यह चरखा उसका था। कातने का रस तो अपने चरखे पर आता है। इसी चरखे पर पहले-पहल उसने वह पुराना गीत गाया था जिसमें सूत के नदी जितने लम्बे तार की कल्पना प्रस्तुत की गई है—

चरखा मेरा अठफागुड़ा माल मेरी नू ता
पूनी कत्तां लमलसी तन्द कड्ढां दरियाओ
जिन्दे मेरीए, तन्द कड्ढां दरिया
माण मेरीए, तन्द कड्ढां दरिया

सभी नदियाँ तो नहीं देखी थीं उसने। उसे याद था कि उन दिनों उसने माँ से पूछ लिया था कि गीत में असल में किस नदी की चर्चा की गई है। माँ ने उसे प्यार से चूमते हुए कहा था—यह गीत तो मैं बचपन से गाती आ रही हूँ—आठ फाँक का मेरा चरखा है। मेरे माल को ताव है। मैं बहुत पोली पूनी कातती हूँ और नदी जितना लम्बा तार निकालती हूँ। नदी जितना लम्बा तार। ओ मेरी मां, नदी जितना लम्बा तार?...उसे खूब याद था कि जिस दिन उसने नियमानुसार चरखा कातना आरम्भ करने की रस्म पूरी की थी इस चरखे का तकला जोर-जोर से घूम रहा था। नई माल टूट तो न सकती थी। कुकड़ी मोटी होती जा रही थी। पहली सुन्दर कुकड़ी को देख कर उसे यों अनुभव हुआ था कि उसका अपना नन्हा-सा जीवन भी इसी कुकड़ी के समान है—यह संसार एक चरखा है।

“जाने कब से तकले घूमते आये हैं, बहन !”

“और बहन, जाने कब से नदी जितने लम्बे तार निकलते आये हैं।”

“मिलें तो अभी बनी हैं। चरखा तो पुराना है, बहन ! बहुत पुराना।”

“और माँ सच कहती है, बहन। पहला चरखा विश्वकर्मा ने अपने हाथ से बनाया था भगवान की आज्ञा से।”

“चरखा ही क्यों, बहन ! अभी उस दिन ससुराल में एक बुढ़िया कह रही थी कि जुलाहों के लिए करघा भी विश्वकर्मा ने बनाया था पहले-पहले भगवान् की आज्ञा से। जब तक खेतों में कपास पैदा होती है, बहन, चरखे और करघे को भी देश-निकाला नहीं मिलने का।”

छोटी बहन ने कभी कोई कपड़े की मिल नहीं देखी। मिल का कपड़ा तो गाँव तक चला आता है। लट्टा, मलमल, सूफ़, किस्म-किस्म के गबरून और रंग-रंग की छींटें। छटे छमाहे चरखे की साखियाँ भी मिल के कपड़े के इन्द्रजाल में फँसती रहती हैं। एक बार छोटी बहन ने भी सूफ़ की सलवार के लिए जिद शुरू कर दी थी। बड़ी बहन ने कहा था—घर फूँक तमाशा देखना चाहो तो विदेशी कपड़ा पहन लो, बहन। यह तो चरखे का अपमान होगा। गांधी बाबा का उपदेश तो यही है, बहन।

बड़ी बहन जानती है कि पीढ़ियों से गाँव की कुँवारियाँ अपने गुदगुदे शरीर पर खहर पहनती आई हैं। मिल का कपड़ा पहले कहाँ होता था। विदेशी कपड़ा सब मिलों में तैयार होता है। खैर अब विदेशी कपड़ा आना तो काफ़ी रुक गया है। देश का रुपया अब बहुत कुछ देश ही में रहेगा। पर नये युग के आविष्कारों ने इस देश को भी छू लिया है। यहाँ भी विदेशी ढंग की मिलें तैयार हो गई हैं। करघे का खहर भी अब कब

तक ख़ैर मनायगा और मिल के कपड़े के सामने खहर के दिन टिक सकता है।

“चरखा तो घर का सुहाग है, बहन ! अपने खेतों की कपास, अपने घरों का सूत। यही तो गांधी बाबा का उपदेश है।”

“पर बहन, क्या छूटे छमाहे भी मिल का कपड़ा न खरीदना चाहिए ?”

बड़ी बहन कोई जवाब नहीं देती। छोटी बहन सोचती है कि खहर तो गुदगुदे शरीर पर चुभेगा ही। सस्ता जापानी कपड़ा तो ठीक विदेशी हुआ। मैंहगा अँगरेजी कपड़ा अब इधर आता नहीं, क्योंकि किसी की जेब में अब इतने पैसे नहीं रहे। देसी मिलों का कपड़ा ही सही। पर जी तो ललचाता है जापानी कपड़े को। कितना चमकदार और मुलायम होता है यह जापानी कपड़ा और सस्ता भी। देसी मिलोंवाले इतना चमकदार, मुलायम और सस्ता कपड़ा क्यों नहीं बनाते ?

बड़ी बहन अब भी खामोश रहती है। छोटी बहन सोचती है कि बड़ी बहन ससुराल जायगी। बस थोड़े ही दिन और है इधर। वैशाखी का मेला तो आने दो। मैं भी अपनी सहेलियों की तरह मुलायम जापानी कपड़े की सलवार सिलाऊँगी। चरखा तो मैं काटूँगी ही। पर दिल का शौक भी तो कोई चीज है। हुआ करे गांधी बाबा का उपदेश।

बड़ी बहन सोचती है—अगर उसे कोई शौक रहा तो लच्छेदार इज़ारबन्द का। ब्याह से चन्द बरस पहले मैंने एक बार रेशम काता था। फिर मैंने बढ़िया लच्छेदार इज़ारबन्द तैयार किया तो माँ ने लाख समझाया—इसे ब्याह के लिए रख छोड़ बेटी ! पर मैंने एक न मानी थी। मैंने माँ से कहा था—फिर क्या रेशम का तोड़ा हो जायगा ? अपने हाथ होंगे और चरखा भी। सलवार में इज़ारबन्द डालते हुए मेरे मन में

गुदगुदी-सी होने लगी थी। एक दिन मेरी आँखों में उस शहजादे की कहानी फिर गई थी जो भेस बदल कर राजधानी की गलियों में चक्कर लगाया करता था। अन्दर आँगन में चरखा कातनेवाल्याँ जमा थीं। शहजादा उनकी बातें सुनने लगा। एक कुँवारी बोली—शहजादे की दुलहन बन सकूँ तो मेरे धन्य भाग। शहजादे के दिल में गुदगुदी-सी हुई। फिर एक दिन शहजादे ने इसी कुँवारी को दुलहन बना लिया। पर मैंने सोचा था कि मैं कभी किसी शहजादे की दुलहन बनना पसन्द न करूँगी क्योंकि कोई शहजादा मुझे चरखा थोड़े ही कातने देगा।

“शहजादे की कहानी तो तुझे भी याद होगी, बहन ! उस शहजादे की कहानी जिसने चरखा कातनेवाली को दुलहन बना लिया था।”

“हाँ याद है, बहन !”

हाँ, शहजादे की कहानी छोटी बहन को खूब याद है। वह सोचती है कि शहजादे के महल में तो नरम शरीर के लिए मुलायम रेशमी लिवास मिल सकता है। पर यह सब तो एक हवाई किला है। उसका शरीर तो शायद कभी खुरदरे खहर की कैद से आजाद होने का नहीं।

बड़ी बहन जानती है कि उसकी समुराल कोई सुख का स्थान नहीं है। पति नाराज़ रहता है। उसे शिकायत है कि उसकी पत्नी समय की धारा के साथ आगे नहीं बढ़ती। वह चरखे की शकल तक नहीं देखना चाहता। कहता है—देसी मिलों का कपड़ा क्या बुरा है ? यह तो स्वदेशी है। देश की चीज़ है, देश में बना है, देश का माल है। यह कपड़ा तो ज़रूर स्वदेशी है। उसे याद है कि उसका पति यह भी कह उठता है—चरखा ठहरा मूर्खता के युग की निशानी। इसे

क्रायम रखने की कोशिश पीछे जानेवाली बात है। यह नया युग है। नई इसकी माँगें हैं। कपड़े की मिलें न हों तो अकेले चरखे और करघे कहाँ तक लोगों का तन ढक सकते हैं ? यह मशीन का युग है। मशीन का सम्मान तो करना ही होगा। चरखा भी अपने आप में एक मशीन ही तो है। सभ्यता के शुरू में प्रकट हो सकनेवाली मशीन। नये युग की मशीनों का अपमान तो सभ्यताका अपमान होगा। अपने पति की यह बातें सोचते हुए बड़ी बहन पलंग पर लेटे-लेटे करवट तक नहीं लेती। वह यह भी जानती है कि वह अपने पति की निगाहों में मूर्खता के युग की स्त्री बन कर रह गई है। उसके घायल मन के लिए अब कोई शान्ति सम्भव नहीं। अपनी इच्छा वह पूरी नहीं कर सकती, पति के साँचे में अब वह ढल नहीं सकती।

आँखों को कुछ-कुछ मींच कर छोटी बहन दूर चाँद की तरफ देखती है और कहकहा लगा कर हँस पड़ती है। कहती है—
“कितना दिलचस्प हवाई किला है, बहन। चाँद के धब्बे फिज़ूल तो नहीं। चाँद की माँ मजे से चरखा कात रही है। न जाने कब से ?”

बड़ी बहन खामोश रहती है और सोचती है—अब के माँ को होशियारी से काम लेना चाहिए। हाँ, अब तो उसकी अपनी कोशिश भी यही रहेगी कि छोटी बहन का ब्याह किसी ठीक जगह हो और उसे ठीक अपनी मर्जी का दूल्हा मिल जाय !

“अब सो जाओ, बेटियो ! रात बहुत चली गई।”

“आज रतजगा ही सही, माँ।”

“रतजगे का क्या लाभ ?”

“बड़ी बहन रोज़-रोज़ तो नहीं आती और ऐसी रात भी

रोज़-रोज़ नहीं आती, माँ ।”

अन्दर से माँ खुश है। वहनें हों तो ऐसी। नेवाड़ के पलंग पर लेटे-लेटे वह तारे गिन रही है।

शायद बड़ी बहन की एक-एक रंग विद्रोह आरम्भ कर देगी—एक भयानक विद्रोह। समुराल नहीं नर्क है, जहाँ चरखा कातने की भी मनाही है। क्या इस अत्यचार को चुपचाप सह लिया जाय ?

छोटी बहन अपने गालों को मसल रही है। उसके गाल बहुत गुदगुदे हैं—नई पूनियों के समान, जिनमें से वह सवेरे ही लम्बे बारीक तार निकालेगी। गालों से हट कर उसका हाथ नाक पर आ टिका। फिर ओठों पर से होता हुआ ठुड़ी पर आ गया। सवेरे उसकी पहली कुकड़ी का अगला सिरा निश्चय ही उसकी अपनी ठुड़ी के साँचे में ढला हुआ मालूम होगा। जिस दिन चाँद की माँ ने नियमानुसार चरखा कातना आरम्भ करने की रस्म पूरी की थी, क्या उसकी पहली कुकड़ी का अगला सिरा भी उसकी अपनी ठुड़ी के साँचे में ढला हुआ मालूम होता था ?

माँ की आँख लग गई है। दोनों बहनें जागती हैं। यह कैसा रतजगा है ?

बड़ी बहन सोचती है—क्या मैं चरखे से भी गई गुजरी हूँ ? चरखे का पहिया धुरी पर चलते-चलते भारी हो जाता है तो धुरी में तेल देना आवश्यक समझा जाता है। फिर चीं-चीं की आवाज़ नहीं आती। जब स्त्री का जीवन कठिन हो जाता है, तो सचमुच यह ऐसे ही होता है जैसे जिन्दगी के चरखे का पहिया भारी चलने लगे।

“क्या सोच रही हो, बहन ?”

“यों ही समुराल का ध्यान आ गया था, बहन !”

“अब शायद नौद न आयगी ।”

“नहीं आती है तो न आय, बहन ! रतजगा ही सही ।”

“यह अच्छा रतजगा है, बहन ! शायद आज चाँद की माँ का भी रतजगा है । चरग्या कातती हुई वह कभी नहीं थकती । हा हा ही ही । कौन देता है उसे इतनी पूनियाँ ?”

“चाँद की माँ की बात छोड़ो, बहन । अपनी बात करें ।”

“हाँ बहन, अपनी बात करें ।”

“समुराल का दुःख बहुत बुरा होता है, बहन ।”

“हाँ बहन, चाँद की माँ तो बहुत सुखी होगी अपनी समुराल में ।”

“चाँद का बाप मेरे जीजा जी जैसा तो है नहीं । उन्होंने तो तुम्हें कातने तक की मनाही कर रखी है । और बहन कितनी मुश्किल से उन्होंने तुम्हें अब के यहाँ आने दिया ।”

“हाँ बहन । पर छोड़ो यह किस्सा । सोचने से तो गम उल्टा बढ़ता ही है ।”

बड़ी बहन की कल्पना में समुराल के सारे दुर्व्यवहार धुँधले चित्रों के समान फिरने लगते हैं । इन्हें देखते हुए वह पलंग पर करवट तक नहीं लेती ।

छोटी बहन के जी में रह-रह कर यह खयाल आ रहा है कि बड़ी बहन को भींच ले । पर वह केवल करवट लेने पर सन्तोष करती है । सोचने से गम उल्टा बढ़ता ही है । बड़ी बहन की यह बात उसकी समझ में नहीं आती । जीजा जी बड़ी बहन पर कितना अत्याचार करते हैं । काश ! बड़ी बहन की जगह मैं होती । मैं तो सचमुच उन्हें नाकों चने चबवा देती । नहीं नहीं, यह मैं क्या सोच रही हूँ, जीजा जी तो बड़ी बहन के पति हैं । पर स्वयं बड़ी बहन ही कुछ-कुछ बदल क्यों नहीं जाती ? उसका ताजा मूली जैसा शरीर कितनी जल्दी ढीला पड़ गया है । उसकी उभरी हुई हड्डियों पर तो यह ज़बरदस्ती पहनाया हुआ रेशम भी चुभता

होगा। खहर तो शायद वह पहन ही न सके।

“उठ कर नहा-धो ले, बेटी। आज चरखे को केसर का तिलक लगायगी तेरी बड़ी बहन।”

“अभी लो, यह दिन रोज़-रोज़ तो नहीं आता।”

“चरखे की घूं-घूं तो घर का संगीत है, बेटी !”

“हाँ माँ।”

“चरखे को तिलक लगाने से पहले मन की शान्ति चाहिए—

पर छोटी बहन मन ही मन में जापानी कपड़े की कमीज़ और सलवार की तस्वीर देख रही है। चरखा तो वह कातेगी ही। हाँ, छटे छमाहे आनेवाले त्योहारों और मेलों पर भी उसका शरीर खुग्दुरे खहर के वस्त्र पहना करे, यह बात वह आज भी नहीं समझ सकती।

माँ कहती है—“उठ कर नहा लो, बेटियो !”

छोटी बहन कहती है—“आओ बहन, पहले चरखे को नहला दें।”

बड़ी बहन कहती है—“यह तो मेरा काम है। पर स्वयं नहाये बिना, पवित्र हुए बिना ही चरखे को नहला दूँ? बाह आज नियमानुसार चरखा कातना आरम्भ करने की रस्म पूरी करेगी और तेरी समझ का यह हाल है।”

माँ फिर कहती है—“अब देर न करो, बेटियो ! पहले उठ कर नहा लो। फिर सब काम हो जायगा।”

माँ नहा चुकी है दोनों बहनें भी नहा लेती हैं। नये कपड़े पहनकर वे चरखे को नहलाने के लिए तैयार हो रही हैं।

बड़ी बहन कहती है—“चरखे को मैं नहलाऊँगी, माँ !”

माँ कहती है—“अच्छा तुम चरखे को नहला दो। मैं केसर घोल लेती हूँ।”

छोटी बहन दौड़ कर कुछ जंगली फूल चुन लाती है। चरखा

तो हुआ घर का देवता । इसकी पूजा तो जरूरी है ।

पर चरखे को नहलाते हुए बड़ी वहन के आश्चर्य की कोई सीमा नहीं रहती । चरखे का पहिया टुकड़े-टुकड़े हो जाता है ।

माँ चिल्लाती है—“यह क्या कर डाला तूने, बेटी ! धीरे-धीरे हाथ चलाया होता ।”

बड़ी वहन कहती है—“मेरा क्या दोष है, माँ ! चरखे को घुन से बचा कर रखा होता ।”

छोटी वहन कह उठती है—“माँ का भी क्या दोष है, वहन । यह तो घुन का दोष है ।”

माँ के दिमाग पर तमाचा-सा लगता है । वह झुंझला कर कह उठती है—आज यह रस्म पूरी नहीं की जा सकती, बेटियो ? मूर्खता हुई मुझसे । चरखा घुन से बचा कर रखा होता । नया चरखा कहाँ से लाऊँगी ? बढ़ई से पूछ देखती हूँ । शायद किसी तरह मरम्मत कर दे । चरखा तो घर का देवता है । चरखा तो नया भी लिया जा सकता है । पर पुराने देवता के साथ नये देवता का क्या मुकाबला ? देवता जितना पुराना हो उतना ही शक्तिशाली होता है ।”

छोटी वहन भी अब चुप नहीं रह सकती । वह चमक कर कह उठती है—“अब चरखे में जान ही नहीं रही, माँ ! एक दिन तो देवता भी गिरता है ।”

पुराने हल

ढो लों और शहनाइयों की सलामी में वह मचल कर गाड़ी से उतरा। उसे विलकुल आशा न थी कि सारा गांव यों उसके स्वागत के लिए स्टेशन तक खिंचा चला आयगा। बापू ने लपक कर उसके गले में गेंदे के फूलों का हार पहनाया और वह भट बाप के कदमों पर झुक गया। ढोलिये जोर-जोर से हाथ चलाने लगे। शहनाइयों के स्वर भी ऊँचे उठते चले गये। भीड़ ने नारा लगाया—जो बोले सो निहाल, सत्त सिरी अकाल।

लोगों का यह उत्साह देख कर वह बड़ी मुश्किल से खुशी के आँसू रोक सका। स्त्रियों की ओर झुक कर उसने माँ के चरण छुए, चाची को प्रणाम किया, बहनों की मुस्कान का जवाब दिया, सखियों के बीच में बनी-सँवरी अपनी पत्नी की ओर गर्व से देखा। फिर अपने पाँच साल-के बेटे पूरन को उठा कर गले से लगा लिया।

वह धाढ़ता था कि हर किसी से पूछे कहो गांव का क्या हाल है और हँस-हँस कर कहे—मैं आज वापस आ गया हूँ।

मैं भँडा सिंह हवालदार। गांव की याद सदा मेरे खून को गरमाती रही। परतापे और सोहने की वह लच्छेदार गप-शप और उनका वह हाँ में हाँ मिलाने का अन्दाज़ भला मुझे कब भूल सकता था ?

ढोलों और शहनाइयों के स्वर उसे अपने व्याह की याद दिला रहे थे। व्याह हुआ, दुलहन घर आई और जैसे ही उसने बेटा जना वह किसान से सिपाही बन कर लाम पर चला गया। अब फिर वही किसान का किसान। अब वह पत्नी का दुःख-सुख पूछेगा। अब उसका हृदय और मस्तिष्क युद्ध की भीषणता से मुक्त था। अब वह गांव छोड़ कर कहीं नहीं जायगा।

भंगियों, चमारों और मीरासियों का भुरमुट जंगले के उस पार पैसों पर झपट्टा मारने के लिये तैयार खड़ा था। मुफ्त पैसे हाथ आने के लालच में जाटों के छोकरे भी जंगले के उस पार चले गये। ज्यों ही बापू ने लाल-लाल थैली में हाथ डाल कर चवन्नियों, दवन्नियों और पैसों की मुट्ठियाँ भर-भर कर अपने बेटे पर न्योछावर करना शुरू किया। वे एक दूमरे से उलझते चले गये। धमाचौकड़ी से गुज़र कर मार-पीट की नौबत आ गई। वह चाहता था कि बापू का हाथ रोक ले। पर वह खामोश खड़ा रहा। पिता की खुशी में चित्र डालना उसे किसी तरह स्वीकार न था।

“यही तो खुशी का दिन है,” कोई कह उठा, “सरपंच सिंह आज तो चाँदी के रुपये भी बरसाये जा सकते हैं।” और यह सुन कर सरपंच सिंह तेज़ी से छुट्टा फेंकने लगा।

फिर पास से कोई बोला—“एक थैली से क्या होता है ?”

“अरे चुप भी रह, अमन सिंह,” सरपंच सिंह ने तेज़ी से मुट्ठी फेंकते हुए कहा, “पूरे सौ की रेजगारी लाया हूँ।”

भीड़ की उखड़ी-उखड़ी आवाज़ें ऊँची होती चली जा

रही थीं। उसके लंगोटिये यार वस्त्रों को छू-छू कर देखते हुए उछल-उछलकर हँस रहे थे। जैसे कहना चाहते हों—हवालदार साहब, जंग में कोई तकलीफ तो नहीं हुई? घर की याद आते ही सरदारनी से मिलने को जी तड़पता होगा। हमारी याद कब आती होगी? वहाँ तो तुम्हें 'माहिया' के टप्पे भी याद न रहे होंगे, जिनमें बालो का रूप यहां तुम्हारे खून में नशा-सा पैदा कर देता था। वह भी हँसता रहा। उसकी आँखों में दुनिया भर की खुशियाँ झलक रही थीं। वह अमन सिंह से पूछना चाहता था—कहो चाचा तुम कैसे घर से खाली हाथ चले आये? आखिर चाचा का भी कुछ फर्ज होता है। पर यह सोचकर, कि यदि अमन सिंह ने पूछ लिया कि पहले ये तो बताओ कि मेरे लिए भतीजा क्या लाया है तो उसे व्यर्थ ही शर्मिन्दा होना पड़ेगा, उसने अपने लंगोटिये मित्रों की ओर देखना शुरू कर दिया। वह अपने खेत देखने के लिए व्याकुल हो उठा। दूर तक फैले हुए खेत—उनसे गुजर कर ही तो वह गाँव आयगा। अपना गाँव—इन पाँच सालों में तो शायद अपना गाँव इतना बदल गया होगा कि मैं मुश्किल से पहचान सकूँ। अपना घर—उसकी दीवारें तो भट मुझे पहचान लेंगी। मैं उनसे लिपट-लिपट कर कहूँगा—आज भंडा सिंह हवालदार वापस आ गया है। अब वह तुम्हें छोड़ कर कहीं नहीं जायगा। उसे एक लोकोक्ति याद आ गई—जब बेटा जन्म लेता है, घर की दीवारें काँप उठती हैं और सोचती हैं कि कौन जान बरखुरदार हमें गिरायगा या कायम रखेगा। उसने गर्व से सिर ऊँचा कर लिया—मेरे हाथों में दीवारें और भी ऊँची उठेंगी।

भीड़ जलूस में बदलने लगी। सब से आगे ढोलिये और शहनाई वाले थे। उनके पीछे बूढ़े, और फिर जवान गबरू, फिर छकड़े पर सवार स्त्रियाँ, और सब से पीछे भंगी, चमार और

मीरासी थे ।

वह जवान गबरुओं में परतापे का हाथ थामे चल रहा था । रह-रह कर उसकी निगाहें पीछे अपनी पत्नी की ओर उठ रही थीं, जो छकड़े के अगले हिस्से में पीला दुपट्टा ओढ़े बैठी थी । ठीक इसी तरह उसकी कल्पना की हरियालियों पर यही पीले दुपट्टे वाली उसकी पत्नी मुस्कराती रही थी । किमी भी स्थान पर रानों ने उसके मन से अपनी छाप उतरने न दी थी । जब कभी वह किसी स्त्री की ओर आकर्षित होता, जैसे रानों उसका हाथ थाम कर कहती—तुम्हारी ये हरकतें मुझे नापसन्द हैं । आज तो वह अपनी मजबूरियों और बेबमियों से मुक्त था । आज वह पीले दुपट्टे वाली हवालदारनी से दिल खोलकर बातें करेगा और वह खुद देख लेगी कि उसका हवालदार किस तरह मुस्करा रहा है ।

मोर्चे पर उसने अपने अकसरों को सदा यह कहते सुना था कि जंग के बाद दुनिया बदल जायगी । अब तो जंग खत्म हो चुकी थी । चलते-चलते उसने आँखों पर हाथ रख कर दूर तक फैले हुए खेतों पर उचटती-सी निगाह डाली । इतनी दूर से गाँव नजर न आता था । गाँव के दूमरे किनारे पर उसका घर था । मोर्चे पर जब कोई जन्मभूमि की चर्चा करता तो यही घर उसकी नजरों में फिर जाता और वह उसकी प्रशंसा के पुल बाँध देता । उसके साथी कह उठते—वाह गुरू ने सब को तो एक-सौ घुमांड का मालिक नहीं बनाया । आँगन में सीमेंट का फर्श, चारपाइयों की बजाय पलंग, स्त्रियों की बाहें सोने में पीली, घी के दीये—उसे अपने आप पर क्रोध आ रहा था । मैं भी कैसे-कैसे झूठ-सच बोलता रहा हूँ । पर अगले ही क्षण उसका क्रोध गर्व में बदल गया । हाँ, जंग के बाद दुनिया बदल जायगी । सचमुच सीमेंट के ही फर्श होंगे । पलंग, सोना-चाँदी, घी के दीये—ऊँह,

अब तो बिजली की बत्तियाँ जगमगायँगी ।

लोगों की आवाजों को चीरती हुई बापू की आवाज सुनाई दे रही थी—“ज्ञानो और निहालो के व्याह हमने इस ठाठ से किये कि सारा गाँव सोचता रह गया । भंडा यहाँ होता तो और भी ठाठ जम जाता । जंग के दिनों में इतना सोना किसने दिया होगा ?”

“बेटी तो गाय की जाति है,” खाँसकर गला माफ़ करते हुए कोई वृद्धा कह उठा, “बेटी को जितना सोना पहनाओ कम है ।”

बेटी को जितना सोना पहनाओ कम है—यह बोल तीर की तरह उसकी आत्मा में चुभ गया । यदि उस समय पिता की खुशी का ध्यान सम्मुख न होता तो वह उस वृद्धे खूमट की ज़बान नाच लेता । क्या बेटे कमाने के ही लिए होते हैं ?

ढोलों और शहनाइयों का हंगामा तेज़ से तेज़ होता गया । उसने सोचा—यह कहाँ का राग है ? न स्वर, न ताल । यों ही जोर लगा रहे हैं । वह चाहता था कि इन अनाड़ियों के हाथों से ढोल और शहनाइयाँ छीन कर फेंक दे और कहे—पेट ही भरना है तो कोई और रोजगार ढूँढो । यह तुम्हारे बस का रोग नहीं । कहाँ मिलिट्टी का बैड और कहाँ यह तुम्हारा निरर्थक शोर । हाँ भाई, हर कोई तो बाजा नहीं बजा सकता ।

यही खेत थे जिनसे वह चिर-परिचित था । इसी रास्ते पर किसी बालो की याद में अनेक बार उसने माहिये के टप्पे गाये थे । अपनी फौज्जी वर्दी की ओर देखते हुए उसे इस धूल से अटे हुए रास्ते पर क्रोध आने लगा । न जाने यहाँ सड़क कब बनेगी ? ये लोग सड़क की मांग क्यों नहीं करते ?

उसने आकाश की ओर देखा । सूरज सिर पर आ चुका था । बादलों के टुकड़े सूरज से दूर थे । जलूस में चलते-चलते उसने नीले आकाश पर सफेद बादलों की ओर देखते हुए

सोचा—ऊपर ये बादल, नीचे धूल से अटा हुआ रास्ता और लम्बे-चौड़े खेत । इस गाँव के बूढ़े और जवान गबरू एक समान इन बादलों से परिचित नज़र आ रहे हैं । जंग हो या अमन, नीले आकाश पर सफ़ेद बादल सदा सुन्दर मालूम होंगे । पर इन पाँच वर्षों में आकाश की ओर देखने से तो चारों ओर केवल हवाई जहाज़ ही नज़र आया करते थे । पीछे मुड़ कर उसने अपने एक लंगोटिया यार से कहा—“मंगलसिंह, तुम तो हर रोज़ इन बादलों की सुन्दरता देखते होगे ।”

ही ही ही—हँसी का फव्वारा-सा फूट पड़ा । जवान गबरूओं का विचार था कि भंडा कुछ सोच रहा है, और जब बोलेगा तो कोई ऐसी बुझारत डालेगा कि सिर पटक कर भी कोई जवाब न सूझ सकेगा । ही-ही-ही—हँसते-हँसते जवान गबरूओं के पेट में बल पड़ गये । भंडा कुछ न समझ सका । यह प्रश्न करते हुए उसने सोचा था कि उसके मित्र उसे प्रशंसा भरी निगाहों से देखने लग जायँगे कि वाह-वाह, भंडासिंह हवालदार को वह पहला ज़माना भूला नहीं । पर जब सब जवान गबरू उसकी हँसी उड़ाने लगे, वह खिसियाना सा हो कर सामने बड़े-बूढ़ों की टोली की ओर सरक गया ।

उसका पिता कह रहा था—“रुपया इसलिए नहीं होता कि ज़मीन में दबा कर रखा जाय । उस मुकदमे पर हमने दो ब्याहों से ज्यादा रकम खर्च कर डाली । भंडा यहाँ होता तो हमारा रौब और भी जम जाता ।”

“हाँ-हाँ,” कोई कह उठा, “भंडा तो भंडा ही है । भंडे की क्या बात है ।”

भंडा !—वह बड़बड़ाया । भंडे का रुपया मुकदमों और ब्याहों में बेदर्दी से लुटा दिया । भंडा यहाँ होता तो हरगिज़ ऐसा न करने देता । वह चाहता था कि इन लोगों को, जो इसके

पिता की हाँ में हाँ मिलाये चले जा रहे थे, समझाये कि खून-पसीने या जिन्दगी और मौत की कमाई को व्यर्थ ही खून-खराबे पर लुटा देना क्या अक्लमन्दी है। खेमे और रतने पर भी उसे कुछ कम क्रोध न आया। उसे मालूम था कि देर से उनकी दुश्मनी चली आती है। अब साले जेल में पड़े सड़ रहे होंगे। फिजूल हमारे सामने आये।

बादलों ने सूरज को ढक लिया था और उनके किनारों पर किरणें ज़री का दृश्य प्रस्तुत कर रही थीं। सहसा परतापा गा उठा—

वभली दी वाज सुनके

मुक्का अम्बर ढूँ नरमाइयाँ

उसने तेज़ी से गर्दन झधर-उधर घुमाई। कहाँ है वह बाँसुरी जिसकी आवाज़ सुन कर सूखा आकाश गीला हुआ जाता है। जलूस में चलते-चलते वह पीछे की ओर देखने लगता। स्त्रियों का झकड़ा बहुत दूर न था। रानो का पीला दुपट्टा हवा में लहरा रहा था। उसे देखे बिना उसने ये पाँच साल किस तरह गुज़ार दिये थे, यह सोच कर उसे स्वयं बहुत आश्चर्य हुआ। झकड़े के साथ-साथ धूल का बेपनाह बादल उड़ रहा था। उसकी कल्पना फ्रांस और इटली की सड़कों की ओर घूम गई। कहीं धूल का नाम नहीं। भले ही बमों से बहुत सी सड़कें नष्ट हो गईं। कुछ तो बना ली गई होंगी और कुछ बन जायँगी। पर यहाँ तो यही धूल उड़ती रहेगी।

एक गबरू कह रहा था—“मैं भी लालू की तरह कहीं से कोई शिगारो भगा लाऊँगा।”

“पर तुम तो बाप के इकलौते बेटे हो,” मंगल सिंह बोला, “लालू की शिगारो तो माघी और करतार की लाड़ली भाभी है।”

“सिर्फ भाभी ही या कल्ल और भी?” किसी ने कहा। “जब

कहीं व्याह होता नजर न आये तो ऐसा ही होता है।”

उसे मालूम था कि मामूली सी पर्दादारी के साथ बेचारी भाभी को दो-दो तीन-तीन भाइयों की पत्नी होने पर मजबूर होना पड़ता है। पर क्या सदा यों ही होता रहेगा ? दूसरे देशों को तो बदलने की जरूरत ही क्या है ? वहाँ न लड़कियाँ कम पैदा होती हैं, न लड़के उन्हें जबरदस्ती भगाने की जरूरत महसूस करते हैं और न वे बेची ही जाती हैं। सब देशों को चाहिये कि मिलकर हिन्दुस्तान ही को बदल डालें।

जुलूस एक पुराने खण्डहर के पास से गुजर रहा था। ढोल चिल्लाते रहे। शहनाइयाँ अजीब सी रागिनी से उलझती रहीं। जैसे इसी खण्डहर की किसी परम्परा को जीवित रखने का प्रयत्न किया जा रहा हो। पर इस खण्डहर की ईंटें तो सदा के लिए खामोश हो चुकी थीं।

स्त्रियों का छकड़ा रेंगता चला आ रहा था। उसे ध्यान आया कि ये स्त्रियाँ कभी पुरुष से कन्धा मिलाकर नहीं चल सकती। ये स्त्रियाँ, यह छकड़ा—दोनों रेंग रहे हैं। यहाँ तो समय भी एक सुस्त छकड़े की तरह रेंगता दिखाई देता है। इसके पहिये तो केवल धूल के बादल ही उड़ा सकते हैं। ऊँह ! इसकी रफ्तार नहीं बदल सकती।

“अरे वली, शिगारो तो एक मस्त हिरनी है,” एक जवान ने तहमद को ऊँचा करते हुए कहा, “लालू ने कमाल किया कि उसे पकड़ लाया।”

पास से लालू भट कह उठा—“और वली जानता है कि अपने देवर से वह यही कहेगी कि पहिले गन्दे नाले में मुँह धो आओ।”

उसे धिन आने लगी। ये भूले-भटके गबरू अपने खमीर से मजबूर हैं। गन्दा नाला ही इनकी कल्पना पर सदा से सवार

है। इसके बाहर वे शायद जा ही नहीं सकते। दूर से गाँव के गुरुद्वारे का कलश उभरने लगा। उसने सोचा कि गुरुद्वारे का ग्रन्थी हर रोज शंख बजाता होगा। कहते हैं शंख की आवाज़ गुरुओं को बहुत पसन्द थी। दस गुरुओं, पाँच प्यारों और चार साहबजादों का प्यारा शंख। चालीस मुक्तों, शहीदों, मुरीदों और सिद्ध रखने वाले सिक्खों का प्यारा शंख। जैसे दूर से गाँव के गुरुद्वारे का शंख भी गूँज उठा हो। बचपन ही से उसे गुरुद्वारे जाने की आदत डाली गई थी। धर्म के लिये जाने कुरान करने वालों का कहानियाँ उसके खमीर में समा चुकी थीं। उसकी कल्पना में चरखड़ियों पर चढ़ते हुए लोग उभरने लगे। शरीर का जोड़-जोड़ जुदा कराने वाले लोग। कुछ ऐसे भी थे जिनकी खालें खींच ली गई थीं। कुछ वे शहीद थे जिन्होंने खोपड़ियाँ उतरवाई थीं पर धर्म नहीं छोड़ा था। वह धीरे-धीरे गुरुसाहब का शब्द गुनगुनाने लगा—

एली मार पई कुरलाण

तै की दर्द न आया

उसे विश्वास था कि सच्चे पादशाह ने वाबर को हिन्दुस्तान पर हमला करते देखा था और उस समय हिन्दुओं और मुसलमानों को युद्ध की मुसीबतों में समान रूप से गिरफ्तार देख कर कहा था—हे वाहगुरु, लोगों पर इतनी मार पड़ी कि वे चीख पुकार करने लगे। क्या तुझे उस समय ज़रा दर्द महसूस न हुआ ? फिर वह इस सोच में खो गया कि इस जंग में जो तबाही हुई है उसका तो कुछ अन्दाज़ा ही नहीं लगाया जा सकता। बहुतों को तो उसने खुद भी मौत के घाट उतारा था। सच्चे पादशाह से तो कुछ भी छुपा हुआ नहीं। अब तो जंग खत्म हो चुकी है। उसे यों महसूस हुआ कि गुरुद्वारे का ग्रन्थी भी शंख के मुँह से पुकार-पुकार कर यही कह रहा है—बहुत कुछ बदलना होगा।

अमन सिंह कह रहा था—“हमारी तो किस्मत ही खराब है। हम हमेशा गरीब रहेंगे, चाहे कोई भी बादशाह क्यों न आ जाय, चाहे बड़ी से बड़ी जंग भी क्यों न लड़ी जाय।”

“लोगों ने सच्चे पादशाह की सेवा से मुँह मोड़ लिया है,” किसी ने शतरंज का मोहरा बदलने के अन्दाज़ में कहा, “लोग स्वार्थी हो गये। इसीलिए बार-बार जंग लड़ी जाती है।”

“बिलकुल,” अमन सिंह ने फिर से बाग़ सम्हालते हुए कहा, “पूरे सवा लाख की बात मुन लो, सरपंच सिंह, हमारी हालत उस सिख जैसी है जो गुरु हर गोविन्द राय जी को शहद देने जा रहा था।”

सरपंच सिंह कह उठा—“यह किस्सा बहुत पुराना है। पर हम आज तक सच्चे पादशाह को सच्चे दिल से शहद देने वाले सच्चे सिक्ख नहीं बन सके।”

बड़े बूढ़ों की बातों का जवान गबरूओं पर यह प्रभाव हुआ कि वे शहद के बारे में बातें करने लग गये। किसी ने कहा—“और तो और, अब तो शहद भी महँगा हो गया है।”

दूसरे ने तस्वीर में रंग भरा—“महँगा ही मिले, मिले तो सही। मुझे तो असली शहद चाहिए। आज तो जी चाहता है कि अपने हवालदार साहब से भी पूछा जाय—क्यों बेटा, उँगली से चाट-चाटकर शहद खाओगे?”

वह इन उखड़ी-उखड़ी बातों से तग आ चुका था। फिर उसकी कल्पना ढोलों और शहनाइयों के बेहंगम शोर में उलझ गई। बादल परे हट गये थे और सूरज हलकी-हलकी आग बरसा रहा था। स्त्रियों का छकड़ा पीछे रह गया था। गबरूओं में काना-फूँसी होने लगी। और फिर न जाने क्या सोचकर किसी ने सुर छेड़ा—

मुण्डा तेरा ते मुण्डांग मेरा,

नी डगडी डगडी जान वालीए !

भट किसी ने मुकाबिले की चोट की—

मुगडा जम्मूगा दहीं दे फुट वरगा

नी कच्चा दुद्ध पीन वालीए !

ऐसे बीसियों गीत उसकी कल्पना की महारावों से टकराये। उसने पीछे मुड़ कर देखा। स्त्रियों का छकड़ा रेंगता हुआ चला आ रहा था। ये सब माताएँ थीं या बहुत जल्द माता बनने वाली थीं। उसने उस गबरू की ओर घूर कर देखा जिसने अपने गीत में कहा था—ओ पगडंडी के किनारे-किनारे जाने वाली, तेरे बेटे का चेहरा तो मेरे चेहरे जैसा है.....शरारती ! और फिर उसने दूसरे गबरू को घूरा जिसने किसी ताजा दूध पीने वाली को विश्वास दिलाया था कि वह मुन्दर बेटा जनेगी—दही के चक्के जैसा। अगले ही क्षण वह मुस्कराया। जैसे कह रहा हो—मैं भी अपनी रानो को ताजा दूध पिलाकर देखूंगा।

“आग लगने पर धुआँ तो निकलेगा,” एक जवान कह रहा था, “सयाने वाले सच कहते हैं—इश्क छिप नहीं सकता।”

“डाची की मुहार पैर में अटक जाय तो वह क्या कर सकती हैं ?” किसी ने कहा, “वाहगुरू की कृपा रहे तो तकदीर भी धोखा नहीं दे सकती।”

“जमाना बदल गया,” किसी ने कहा, “लोग अब वाहगुरू से नहीं डरते।”

उसे मोर्चे पर सुना हुआ बोल याद आ गया—जंग के बाद दुनिया बदल जायगी। वह इन लोगों से पूछना चाहता था—तुम सचमुच कब बदलोगे ?

जलूम एक पुराने कुएँ के पास पहुँच कर रुक गया। प्यास के मारे लोग पानी पीने लगे। भारी भरकम रहट अपनी बेदब-सी लकड़ी की चरखड़ियों पर शर्मिन्दा नज़र आता था। कुएँ पर

पानी लाने वाली टिण्डें कहीं-कहीं से ट चुकी थीं। गादी पर बैठा हुआ लड़का बेरहमी से बूढ़े बैल को शीशम की टहनी से मार रहा था। रहट की रू-रू किसी प्रतिशोध की चीख मालूम होती थी। पानी पीते-पीते उसने सोचा कि यह बूढ़ा कुआरा रोने पर मजबूर है। शायद वह पुकार-पुकार कर कह रहा है—मैं माद्यों से यों ही रो रहा हूँ। उसे इस अनुभव से दुःख-सा होने लगा। ये सब हवाई किले हैं कि जंग के फौरन बाद ही दुनिया बदल जायगी।

सरपंच सिंह ने अमन सिंह के कंधे पर हाथ रखते हुए कहा—“रुपया आता है पीछे, और जाने का रास्ता पहले ही निकल आता है।”

उसके जी में तो आया कि बाप से बहम छेड़ दे और पूछे—क्या यह जरूरी था कि ज्ञानो और निहालो के ब्याह पर सोने की नुमायश की जाती। खेमे और रतन को जेल में भिजवाने की खातिर दौलत लुटाना भी क्या जरूरी था ?

परतापे ने समीप आकर पूछा—“क्यों भंडे, विलायत में भी ऐसी ही धरती होती है ?”

उसने देखा कि कम से कम एक व्यक्ति तो ऐसा है जो नई दुनिया की बातें सुनने के लिए ब्याकुल हो रहा है।”

सूरज एक तरफ़ को लुढ़क गया था। उसे याद आया कि मोर्चे से चलते समय उसने तय किया था कि गाँव के जीवन को नया रास्ता दिखायगा। एक बार फिर उसने फैसला किया कि वह जरूर अपनी कोशिशें जारी रखेगा।

ढोलिये फिर से ढोल सम्हाल कर खड़े हो गये। शहनाई वाले भी कोई नया स्वर छेड़ना चाहते थे। जलूम फिर अपने रास्ते पर चल पड़ा।

उसने परतापे के कंधे पर हाथ रखते हुए कहा—“वहाँ

मशीनी हल चलते हैं।”

“मशीनी हल” परतापे ने आश्चर्य से पूछा।

कुछ आगे जा कर जलूस रुक गया। वृद्धा जंग सिंह उनके खेत में हल चला रहा था। उसने हल छोड़ दिया और झंडे से मिलने के लिए रास्ते की तरफ भागा।

सहसा झंडे के मन में यह विचार आया कि वह स्वयं आगे बढ़कर बाबा के चरण छुए और हल को भी छू कर देखे।

बाबा के चरण छू कर वह हल की तरफ बढ़ा। परतापे ने हँसकर कहा—“अब तो हमारे हवालदार को हर रोज़ यही हल चलाना पड़ेगा।”

मुँह से वही पुरानी तत-तत की आवाज़ निकाल कर वह हल चला रहा था। जंग सिंह वृत्त बना खड़ा रहा। जैसे वह कहना चाहता हो—मैं स्टेशन पर नहीं आ सका। पर तुम्हारा हल चलाने का शौक लाम पर पाँच साल गुज़ारने के बाद भी कायम रहा, यह देखकर मैं बहुत खुश हूँ।

अमन सिंह ने सरपंच सिंह को छोड़ा—“तुम्हारा झंडा लाम पर जा कर भी खरा नहीं बदला।”

सात-आठ चकर लगाने के बाद भी झंडे ने हल न छोड़ा। सब हैरान थे कि कहीं यह पागल तो नहीं हो गया।

परतापे और अमन सिंह ने उसे पकड़ कर हल से अलग किया। सरपंच सिंह उसके माथे पर हाथ फेर कर पसीना पोंछने लगा। एक बार फिर ढोलियों और शहनाई वालों ने अपना राग छोड़ दिया। ज्यों ही जुलूस आगे की तरफ सरकने लगा, लोगों की निगाहें झंडे के पाँच साल के बेटे पूरन की ओर उठ गईं जो उस समय हल के फाले से मिट्टी कुरेद रहा था। ढोलों और शहनाइयों का शोर एकदम उभर आया। जैसे उस नन्हें किसान और पुराने हल को सलामी दी जा रही हो।

जोड़ा साँको

सह सा पुलिस की सीटियां एक साथ बज उठीं। पर ये सब सुनी-अनसुनी कर दी गई। यह हजूम तो कोई जिन्न मालूम होता था जिसके हजारों हाथ थे और हजारों पैर।

“शाला लाल पगड़ी !”

“शाला चोर !”

“शालार बेटा शाला !”

ये गालियाँ पुलिस के लिये नई न थीं। बहुत से सिपाही गालियाँ सुन कर हँस रहे थे। यह हजूम उनके बस का रोग न था। इतने लोग न जाने कहाँ से चले आये थे ? या शायद वे सब पागल थे और पागलखाने की दीवारें फांद कर यहां जमा हो गये थे। हजूम में से आवाजें आ रही थीं—

“शाला पुलिस !”

“बंगाली भात ही नहीं खाता, बंगाली मछली भी खाता है।”

“ठाकुर दादा हमारा, हम ठाकुर दादा के।”

“हम ठाकुर दादा का दर्शन करने आया है।”

“शाला पुलिस का क्या चोरी ?”

“जोड़ा साँको का ठाकुर दादा, ठाकुर दादा का जोड़ा साँको ।”

ये आवाजें कभी ऊँची और कभी हल्की हो जातीं। टेलीफोन घटनास्थल पर मौजूद था और पुलिस ऊँचे अफसरों को स्थिति का पूरा पता दे सकती थी। लाठी चार्ज से बेहद बदनामी होने की संभावना थी। भारत के गौरव, एशिया के गौरव, बल्कि समस्त विश्व के गौरव कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर की मृत्यु के विषादमय अवसर पर इतनी सख्ती की गुंजायश न थी। लेकिन इस हजूम को परे धकेल कर अर्थों के लिए रास्ता बनाना भी आवश्यक था। हजूम था कि समुद्र की बड़ी-बड़ी लहरों की तरह इधर-उधर सरकता नज़र आता, पर पुलिस परेशान थी। हजूम बेक्राबू हुआ जाता था। पिचके हुए गाल उभर रहे थे। भीतर को धँसी हुई आँखें बाहर को आया चाहती थीं। मरियल से लोग भी दरवाजे की ओर झपटने को तैयार थे।

धोतियाँ फट रही थीं, कमीजों के पुर्जे उड़ रहे थे। लोग सब लिहाज भुला रहे थे। पीछे वाले आगे जानें पर तुले हुए थे। बहुत से नये लोग भाग-भाग कर हजूम में सम्मिलित हो रहे थे। यहां पर तो शायद भगवान् को भी धक्के पड़ते।

धूप निरन्तर तेज़ होती चली जा रही थी। अगस्त का सूर्य लोगों के सिरों पर पहुँच चुका था। इस गर्मी में पुलिस का भी बुरा हाल था। होठों तक आई हुई गालियों को पीछे को लौट जाना पड़ता। सिर खुजाने की फुर्सत न थी। हजूम की आँखों से पलपल बढ़ती बर्बरता किसी क्रान्ति की परिचायक मालूम होती थी। साठ सैकिंडों का एक मिनट, साठ मिनटों का एक घण्टा। पिछले एक घण्टे से पसीने की बू गलीजों की गलाजत में वृद्धि कर रही थी। कुछ लोग निरन्तर बीड़ियों का धुँआ उड़ा

रहे थे। कहीं-कहीं पान की पीक ढलक रही थी और बहुतों के काले दाँतों पर सूर्य की गुस्ताख किरणें भी उलभी-उलभी सी नज़र आती थीं।

कोई गांधी टोपीवाला कह रहा था—“जब ठाकुर दादा शंघाई गये तो उनके पास बहुत सी पेन्सिलें थीं।”

“और बहुत से फ़ाउन्टेन पेन भी तो थे, ठाकुर दादा के पास” सामने से गांधी टोपी वाले का साथी कह उठा, “और हाँ, याद आ गया। ठाकुर दादा के पास वह लेखनी भी तो थी जो उन्हें एक सन्यासी से प्राप्त हुई थी।”

“जी हाँ,” पास खड़े एक अधेड़ उम्र के व्यक्ति ने अपनी ऐनक के शीशे साफ़ करते हुए कहा, “सन्यासी से प्राप्त हुई उस लेखनी से ही तो ठाकुर दादा गीत लिखा करते थे।”

गांधी टोपी वाला कह रहा था—“एक बार सन्यासी से प्राप्त हुई यह लेखनी कहीं गुम हो गई। बस फिर क्या था, ठाकुर दादा रात भर सो न सके।”

“मैंने तो सुना है कि वह लेखनी ठाकुर दादा को मिल गई थी,” गांधी टोपी वाले का साथी चित्र में रंग भरने के अन्दाज़ में बोला, “जी हाँ, यदि वह लेखनी ठाकुर दादा को फिर से न मिल जाती तो वे अपने सबसे अच्छे गीत न लिख पाते।”

ऐनक वाला व्यक्ति भी चुप न रह सका—“मैंने तो सुना है कि अमेरिका में एक मिल मालिक ठाकुर दादा को उस लेखनी के बदले तीन हजार डालर देने को तैयार था। पर बाह् रे ठाकुर दादा, आपने वह लेखनी कभी भूल कर भी न बेची। बेच डालते तो देश की इज्ज़त लुट जाती।”

गांधी टोपी वाले ने मुस्करा कर ऐनक वाले की ओर देखा। जैसे वह उसका आलिंगन करके यह कहना चाहता हो—दादा, तुम भी किसी से कम नहीं हो और आज यदि ठाकुर दादा

तुम्हारे ये बोल सुनते तो सचमुच तुम्हें गले से लगा लेते ।

ऐनक वाले ने भी जैसे गांधी टोपी वाले का भाव समझ लिया हो । बोला—“ठाकुर दादा तो इस संसार से चल बसे, पर उनकी वह लेखनी अवश्य किसी अजायबघर में रखी जायगी ।”

जिंदा हाथी लाख रुपये का, मुर्दा हाथी सवा लाख रुपये का !—सब इन्सपेक्टर ने अपने होंठों तक आये हुए शब्दों को पीछे धकेल दिया । उसे अपने विचार पर शर्म आने लगी । आज देश का विश्व-विख्यात कवि विदा हो गया । अभी उसकी अर्धी नीमतला घाट को ले जाई जायगी । इतना बड़ा आदमी रोज़-रोज़ तो जन्म नहीं लेता । जीवन तो कवि का है जिसके अन्तिम दर्शनों को इतनी जनता यहाँ एकत्रित हो रही है । सब-इन्सपेक्टर का जीवन भी कोई जीवन है ? लेकिन हज़ूम में खलबली मचते देख कर उसकी आँखें लाल हो गईं । हरामजादे ये क्या जानें कि कविता किस चिड़िया का नाम होता है ! सहमा टेलीफोन की घण्टी बज उठी । सब-इन्सपेक्टर ने रिस्मिवर उठा कर डी० एस० पी० के हाथ में पकड़ा दिया । ऊपर से फिर आवाज़ आई कि जहाँ तक हो सके लाठी चार्ज की नौबत न आय । डी० एस० पी० ने रिस्मिवर रखते हुए घबराकर सब-इन्सपेक्टर की ओर देखा और कहा—“वैल, हज़ूम पर काबू पाना जरूरी है, चाहे मुझे नौकरी से अलग कर दिया जाय ।”

सब-इन्सपेक्टर ने सिपाहियों को डाँटना शुरू कर दिया । सब सिपाही तन कर खड़े हो गये ।

डी० एस० पी० मूर्तिवत् खड़ा हो गया । सब-इन्सपेक्टर की आँखों में नई चमक आ गई, और वह बोला—“जनाब, हम होशियारी से काम लेंगे । पहले भी तो हम बहुत से मौकों पर नौकरी से अलग होत-होते बच गये थे ।”

हजूम का शोर कितना निरर्थक था, कितना बेताला। आधी बाँहों की कमीजवाले एक छोकरे ने व्यर्थ के शोर में एक नया अर्थ भरते हुए अधेड़ आयु के साथी से कहा—“तो ये लोग हमें ठाकुर दादा का दर्शन करने नहीं देगा ?”

अधेड़ आयु के साथी ने सामने से कुछ जवाब न दिया। उसका सिर चकरा रहा था और वह तो यह मोच कर पछता रहा था कि इससे अच्छा यही होता कि नीमतला घाट पर जाकर इन्तज़ार किया होता। आखिर अर्थी को तो वहीं पहुँचना था। पर जैसे साँप पुरानी केंचुली उतार फेंके और नीचे से उसका शरीर नये मिरे से चमक उठे, इस अधेड़ आयु के व्यक्ति ने अगले ही पल पहले विचार को भटक कर फेंक दिया। नीचे से फिर ताज़ा माहम उभर आया। इसके लिए तो जोड़ा साँको ही उचित स्थान है, हाँ जोड़ा साँको। ठाकुर दादा के दर्शन से तो जन्म-जन्मान्तर सफल हो जायेंगे।

वह छोकरा भी खोये हुए साहस को सँभाल रहा था। बोला—“जोड़ा साँको का ठाकुर दादा, हाँ भाई, ठाकुर दादा जोड़ा साँको का ! ठाकुर दादा के अन्तिम दर्शन से हमें रोकता है शाला पुलीश लोग।”

मालूम होता था कि अगले ही पल हजूम को उस विशाल भवन के भीतर प्रवेश करने का मार्ग मिल जायगा। पुलिस की मीटियाँ खामोश थीं। उस छोकरे को इतनी प्यास लगी थी कि यदि उस समय उसे बीस नारियल मिल जाते तो वह एक-एक नारियल का जल पी जाता। नारियल कहाँ, यहाँ तो सूर्य आग बरमा रहा था। अधेड़ आयु का उसका साथी भी तो प्यासा होगा, उसने सोचा, अकेले-अकेले बीस नारियलों का जल पी जाना तो न्याय न होगा। अपने हिस्से के दस नारियल ही काफी होंगे। पर भगवान् का आप इस प्यास

पर। उसे नारियल के शीतल जल की प्यास न थी। उसे तो ठाकुर दादा के अन्तिम दर्शनों की प्यास ही यहाँ खींच लाई थी। पीछे से हजूम के धक्के जोर पकड़ रहे थे। “ठाकुर दादा के दर्शन से रोकता है हमें शाला पुलीश लोग!”—छोकरे का यह विचार अर्धेड़ आयु के इस व्यक्ति के मस्तिष्क में भी क्रोध की आग सुलगाने लगा।

सहसा पुलिस की सीटियाँ गूँज उठीं। लाठियाँ हवा में लपकती नज़र आईं। जन-समूह की दीवार पीछे को सरकी। यह खैरियत थी कि पिछली दीवार भी पीछे को सरक गई। नहीं तो ये दोनों साथी चक्की के दो पाटों में गेहूँ के दानों की तरह पिस गये होते। सीटियाँ खामोश हो गईं। लाठियाँ डरपोक निकली। हजूम अपने हठ पर कायम था। जोड़ा साँको की स्त्रियाँ जो अपने-अपने छज्जे में फूल लिए हुये खड़ी थीं, भयानक दंगे के डर से सहमी-सहमी सी नज़र आ रही थीं।

विशाल भवन में, जहाँ गुरुदेव के शव के चारों ओर निकट-वर्ती श्रद्धालु एकत्रित थे, इस वेदनामय दुर्घटना के कारण पंखे बन्द कर दिये गये थे। हर किसी का विचार था कि उससे अगले व्यक्ति का कर्तव्य है कि उससे बचने के लिए पंखे चला दे। उनमें से कुछ ऐसे भी थे जो पिछले सप्ताह से घर नहीं गये थे। पिछले तीन दिन तीन पहाड़ बन कर टूट पड़े थे। गुरुदेव पर ऐसी बेहोशी छा गई कि आज बारह बज कर दस मिनट पर सब के देखते-देखते उनकी आत्मा इस संसार से उठ गई। उस समय मृत्यु-शैया के समीप गुरुदेव के सुपुत्र व अतिरिक्त उनकी सुपुत्री, बहन और पुत्र-वधू भी उपस्थित थीं सब पसीना-पसीना हो रहे थे। सब चुप थे। पर गुरुदेव के सुपुत्र का संकेत पा कर नौकर ने बटन दबाये और पंखे फिर रं

चलने लगे ।

भक्तों की आस्था शरीर और आत्मा में कैपकैपी उत्पन्न करनेवाली इस घटना से सहम-सी गई थी । पसीना सूखने के साथ-साथ हर कोई अपने ही दृष्टिकोण से गुरुदेव के व्यक्तित्व पर विचार करने लगा । गुरुदेव के सुपुत्र को आँखों से आँसू उमड़ा चाहते थे ।

दूर स्त्रियों के कल्ल मे शोर सुनाई दे रहा था । इस पर एक दो भक्तों के जी में तो आया कि भीतर जा कर स्त्रियों को समझाएँ कि इस अवसर पर बत्तखों की तरह गौं-गौं करना किसी भी तरह शोभा नहीं देता । पर यह सोच कर कि यह गुरुदेव के सुपुत्र का कर्तव्य है, वे चुप बैठे रहे ।

उधर सड़क पर हजूम का शोर बराबर बढ़ता जा रहा था । और मानों इस शोर को सुना-अनसुना करते हुए चटर्जी ने कहा—
“कहो भट्टाचार्य महीशय, अब क्या मलाह है ?”

भट्टाचार्य ने अपनी मूँछों में उँगलियों से कंधी करते हुए उत्तर दिया—“यह मूखों का देश है । फिर कहा जाता है कि आज ही स्वराज्य मिल जाय । सड़क पर जा कर कोई इन मूखों से पूछे कि अर्थी का रास्ता रोकना कहाँ की बुद्धिमत्ता है ?”

डी० एस० पी० घबराया हुआ अन्दर आया और बोला—
“मुझे डर है कि क्रमाद न हो जाय । हजूम पुलिस के काबू से बाहर होता जा रहा है ।”

बैनर्जी का बस चलता तो डी० एस० पी० को सलाह देता कि लाठी-चार्ज जरूरी है । लातों के देव बातों से नहीं मानते । पर अपने विचार से वह स्वयं ही सहम गया । इस तरह देशभर में उसकी बदनामी हो जायगी । कल के समाचारपत्र कभी इस समाचार को प्रकाशित करने में संकोच नहीं करेंगे कि बैनर्जी की सलाह से पुलिस ने हजूम पर लाठी-चार्ज किया ।

डी० एस० पी० और गुरुदेव के सुपुत्र में दरवाजे के समीप देर तक वार्तालाप चलता रहा। इतने में सब-इन्स्पेक्टर भी अन्दर आ गया। गुरुदेव के सुपुत्र को हजूम पर बेहद क्रोध आ रहा था, पर उसने यही राय दी कि अभी और प्रतीक्षा की जा सकती है।

गुरुदेव के सुपुत्र को वापस आते देख कर भट्टाचार्य ने बनर्जी को सम्बोधित करते हुये कहा—“होनो लूलू ! कैमा विचित्र नाम है, काश ! हमारे शोनार बांगला में भी ऐमा कोई नाम होता ! गुरुदेव ने तो कोई जगह छोड़ी न होगी। वे होनो लूलू भी गये थे।”

“भट्टाचार्य महाशय, गुरुदेव कहा करते थे कि होनो लूलू के संगीतज्ञ वाद्ययंत्र बहुत सुन्दर बजाते हैं। ऑर्केस्ट्रा की जितनी परख उन्हें है और किसी को नहीं,” बनर्जी ने आँखें झुपझुपाते हुए कहा, जैसे वह दूर रितता में होनो लूलू का धुँधला-सा चित्र देखने का यत्न कर रहा हो।

“होनो लूलू की यात्रा में गुरुदेव मुझे अपने साथ ले जाना चाहते थे, बनर्जी बाबू !” भट्टाचार्य ने आँखों से ऐनक उतार कर विलायती चमड़े से शीशे साफ़ करते हुए कहा, “पर तुम तो जानते हो कि मनुष्य जहाँ रहता है, धीरे-धीरे वहीं का हो कर रह जाता है। उसकी जड़ें धरती में गहरी धँसती जाती है। भगवान चाहते तो मैं होनो लूलू की यात्रा में गुरुदेव के साथ जाता !”

गुरुदेव का सुपुत्र उदास था। उसे हजूम पर रह-रह कर क्रोध आ रहा था। होनो लूलू में तो ऐसे अवसरों पर दशेन के प्यासे लोग हजूम बना कर रास्ता रोकने की हिमाकत न करते होंगे। बाहर सड़क पर ‘वन्देमातरम्’ के नारे ‘ठाकुर दादा की जय’ के नारों में घुले जा रहे थे। उसे कुछ-कुछ विश्वास होने लगा कि हजूम अर्थी के लिये रास्ता छोड़ देगा। बस ज़रा तरकीब से

काम लेना होगा। बालकोनी से वह इन दर्शन के प्रार्थनों को समझा देगा कि नीमतला घाट पर हर कोई गुरुदेव के अन्तिम दर्शन कर सकेगा और जब तक एक-एक आदमी अपने चिरप्रिय गुरुदेव को देख नहीं लेगा, उन्हें अग्नि देवता के अर्पण नहीं किया जायगा।

हजूम का बेसुरा आलाप बहुत ही भद्दा रूप धारण कर रहा था। “हट जाओ पीछे। हम ठाकुर दादा का दर्शन करेंगे,” घुंघराले बालों वाले एक आदमी ने अपने साथी को पीछे धकेलते हुए कहा।

“शालार बेटा शाला। पीछे हट। मेरे ऊपर क्यों गिर रहा है? उल्टा गाली भी देता है।”

“मुझे आगे जाने दो।”

“अरे तुम तो पीछे आया।”

“मुझे आगे जा कर ठाकुर दादा के दर्शन करने दो।”

“आया है बड़ा दर्शन करनेवाला। अरे कुछ पढ़ा भी है ठाकुर दादा का?”

“पढ़ा क्यों नहीं? शाले हमने ठाकुर दादा का शब ग्रन्थ पढ़ डाला। आनन्दमठ, बड़ी दीदी, मेघनाद वध, देवदास।”

“शाला क्या बकता है। अरे देवदाम ठाकुर दादा ने लिखा?”

“हाँ।”

“और आनन्दमठ?”

“हाँ।”

“अरे आनन्दमठ तो बंकिम बाबू ने लिखा, शाले इतना तो हमें भी पता है।”

यह सब आवाजें तो अन्दर मुनाई न दे सकती थीं, पर सब भक्त और श्रद्धालु हैरान थे कि यदि हजूम की यही अवस्था रही

तो अर्थी को रास्ता कैसे मिलेगा ?

“आज ७ अगस्त १६४१ के दिन गुरुदेव हम से बिछुड़ गये,” गांगुली ने भावुकता के स्वर में कहा, “और यह तो आप सब जानते हैं कि ६ मई १८६१ के दिन गुरुदेव ने इसी जोड़ा साँको में जन्म लिया था।”

चटर्जी ने भक्तों की कल्पना को गुदगुदाने हुए कहा, “इसी भवन में गुरुदेव ने माँ की कोख से जन्म लिया था और अपने जीवन में हमारे लिये तीन हज़ार से ऊपर गीतों की रचना की। तीन हज़ार से ऊपर गीत कुछ कम नहीं होते।”

भट्टाचार्य कह रहा था—“चटर्जी महाशय, यह सत्य है कि तीन हज़ार से ऊपर गीत कुछ कम नहीं होते। पर मत्तर साल की आयु में चित्रकला की ओर ध्यान देना और इस कला में एक नई शैली प्रस्तुत कर दिखाना, यह भी तो गुरुदेव की प्रतिभा का ही चमत्कार था।”

“उनके चित्र वलिन, न्यूयार्क और पैरिस की कला-प्रदर्शनियों में बेहद पसन्द किये गये थे, भट्टाचार्य महाशय,” बनर्जी ने बढ़ावा दिया, “उनके चित्र उनके गीतों से भी सुन्दर हैं।”

“और एक बात तो तुम भूल रहे हो, बनर्जी बाबू,” गांगुली कह उठा, “गुरुदेव के चित्र मास्को की प्रदर्शनी में भी दिखाये गये थे और उन्हें सबसे अधिक प्रशंसा रूसी चित्रकारों से ही प्राप्त हुई थी।”

“तुम सत्य कहते हो गांगुली,” बनर्जी ने समर्थन किया।

भट्टाचार्य कह उठा—“कविता, नाटक, उपन्यास, गल्प, राजनीति और अन्त में चित्रकला—गुरुदेव ने जिस वस्तु का स्पर्श किया पारम के समान उसे लोहे से सोना बना दिया।”

स्त्रियों के कक्ष से अभी तक पुष्प मालाएँ नहीं पहुँची थीं। उधर स्त्रियों का शोर धीमा पड़ गया था। गुरुदेव का सुपुत्र इस

विषादमयी घटना पर विचार कर रहा था। दो एक वर्षों से गुरुदेव के गुर्दे में बेहद कष्ट रहता था। डाक्टर आपरेशन की सलाह देते थे। पिछले वर्ष इसी दृष्टि से उन्हें कालिम्पोंग से कलकत्ता लाया गया था, पर आपरेशन की नौवत न आई। अब फिर डेढ़ मास से उन्हें बहुत कष्ट था। आयुर्वेदिक चिकित्सा असफल रही। २५ जुलाई के दिन, जब वे शान्तिनिकेतन से कलकत्ता आ रहे थे, आश्रमवासियों की आँखें अश्रुपूर्ण हो उठी थीं। ३० जुलाई को सवेरे उनका आपरेशन किया गया। इसी रोज उन्होंने अपनी अन्तिम कविता की रचना की। इसका शीर्षक था 'मृत्यु'। प्रथम अगस्त से फिर बीमारी ने जोर पकड़ लिया। तीन दिन से वे बेहोश पड़े थे। आज सवेरे खतरा बढ़ गया। सवेरे साढ़े आठ बजे उनके कमरे में उनकी कुछ कविताएँ पढ़ी गईं। फिर एक वयोवृद्ध महानुभाव ने उनके लिए प्रार्थना की, पर मृत्यु ने इसे स्वीकार न किया।

स्त्रियों के कक्ष से सुनाई देनेवाला शोर अब और भी धीमा पड़ गया था। पर हाँ, सड़क पर हजूम का शोर ऊँचे से ऊँचा होता जाता था। गुरुदेव के सुपुत्र को विचार आया—गुरुदेव की यह इच्छा कि उनका शव शान्तिनिकेतन में ही अग्नि के अर्पण किया जाय। फिर, उन्होंने यह निर्णय राष्ट्र के हाथों में छोड़ दिया था। अब तो अर्थी को निमतला घाट पर, जिसने बंगाल के कितने ही विख्यात व्यक्तियों की चिताओं से ऊँची उठती हुई ज्वालाएँ देखी थीं, ले जाने की बात तय हो चुकी थी। कलकत्ते की इस श्मशान भूमि के इतिहास में आज एक नये अध्याय की वृद्धि होने वाली थी। पर जोड़ा साँको से निमतला घाट तक अर्थी ले जाने की कोई संभावना अभी तक नज़र न आती थी।

चटर्जी ने कहा, “तीन हज़ार से ऊपर गीत लिखनेवाले कवि

की राख एक कोरे घड़े में डाल कर शान्तिनिकेतन पहुँचाई जायगी। इसे उसी स्थान पर दबा दिया जायगा, जहाँ यही रस्म उनके पिता की मृत्यु पर पूरी की गई थी।”

“हमारे गुरुदेव को संसार ने महापुरुष के रूप में पहचाना,” भट्टाचार्य ने शह दी, “और एक अंग्रेज़ राजनीतिज्ञ का मत मुझे शत प्रति शत सत्य प्रतीत होता है—‘मैं जिन लोगों से परिचित हूँ, उनमें मैंने टैगोर को सबसे बड़ा विश्व नागरिक, सबसे बड़ा दूरदृष्टा और सबसे अधिक पूर्ण व्यक्ति के रूप में देखा।’ चटर्जी महाशय, हमारे गुरुदेव की सर्वश्रेष्ठ रचना है शान्तिनिकेतन ! गुरुदेव का वह गान तो मेरी आत्मा में बस गया है—‘आमादेर शान्तिनिकेतन...।’”

“आमादेर शान्तिनिकेतन,” बनर्जी ने अपने चेचक के दागोंवाले गाल को दाँएँ हाथ की उँगलियों से सहलाते हुए कहा, “होनो लूलू के गायक भले ही तानसेन से भी बड़े कलाकार हों, और मैं मान लेता हूँ कि हमारे देश में आरकेस्ट्रा के वाक्स के साधन उपस्थित न थे। पर ‘आमा देर शान्तिनिकेतन’ गान की क्या बात ! कहाँ होनो लूलू, कहाँ शान्तिनिकेतन। यह हमारा सोनार बांगला, यह हमारी सोनार बंग भूमि, जिसकी कोय से गुरुदेव ने जन्म लिया। यह हमारा सोनार जोड़ा साँको, जिसे आज भी गुरुदेव के बचपन की कहानियाँ याद हैं। मैं कहता हूँ कि होनो लूलू में न कोई ऐसा कवि उत्पन्न हुआ होगा, न वहाँ किसी शान्तिनिकेतन की ही स्थापना हुई होगी। विश्व भारती—हमारा वह महान् अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय। विश्व भारती—कितना मधुर और प्रिय नाम है। खूब सोच कर गुरुदेव ने यह नाम रखा होगा और शान्तिनिकेतन तो गुरुदेव के पिता महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर के मस्तिष्क की उपज है। वे एक बहुत बड़े महर्षि थे, इसी स्थान पर वह तपस्या करते थे और आज

इसी स्थान पर चित्रकला के नये प्रयोग किये जाते हैं। नृत्य और संगीत का पुनरुत्थान हो रहा है और साहित्य का गहन अध्ययन किया जाता है—वृक्षों के नीचे खुली हवा में।”

“इसीलिये मैं कहता हूँ, ठीक इसीलिए,” गांगुली कह उठा, “अमेरिकन विद्वान् विल ड्यूरैन्ट के वे शब्द याद करो जो उसने गुरुदेव को सम्बोधित करते हुए कहे थे—‘तुम हो और हिन्दुस्तान के स्वाधीन होने का यही कारण है।’ बनर्जी बाबू मैं सच कहता हूँ, होनो लूल् के किमी कवि को कभी यह सम्मान प्राप्त न हुआ होगा। हमारे गुरुदेव ने कुछ कम काम तो नहीं किया। कविताएँ, कहानियाँ, उपन्यास, नाटक—उनसे हमें कितनी महान् थाती प्राप्त हुई है।”

“और तीन हजार से ऊपर गीतों को क्यों भूल रहे हो, गांगुली महाशय?”

चटर्जी ने अपने दृष्टिकोण पर जोर देते हुए कहा, “क्या इतना भी भूल गये कि जब सन् १९१३ में गुरुदेव को गीतांजलि पर नोबल पुरस्कार मिला तो यह एक प्रकार से उन गीतों की ही विजय थी?”

उस पर सब भक्तों और श्रद्धालुओं ने एक मत प्रकट किया कि गुरुदेव की सबसे बड़ी थाती उनके तीन हजार में ऊपर गीत हैं।

उधर सड़क पर हजूम की खींच-तान जोर पकड़ रही थी। लोग गेट को तोड़ देने पर उतारू हो रहे थे। पुलिस बेबस थी क्योंकि अभी तक ऊपर से किसी प्रकार की सख्ती का हुक्म नहीं मिला था। सिपाहियों की लाठियाँ उठ-उठ कर झुक जाती थीं।

“चक्रवर्ती बाबू, दर्शन हम अवश्य करेगा, शाला पुलीश कुछ भी कहे।”

की राख एक कोरे घड़े में डाल कर शान्तिनिकेतन पहुँचाई जायगी। इसे उसी स्थान पर दबा दिया जायगा, जहाँ यही रस्म उनके पिता की मृत्यु पर पूरी की गई थी।”

“हमारे गुरुदेव को संसार ने महापुरुष के रूप में पहचाना,” भट्टाचार्य ने शह दी, “और एक अंग्रेज़ राजनीतिज्ञ का मत मुझे शत प्रति शत सत्य प्रतीत होता है—‘मैं जिन लोगों से परिचित हूँ, उनमें मैंने टैगोर को सबसे बड़ा विश्व नागरिक, सबसे बड़ा दूरदृष्टा और सबसे अधिक पूर्ण व्यक्ति के रूप में देखा।’ चटर्जी महाशय, हमारे गुरुदेव की सर्वश्रेष्ठ रचना है शान्तिनिकेतन ! गुरुदेव का वह गान तो मेरी आत्मा में बस गया है—‘आमादेर शान्तिनिकेतन...।’”

“आमादेर शान्तिनिकेतन,” बनर्जी ने अपने चेचक के दागोंवाले गाल को दाँएँ हाथ की उँगलियों से सहलाते हुए कहा, “होनो लूलू के गायक भले ही तानसेन से भी बड़े कलाकार हों, और मैं मान लेता हूँ कि हमारे देश में आरकेस्ट्रा के वाक्स के साधन उपस्थित न थे। पर ‘आमा देर शान्तिनिकेतन’ गान की क्या बात ! कहाँ होनो लूलू, कहाँ शान्तिनिकेतन। यह हमारा सोनार बांगला, यह हमारी सोनार बंग भूमि, जिसकी कोख में गुरुदेव ने जन्म लिया। यह हमारा सोनार जोड़ा साँको, जिसे आज भी गुरुदेव के वचन की कहानियाँ याद हैं। मैं कहता हूँ कि होनो लूलू में न कोई ऐसा कवि उत्पन्न हुआ होगा, न वहाँ किसी शान्तिनिकेतन की ही स्थापना हुई होगी। विश्व भारती—हमारा वह महान् अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय। विश्व भारती—कितना मधुर और प्रिय नाम है। खूब सोच कर गुरुदेव ने यह नाम रखा होगा और शान्तिनिकेतन तो गुरुदेव के पिता महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर के मस्तिष्क की उपज है। वे एक बहुत बड़े महर्षि थे, इसी स्थान पर वह तपस्या करते थे और आज

इसी स्थान पर चित्रकला के नये प्रयोग किये जाते हैं। नृत्य और संगीत का पुनरुत्थान हो रहा है और साहित्य का गहन अध्ययन किया जाता है—वृक्षों के नीचे खुली हवा में।”

“इसीलिये मैं कहता हूँ, ठीक इसीलिए,” गांगुली कह उठा, “अमेरिकन विद्वान् विल ड्यूरैन्ट के वे शब्द याद करो जो उसने गुरुदेव को सम्बोधित करते हुए कहे थे—‘तुम हो और हिन्दुस्तान के स्वाधीन होने का यही कारण है।’ बनर्जी बाबू मैं सच कहता हूँ, होनो लूल् के किमी कवि को कभी यह सम्मान प्राप्त न हुआ होगा। हमारे गुरुदेव ने कुछ कम काम तो नहीं किया। कविताएँ, कहानियाँ, उपन्यास, नाटक—उनसे हमें कितनी महान् थाती प्राप्त हुई है।”

“और तीन हजार से ऊपर गीतों को क्यों भूल रहे हो, गांगुली महाशय?”

चटर्जी ने अपने दृष्टिकोण पर जोर देते हुए कहा, “क्या इतना भी भूल गये कि जब सन् १९१३ में गुरुदेव को गीतांजलि पर नोबल पुरस्कार मिला तो यह एक प्रकार से उन गीतों की ही विजय थी?”

उम पर सब भक्तों और श्रद्धालुओं ने एक मत प्रकट किया कि गुरुदेव की सबसे बड़ी थाती उनके तीन हजार से ऊपर गीत हैं।

उधर सड़क पर हजूम की खींच-तान जोर पकड़ रही थी। लोग गेट को तोड़ देने पर उतारू हो रहे थे। पुलिस बेबस थी क्योंकि अभी तक ऊपर से किसी प्रकार की सख्ती का हुक्म नहीं मिला था। सिपाहियों की लाठियाँ उठ-उठ कर भुक् जाती थीं।

“चक्रवर्ती बाबू, दर्शन हम अवश्य करेगा, शाला पुलीश कुछ भी कहे।”

“हाँ मजूमदार, ठाकुरदादा के दर्शन न किये तो समझ लो कि जन्म अकारथ चला गया।”

‘चक्रवर्ती बाबू, यह शाला पुलीश क्या जाने कि ठाकुर दादा कितना बड़ा महापुरुष था। पाँच लाख गीत लिखे ठाकुर दादा ने। अरे बाप रे बाप, ठाकुर दादा के गीत तो रिकार्डों में भर लिये गये। सोम बाबू सच कहता है कि अमेरिका में जब भी आज़ादी का दिन मनाया जाता है, ठाकुर दादा का कोई गीत गाये बिना उत्सव की कार्यवाही खत्म नहीं की जा सकती।”

“और अब तो रूस में भी ठाकुर दादा के गीत गाये जाते हैं।”

पीछे से एक जबर्दस्त नारा गूँज उठा—देशभक्त ठाकुर दादा की जय।

मजूमदार बोला—“यदि ठाकुर दादा दो वर्ष और जीवित रहते तो आज़ाद हिन्दुस्तान के पहले राष्ट्रपति वही बनते।”

“इसमें सन्देह ही क्या है?” चक्रवर्ती ने कहा, “ठाकुर दादा के गीत तो आज़ाद हिन्दुस्तान में घर-घर गाये जायँगे।”

मजूमदार ने चमक कर कहा—“गाये जायँगे? चक्रवर्ती, यह क्यों नहीं कहता कि गाये जाते हैं? मैंने तो मछेरों, माफियों, किसानों और गाड़ीवानों को ठाकुर दादा के गीत गाते सुना है।”

“भाई, ठाकुर दादा के गीत तो अमृत में विष घोल देते हैं।”

“अमृत में विष?”

“अरे-अरे क्षमा करना भाई, विष में अमृत।”

भवन में गुरुदेव के भक्त और श्रद्धालु उनके शव के चारों ओर बैठे थे। पंखे जोर-जोर से चल रहे थे। सड़क से आने वाले हजूम के शोर पर ये लोग दाँत पीस रहे थे। हजूम को बुरा-भला कहने के पश्चात् बंनर्जी ने बात का रुख पलटते हुए कहा, “गुरुदेव की पुस्तकें विश्व के प्रत्येक देश में पढ़ी जाती हैं और

बहुत सी पुस्तकें तो अभी तक अनुवाद की बाट जोह रही हैं। हमारे गुरुदेव गलाम हिन्दुस्तान में जन्म ले कर स्वतन्त्र राष्ट्रों के साहित्य पर छा गये, मेरे विचार में यह गुरुदेव की सबसे बड़ी विजय थी।”

भट्टाचार्य ने शह दी—“होना लूलू की कविता को गीतांजलि ने कहाँ तक प्रभावित किया, मैं तो यहां जानना चाहता हूँ। वैसे जहाँ तक अंग्रेजों का सम्बन्ध है, मुझे मालूम है कि बहुत से अंगरेज गीतांजलि के अंग्रेजी अनुवाद को अनुवाद कह कर केवल एक हरिजन की श्रेणी में रखने की बजाय इस शताब्दि के अपने सर्वोत्तम साहित्य का अंग स्वीकार कर चुके हैं।”

बनर्जी ने फिर कहा—“जलियाँवाला के हत्याकांड से गुरुदेव को बहुत दुःख हुआ था। इसका प्रतिवाद करते हुए उन्होंने ‘सर’ की पदवी सरकार को वापस कर दी। वे केवल एक कवि न थे; राजनीति से उन्हें सदा प्रेम रहा और वे सरकार से डरते न थे। एक अवसर पर अपने एक वक्तव्य में गुरुदेव ने कहा था—संसार का घटनाचक्र एक दिन अंग्रेजों को हिन्दुस्तान में अपना साम्राज्य छोड़ने पर मजबूर कर देगा, पर अपने पीछे वे कैसा हिन्दुस्तान छोड़ जायेंगे? किसी समय मेरा विश्वास था कि यूरोप के हृदय से सभ्यता और संस्कृति के जीवनप्रद स्रोत वह निकलेंगे, पर आज जब मैं निकट भविष्य में इस संसार से विदा लेने वाला हूँ, मेरे उस विश्वास का दिवाला पिट चुका है। यह बात और कौन कह सकता था।

गांगुली बोला—यह तो सारा संसार जानता है, बनर्जी बाबू, कि गुरुदेव बहुत बड़े देशभक्त थे और वृद्धावस्था में उनकी कविता जीवन के अधिक से अधिक समीप आती गई। उन्होंने असंख्य कविताओं की रचना की है। यह संसार से छिपी हुई बात थोड़े ही है।”

भट्टाचार्य की कल्पना जागृत हो गई जैसे बंधी के स्पर्श से एक-एक बाल जाग उठता है। वह बोला—“गुरुदेव की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि वे अपने ऊपर भी व्यंग कस सकते थे। असीम सत्य-प्रियता और विलगता का प्रमाण देते हुए अपने अन्तिम उपन्यास में उन्होंने बंगाली नवयुवक को उनके प्रभाव से मुक्त हो कर जीवन को स्वयं अपनी आँखों से देखने और समझने का यत्न करते हुए दिखाया है। वे एक पूरे युग के प्रतिनिधि थे और नई पीढ़ी को भी उनका आशीर्वाद प्राप्त था। यह और बात है कि नई पीढ़ी प्रगतिशील है और आशीर्वाद की परम्परा पर अधिक विश्वास नहीं रखता।”

चटर्जी और गांगुली को अपने वस्त्रों से पसीने की बू आ रही थी। पर इस समय वे उसे भूल जाना चाहते थे। भट्टाचार्य के अन्तिम वक्तव्य से वे सहमत न थे। पर वे चुप बैठे थे। वे उसे अभी और ढील दे सकते थे।

भट्टाचार्य चटर्जी और गांगुली की नीयत ताड़ गया, पलट कर बोला—“गुरुदेव पहले कवि थे फिर कुछ और, इस बात से मुझे इन्कार नहीं। उर्वशी उनकी सर्वोत्कृष्ट रचना है। संसार की कविता में इस तरह की कविता ढूँढने से भी न मिलेगी। उर्वशी न माँ है न कन्या, न वधू। वह एक सुन्दरी है। घूँघट में मुक्त। उसे किसी का दबदबा स्वीकार नहीं। उसका मुख उपा के समान खुला रहता है। उसके दाँएँ हाथ में अमृत हैं और बाएँ हाथ में विष। उसके केश सदा उसके कंधों पर बिखरे हुए नजर आते हैं। अन्त में कवि ने सौन्दर्य के इस प्रतीक को एक दुर्दान्त के रूप में प्रस्तुत किया है। कोई मुझ से पूछे तो मैं कहूँगा कि उर्वशी हमारी आज की नारी है। वह न कन्या है, न वधू, न माँ। वह नारी है—केवल नारी। मुझे विश्वास है कि होना लू में उर्वशी को बेहद पसन्द किया गया होगा। बल्कि

यदि मैं भूल नहीं करता तो गुरुदेव ने होनो लूलू से वापस आ कर कहा भी था—होनो लूलू तो उर्वशियों का स्वर्ग है। वहाँ की एक कवित्रिणी ने गुरुदेव को अपनी भाषा में इस कविता का पद्यानुवाद पढ़ कर सुनाया था और गुरुदेव को यह देख कर बहुत प्रसन्नता हुई थी कि होनो लूलू की स्त्रियों की उस सभा में इस कविता को सुनते-सुनते प्रत्येक युवती के मुख पर इस कविता का वास्तविक विचार अंकित होता दिखाई देता था। और गुरुदेव को स्वयं अपने देश में भी कभी ऐसा दृश्य देखने का सौभाग्य प्राप्त न हुआ था।”

चटर्जी और गांगुली खामोश बैठे थे। दूसरे भक्त स्त्रियों के कक्ष से आनेवाली सुगन्ध से मस्त हो उठे थे जिसे अर्थी के लिये पुष्प मालाएं गूँथनेवाली युवतियों की उँगलियों का स्पर्श प्राप्त हो चुका था।

सड़क पर हजूम तिगुना हो गया था। लोग हैरान थे कि आगिर उनकी माँग को ठुकराया क्यों जा रहा था? ठाकुर दादा के अन्तिम दर्शन को आये हुए लोग पुलिस के लाठी-चार्ज को खुशी-खुशी सह सकते थे। आज तो गोली भी चल जाय तो वे डट कर खड़े होंगे।

एक बूढ़ा ब्राह्मण, जिसके शरीर पर धोती और यज्ञोपवीत के अलावा कुछ नजर न आता था, बिगड़ कर बोला—“अच्छा होता कि पाँच-पाँच व्यक्तियों की टोली को भीतर ले जा कर ठाकुर दादा का अन्तिम दर्शन करा दिया जाता।” पर उसकी आवाज हजूम के शोर में गुम हो गई।

आधी वाँहों की कमीजवाला छोकरा इस ब्राह्मण को बड़े ध्यान से देख रहा था। अपने अंधेड़ आयु के साथी को सम्बोधित करते हुये वह बोला—“जब ठाकुर दादा लंका में गये तो लंका के राजा ने वह जहाज उनको भेंट करते हुए कहा—ठाकुर दादा,

आपको अब मेरे देश में आने के लिये पासपोर्ट की आवश्यकता न होगी।”

अधेड़ आयु के व्यक्ति ने छोकरे को घूर कर देखा और कहा—
“जब ठाकुर दादा अंग्रेज के देश में गया तो अंग्रेज सम्राट् ने ठाकुर दादा की अंग्रेजी सुन कर कहा—मेरे साथ आज हमारी आनेवाली सात पीढ़ियाँ भी हार गईं।”

बूढ़ा ब्राह्मण गंभीर हो कर बोला—“अमेरिका में एक सेठ ने ठाकुर दादा से एक कागज पर उन का नाम लिखवा कर पाँच हजार डालर भेंट किये और उसने बताया कि वह घर पहुँचते ही इस कागज को पानी में धोल कर अपनी मेम को पिला देगा जिससे उसकी कोख से दूसरे ठाकुर दादा जन्म ले सकें।”

दूसरी ओर से विचित्र आवाजें आ रही थीं। आधी बाहों की कमीजवाले छोकरे ने नाक सिकोड़ी, पर यह ऐसा अवसर न था कि कोई किसी की मुखालफत कर सके।

“जोड़ा साँको का ठाकुर दादा—ठीक है, ठीक है, ठाकुर दादा के सफ़ेद केश।”

“मुझे जोड़ा साँको के ठाकुर दादा का एक केश चाहिये।”

“मुझे पाँच केश चाहियें।”

“जोड़ा साँको के ठाकुर दादा की सफ़ेद दाढ़ी।”

“इस से सफल समुद्र यात्रा का लाभ होता है।”

“इसे छू कर मेरी राधा रानी के केश लम्बे और घने हो जायँगे।”

“इस से भगवान् का दर्शन लाभ होता है।”

बूढ़े ब्राह्मण के शरीर से पसीने की बूँदें टपक रही थीं। इन विचित्र आवाजों और वन्देमातरम् और ठाकुर दादा की जय के नारों की परवाह न करते हुये उसने एक बार फिर पुकार कर कहा—“पाँच-पाँच आदमियों को बारी-बारी से भीतर ले जा कर

ठाकुर दादा के अन्तिम दर्शन करा दिये जायँ नहीं तो अर्थी के लिये रास्ता नहीं मिल सकेगा।” पर इस बार फिर उसकी आवाज़ हजूम के शोर में खो गई।

समीप से किसी ने धीरे से कहा—“केवल दर्शन का क्या लाभ, जब तक जोड़ा साँको के ठाकुर दादा का एक भी श्वेत केश प्राप्त न हो ?”

सहसा पुलिस की सीटियाँ बज उठीं। लाठियाँ नागिनों की तरह लपकीं। हवा में लपकती हुई लाठियाँ हजूम पर तड़ातड़ बरस रही थीं। अर्थी के लिये रास्ता बनता नज़र नहीं आता था। पर मालूम होता था कि पुलिस को ऊपर से हुकुम मिल चुका है और अब वह किसी का लिहाज़ नहीं कर सकती।

परे किनारों से कुछ लोग भाग गये और फिर एक पूरी इन्सानी दीवार दरवाज़े से इधर को सरकने लगी। अब भी मालूम होता था कि हजारों हाथों और हजारों पैरों वाला ज़िन्न बराबर इसी जगह डट कर खड़ा रहेगा—बेपनाह, पागल हजूम !

तीसरे पहर के पूरे सवा तीन बजे दरवाज़ा खुला। इस बीच में लोगों की भीड़ को पुलिस दरवाज़े से परे धकेलने में कामयाब हो गई थी। गुरुदेव की अर्थी बाहर आती दिखाई दी। तीसरे पहर का सूर्य सड़क पर खड़े हुए ज़िद्दी हजूम को झुलस रहा था।

देखते-देखते हजूम बेकाबू हो गया। पुलिस की लाठियाँ असफल रहीं। अर्थी पर झपटनेवालों को यह परवाह न थी कि उनका क्या परिणाम होता है।

“हट जाओ, पीछे हट जाओ”

“रास्ता छोड़ दो।”

“देखो हम ठाकुर दादा का केश ले आया है।”

“शाला, दिखा इधर।”

“शालार शाला, शाला।”

“पीछे क्यों नहीं हटता, शालार शाला ।”

“अर्थी के लिये रास्ता छोड़ दो—भाग जाओ यहाँ से ।”

“अरे शाला, इकट्ठे चार केश ले कर किधर भाग रहा है ?”

“अरे रोको अर्थी को ।”

“क्यों सिर फुड़वाते हो ?”

“हट जाओ, हट जाओ, पीछे हट जाओ । जोड़ा साँको के ठाकुर दादा की अर्थी को आराम से निकल जाने दो ।”

देखते-देखते हजूम का कुछ हिस्सा जुलूस में बदल गया । पर मालूम होता था कि अभी रास्ता मिलने में देर है ।

गुरुदेव की अर्थी ऊपर को उठी । फिर जैसे अर्थी उठानेवाले लोगों को मालूम भी न हुआ कि कब अर्थी को उन से अगले लोगों ने संभाल लिया ।

हजूम कुछ-कुछ दोनों तरफ को हटने लगा । पर मालूम होता था कि अभी अर्थी के लिये रास्ता कठिन है । फिर बहुत शीघ्र लोगों के सिरों पर तैरती हुई अर्थी आगे सरकने लगी—जैसे तूफानी लहरों पर कोई कमल तैर रहा हो ।

